All Right Reserved.

श्री १०८ गोस्वामी तुलसीदास कृत

(सटीक)

गीतावली ।

सातोकाण्ड ।

परमहंस प्रशंसमान हंसवंशावतंस

श्री सीतारामीय महात्मा हरिहरप्रसाद कृत

प्रकाशिका टीका सहित

जिस को

स्वस्ति श्री विविध विरुदावली विराजमान मानोन्नत

श्री महाराजधिराज काशिराज द्विजराज

श्रीश्री श्री श्री श्री प्रभुनारायण सिंह

बहादुर के. सी. आइ. ई. के

आज्ञानुसार

ॐ म० कु० बाबू रामदीन सिंहात्मज

श्री बाबू रामरणविजय सिंह ने प्रकाशित किया ।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर ।

बाबू शिवनन्दन सहाय ने मुद्रित किया ।

१९०६.

श्रीः

गीतावली सटीक।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः।

मङ्गलाचरण—श्लोक।

बालं दिगम्बरं रामं कौशल्यानन्दवर्द्धनम्।
अतसीकुसुमश्यामं दध्योदनमुखं भजे॥ १॥

सोरठा।

जपत रहत सब जासु, जासु नाम ब्रह्मादिको।
हरिहर करत प्रनाम, तेहि सिय सियवर चरन कों॥

दोहा।

भरत लषन रिपुदवन पद, वंदि ध्याय हनुमान।
हरिहर टीका रचत है, देहु सुधारि सुजान॥

मूल।

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं सीतासमारोपितवामभागम्।
पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम्॥

श्याम कमल सम श्यामल कोमल अंग औ सीता जू वाम भली भांति तें स्थित औ हाथ में अमोघ बाण औ सुंदर सारंग जिन के तिन रघुवंशनाथ श्रीराम कों नमस्कार करत हौं। श्री चारि लीला प्रधान हैं बाल, विवाह, वन और राजलीला। य श्लोक के एक एक पद से जनाए। नीलाम्बुजश्यामल कोम बाल, औ सीतासमारोपितवामभागं तें विवाह, औ पाणौमहाशा चापं तें वन, औ नमामिरामंरघुवंशनाथं तें राज्यलीला।

राग बसावरी—आजु सुदिन सुभघरी सुहाई श्रीलगुन धाम राम नृप भवन प्रगट भए आई ॥ १ । पुनीत मधुमास लगन ग्रह वार जोग समुदाई। च चर अचर भूमिसुर तनुरुह पुलकि जनाई ॥ २ ॥ व विबुधनिकर कुसुमावलि नभ दुंदुभी बजाई। कौस मातु सब हरषित यह सुष बरनि न जाई ॥३॥ सुनि सुत जन्म लिए सब गुरजन विप्र बुलाई। बेद विहित क्रिया परम सुचि आनंद उर न समाई ॥ ४ ॥ बेदधुनि करत मधुर सुनि बहुविधि बाजु बधाई। पुरब प्रियनाथ हेतु निज निजसंपदा लुटाई ॥ ५ ॥ मनि बहु केतु पताकनि पुरी रुचिरकरि छाई। मागध सु वंदीजन जहँ तहँ करत बडाई ॥ ६ ॥ सहज सिंगार वनिता चलि मंगल विपुल बनाई। गावहिं देहिं च मुदित चिरजियो तनय सुषदाई ॥ ७ ॥ बीथिन्ह कुमकुम अरगजा अगरु अबीर उडाई। नाचहिं पुर नर नारि प्रे देहदसा बिसराई ॥ ८ ॥ अमित धेनु गज तुरग वसन जातरूप अधिकाई। देत भूप अनुरूप जाहि जोइ सक

रूह पाई ॥ ८ ॥ मुनी भए सुर संत भूमिसुर गगनमग
मलिनाई। मवहि सुमन विकसत रवि निकसत कुमुदविपि
दिलपाई ॥ १० ॥ जो मृपसिंधु मकृत सीकर तें सिव विरं
प्रभुताई। मोह मृप उमगि अवध रखो दमदिमि कवन सतु
कहीं गाई ॥ ११ ॥ जे रघुवीरचरन चिनक तिन्ह को गति
प्रगट देपाई। अविरल अमल अनूप भगति दृढ तुलसिदास
सब पाई ॥ १२ ॥ १ ॥

सखी मनि सखी कहति हैं आजु सुंदर दिन औ सुंदर मुभ घरी
में रूप शील औ गुन के धाम श्री राम महाराज दसरथ के गृह में आ
के प्रगट भए। भवन प्रगट भए आदि कहिवे को यह भाव कि अपन
इच्छा करि परधाम ते आइके प्रगटे, गर्भ तें नाहीं ॥ १ ॥ अति पवि
चैत्रमास कर्क लग्न पांच ग्रह उच्च, मेष के सूर्य, मकर के मंगल, तुल
के शनैश्चर, कर्क के वृहस्पति, मीन के शुक्र औ श्रीरामजन्म दिन 'मेरुतंत्र
औ 'रामसुधा' में सोमवार औ 'सूरसागर' में बुधवार औ गोसाईं ज
मंगलवार एहि ग्रंथ में लिखे सो कल्पांतर करि व्यवस्था करना औ यो
समुदाय शुकर्म्मादि हैं । चर जंगम अचर स्थावर औ भूमिसुर ब्राह्मण
हर्षवन्त हैं सो कैसे जानि परयो तेहि हेतु लिखत हैं कि तनुरुह कं
रोम सों पुलक करि जनाय दिए। शंका। अचर की पुलकावली कैसे
जानि परी। उत्तर। अचर पर्वत वृक्षादि तिन के रोम रूप तृण पत्रादि
हैं ते लहलहाय उठे सोई पुलकना है। चर अचर से भूमिसुर को पृथक
लिखिवे को यह भाव कि श्रीरघुनाथ को ब्रह्मण्य जानि ब्राह्मणन कें
सब तें अधिक आनंद भयो अतएव भागवत में लिखा। "ब्रह्मण्यः सत्य
सन्धश्च रामो दाशरथि र्यथा।" मधुमास को अति पुनीत कहिवे को य
भाव कि वर्ष का आदि मास है अतएव श्रीदशरथ महाराज अश्वमेध
याग चैत्रही में आरम्भ किए। वाल्मीकीय रामायण में लिखा ॥ २
देवतन के समूह आकाश में नगारा बजाइ पुष्पसमूह बरषत हैं। नगारा
बजाइवे को यह भाव कि रावण के भय तें छिपे छिपे फिरत रहे

आजु नगारा बजाइ प्रगटे औ श्रीकौशल्या जू आदि सब माता हर्षित हैं यह सुख बरनि नहीं जात है जाते चौथे पन में पुत्र पाए याते मातन को सुख अकथनीय ठहराये ॥ ३ ॥ दशरथ महाराज पुत्रजन्म सुनि सब कुलवृद्ध औ ब्राह्मणों को बोलाय लिए। वेदविहित नांदीमुख श्राद्धादि परम शुचि क्रिया करि जो आनंद भयो सो उर में नहीं समात है। गुरुजन बिप्र दोऊ बिप्र बोलाइबे को यह भाव कि लौकिक क्रिया गुरुजन औ वैदिक क्रिया ब्राह्मण सम्हारैं ॥ ४ ॥ मधुर स्वर तें मुनि गृह में वेदधुनि करत औ बहु प्रकार ते बधाई बाजति है । पुरवासीप्रिय जो नाथ हैं तिन के हेतु अपनी अपनी संपदा लुटाई। प्रियनाथ कहिबे को यह भाव कि महाराज के पुत्र होए बिना जो अनाथ रहे सो सनाथ भए ॥ ५ ॥ तोरन बंदनवार केतु ध्वजा पताका फरहरा वा केतु सचिन्ह जैसे विष्णु की ध्वजा में गरुड़चिन्ह औ शिव की ध्वजा में वृषचिन्ह औ पताका चिन्हरहित, मागध कत्थक, सूत पौराणिक, बंदी भाट ॥ "सूताः पौराणिकाः प्रोक्ता मागधा वंशशंसकाः। बंदिनस्त्वमलप्रज्ञाःप्रस्तावसदृशोक्तयः" ॥ ६ ॥ सहज शृंगार जेहि भांति तें किए रहीं तैसहीं उठि धाईं । मंगल बिपुल हरदी दूर्वादि। सहज शृंगार को यह भाव कि मंगल बनाइबे के आनंद में शृंगार सजना भूलिगई ॥ ७ ॥ गलिन में केसर औ अरगजा को कीच है औ अगर का धुआं औ अबीर उड़त है औ देहदसा बिसराइ प्रेम में भरि पुर के नर नारि नाचत हैं ॥ ८ ॥ गज हाथी, तुरंग घोड़ा, जातरूप सोना, सिद्धि अणिमादिक ॥ ९ ॥ देवता संत औ ब्राह्मण सुखी भए औ खलगण के मन में मलिनाई आई अर्थात् दुखी भए जैसे सूर्य के निकसत सब फूल फूलत है पर कोई को बन बिलखात अर्थात् संपुटित होत है। भाव सपेदी भीतर जात स्याही ऊपर आयजात है ॥ १० ॥ जो सुख रूप समुद्र की एक बूंद ते शिव ब्रह्मा की प्रभुताई है सो सुख अयोध्या जी के दशो दिशा में उमगि रह्यो वा अयोध्याजी तें उमगि के दशो दिशा में जाय रह्यो ताको कवन जतन तें गाइ कहौं, भाव बूंद को जो भली भांति न जानै सो समुद्र को कैसे बखानै ॥ ११ जे रघुनाथ के चरन के चिन्तक हैं तिन की गति प्रगट देखि परति है

अर्थात् ज्ञानिन को कहीं प्रगट न भए औ भक्तन के पुत्र है प्रगट भए भाव जो स्ववश रह्यो सो परवश भयो, अंतरालरहित निर्मल औ उपमारहित दृढ़ भक्ति तब तुलसीदास ने पाई। भाव केवल भक्ति करि रघुनाथ के प्रगटे तें कर्मज्ञान को भरोसा छोड़ि केवल भक्ति ही दृढ़ करि लियो ॥ १२ ॥ १ ॥

राग जयतश्री—सहेली सुनु सोहिलोरे सोहिलो सोहिलो सोहिलो सोहिलो सब जग आजु। पूत सपूत कौसिला जायो अचल भयो कुलराजु ॥ १ ॥ चैत चारु नौमी सिता मध्य गगन गत भानु। नषत जोग ग्रह लगन भले दिन मंगल मोदनिधानु ॥२॥ व्योम पवन पावक जल थल दिसि दसहु सुमंगलमूल। सुर दुंदुभी बजावहिं गावहिं हरषहिं बरषहिं फूल ॥३॥ भूपतिसदन सोहिलो सुनि बाजे गहगहे निसान। जहं तहं सजहिं कलस ध्वज चामर तोरन केतु बितान ॥ ४ ॥ सींचि सुगंध रचे चौके गृह आंगन गली बजार। दल फल फूल दूब दधि रोचन घरघर मंगलचार ॥ ५ ॥ सुनि सानंद उठे दसस्यंदन सकल समाज समेत। लिये बोलि गुर संचिव भूमिसुर प्रमुदित चले निकेत ॥ ६ ॥ जातकर्म करि पूजि पितर सुर दिये महिदेवन दान। तेहि अवसर सुत तीन प्रगट भए मंगल मुद कल्यान ॥ ७ ॥ आनंद महं आनंद अवध आनंदबधावन होइ। उपमा कहे चारिफल की मोकों भलो न कहै कवि कोइ ॥ ८ ॥ सजि आरती विचित्र थार कर जूथ जूथ वरनारि। गावतचलीं बधावन लैलै निजनिजकुलव्यनुहारि ॥९॥ असही दुसही मरहु मनहिमन वैरिन बढ़हु विषाद। नृपसुत चारि भरहु चिरजीवहु संकरगौरिप्रसाद ॥ १० ॥ लैलै टोय प्रजा

प्रमुदित चलि भांतिभांति भरिभार। करहिं गान करि भान राय की नाचहिं राजदुआर॥ ११॥ गज रथ वाजि वाहिनी वाहन सबनि सँवारे साज। जनु रतिपति रितुपति कोसलपुर विहरत सहितसमाज॥ १२॥ घंटा घंटि पखावज आउज झांझ बेनु डफ तार। नूपुरधुनि मंजीर मनोहर करकंकन झनकार॥१३॥ नृत्य करहिं नटनटी नारिनर अपने अपने रंग। मनहुं मदन रति विविध बेषधरि नटत मुदेस मुधंग॥१४॥ उघटहिं छंदप्रबन्ध गीतपद रागतानबंधान। सुनि किन्नर गन्धर्व मराहत विबुधके हैं विबुधविमान॥ १५॥ कुंकुम अगर अरगजा छिरकहिं भरहिं गुलाल अबीर। नभ प्रसून झरि पुरी कोलाहल भइ मनभावति भीर॥१६॥ बडो बयस विधि भयो दाहिनो गुरसुर आसिर्वाद। दसरथसुकृतसुधासागर सब उमगे हैं तजि मरजाद॥ १७॥ ब्राह्मन बेद बंदि बिरुदावलि जयधुनि मंगलगान। निकसत पैठत लोग परस्पर बोलत लगि लगि कान॥ १८॥ वारहिं मुकुता रतन राजमहिषो पुर सुसुषि समान। बगरे नगर नेवछावरिमनिगन जनु जुवारि अवधान॥ १९॥ कीन्हि बेदबिधि लोकरीति नृप मंदिर परमहुलास। कौसल्या कैकई सुमित्रा रहसबिबसु रनिवास॥ २०॥ रानिन दिए बसन मनि भूषन राजा सहनभंडार। मागध सूत भाट नट जाचक जहँ तहँ करहिं कवार॥ २१॥ विप्रबधू सनमानि सुआसिनि जनपुरजन पहिराइ। सनमाने अवनीस असीसत ईस रमेस मनाइ॥ २२॥ अष्टसिद्धि नव-निधि भूति सब भूपतिभवन कमाहिं। समउ समाज राजदंग-रथ को लोकन सकल सिहाहिं॥ २३॥ को कहि सकै अवध-

वासिन को प्रेम प्रमोद उछाहु । सारद सेस गनेस गिरीसहिं अगम निगम अवगाहु ॥२४॥ सिव विरंचि मुनि सिद्ध प्रसंसत बडेभूप के भाग । तुलसिदास प्रभु सोहिलो गावत उमगि २ अनुराग ॥ २५ ॥ २ ॥

सहेली प्रति सहेली की उक्ति है। सहेली सखी वा सहेली सहैवाली जेहि को यह उत्सव सोहात अर्थात् असही दुसही नाहीं । सोहिलो कहैं उत्सव सब जगत में सोहिला है याते बहुबार लिखे वा पांच बेर लिखवे तें पांचो देवतन को उत्सव युक्त जनाए वा पंचभूत सब हर्षित भए जे पहिले रावणादि करि दुखी रहे ताते पांचबार वा पहिले सोहिलो रे जो लिखे सो सुनिवे में है फेरि चारि बार लिखे जातें चारि भाइन का जन्मोत्सव है वा आनंद तें बहुबार लिखे । सपूत कहिवे को यह भाव कि जन्मतै तीन भैयन को और बोलाए वा दिन ग्रहादि भले तें जाने कि सपूती करैंगे । अचल भयो कुलराज कहिवे को यह भाव कि पुत्र भए बिना जो चल होत रह्यो सो अचलभयो ॥१॥ शुक्ल पक्ष मध्यान्ह काल औ बार मंगल आनंद को निधान है ॥२॥ आकास वायु अग्नि जल औ थल करि पृथ्वी लेना औ दशोदिशा में सुमंगल का मूल है आकाशादि पांचो लिखवे ते पांचो भूतन को हर्ष जनाए ॥३॥ निसान नगारा चामर कहैं चमर वितान सामिआना ॥ ४ ॥ सुगंध अतर गुलाबादि दल तुलसी विल्वपत्रादि फल सुपारी नारिअर आदि रोचन गोरोचन वा रोरी ॥ ५ ॥ दशस्यंदन दशरथ महाराज निकेत महल ॥ ६ ॥ जातकर्म नांदीमुखश्राद्ध जेहि में दही अक्षत से श्राद्ध औ दुर्वादि जल से तर्पण होत है ताकों करि पितर सुर पूजि ब्राह्मणन को दान दिए । शंका । सूतक में पूजा औ दान कैसे किए । उत्तर । जब लौ नार नहीं छीना जाय तबलों सूतक नाहीं लगत है । तेहि अवसर में तीन पुत्र और प्रगट भए मंगल मुद कल्याण अर्थात् मंगल रूप भरत जी मुदरूप लक्ष्मण जी औ कल्यान रूप शत्रुघ्न जी हैं ॥ ७ ॥ श्रीरघुनाथ के जन्म के आनंद महं तीनों भैयन के जन्म भयो ताने आनंद महं आनंद लिखे । अजोध्या जी में आनंद युक्त बधावा होत है

चारो फल सम चारो भैयन को कहे ते हम को कोऊ कवि भला न कहैगो अर्थात् जाको जन मोक्षादि दाता है जात तेहि को मोक्षादि की उपमा कैसे संभवै ॥ ८ ॥ विचित्र थार अद्भुत थार वरनारि अहिवाती कुलअनुहारि कुल के योग्य, भाव ब्राह्मणी सतोगुणी ठाठ मे औ क्षत्रिया रजोगुनी ठाठ से इत्यादि ॥ ९ ॥ असही कहे जो और की बढ़ती न सहि सकै दुसही कहैं दुख करि परबढ़ती सहै वा दुसही दुष्ट ए सब मन ही मन अर्थात् कुढ़ि के मरहु औ वैरिन को विषाद बढ़ौ ॥ १० ॥ ढोवं कहैं भेंट की सामग्री अर्थात् अपने अपने जाति के अनुरूप जैसे अहीर दही, बरई पान इत्यादि आन कहैं दोहाई ॥ ११ ॥ वाहिनी जो सेना ताको वाहन जो नायक तिन ने हाथी रथ घोड़ा सबनि के साज संवारे "वाहयतीति वाहनः" इस व्युत्पत्ति ते नायक को वाचक भयो मानो सेनापति नहीं है काम है, सेना नहीं है वसन्तऋतु है सो अंयोध्या जी में समाज सहित विहरत है इहां समाज भूषण वसनादि हैं वा गजरथ औ तुरंगरथ औ वाहिनी वाहन अर्थात् घोड़ी घोड़ा हथनी हाथी आदि सबनि के साज संवारे अपर पूर्ववत ॥१२॥ घंटा हाथी आदि के घंटी हाथिन के झेला की औ साढ़नी पायक आदि की आउज कहैं तासा अरबी में तासा को आउज कहत हैं, तार करताल मंजीर पावजेब ॥ १३ ॥ अपने अपने रंग कहैं चाल तें अर्थात् संगीत नाचनेवाले संगीत की चाल तें औ तांडव नाचनेवाले तांडव की चाल तें इत्यादि । नट नटी नारि नर वृत्य करत हैं मानौ काम रति बहुत वेष धरि सुदेश कहैं सुंदर औ सुधंग कहैं सूधे अंग तें नाचत हैं अर्थात् हाथ मुंह टेढा नाहीं होए पावत है वा सुधंग शुद्ध अंग वृत्य के ॥१४॥ छंद औ प्रबन्ध औ गीत के पद राग तान बंधान पूर्वक उघटहिं अर्थात् गावहिं जैसे ध्रुपद तिलाना है तैसे छंद प्रबन्ध गीत भी है संगीत ग्रंथन में स्पष्ट बंधान कहैं लय अर्थात् गीत समाप्त पर्यन्त तान ताल बराबर चला जाय वार बराबर भी भेद न पड़ै सुनि के गंधर्व किन्नर सराहत हैं कि अस हम नहीं गाय सकते औ देवतन के विमान विशेष थकि गए अर्थात् अचल है गए भाव जो स्वर्ग में नहीं सुने रहे सो सुने तातें मोहि रहे ॥१५॥ तीखुर आदि से अति मेही औ अति लाल जो बनत

ताको गुलाल कहत हैं औ तेहि से कम लाल औ मोटा जो जोन्हरी आदि के पिसान से बनत है ताको अबीर कहत हैं। कोलाहल अधिक शब्द। मनभावती भीर जो भीर बहुत दिन से चाहत रहे सो भई ॥ १६ ॥ बड़ी बयस साठि हजार बरिस की अवस्था में गुरु औ देवता के आशीर्वाद ते विधाता दाहिनो भयो "षष्टि वर्षसहस्राणि जातस्य मम कौशिक" इति श्रीमद्रामायणे। महाराज दशरथ के सुकृत रूप जे अमृत के सब समुद्र हैं अर्थात् चारो समुद्र, ते मर्याद कहँ किनारा छोड़ि उमगै भाव जैसे समुद्र जो किनारा छोड़ि उमगै तो सब जग डूबि जाय सो एक को को कहै सब सुकृत समुद्र उमगे एहि तें यह व्यंजित किए कि सब ब्रह्माण्ड आनंद में डूबि गयो ॥ १७ ॥ बिरदावली यश। लगि लगि कान कहिबे को यह भाव कि वेदादि धुनि तें जो महाशब्द भयो तातें सुनात नाहीं कान में लगि जब जोर सें बोलत हैं तब सुनात है ॥१८॥ मोती जवाहिर आदि श्री महाराज की पटरानी औ पुर की स्त्रीगन समान नेवछावर करहिं। एहि तें यह जनाए कि पुरवासिनिनि को भी आनंद महारानिन के तुल्यै भयो नेवछावर करत में जो गिरे मनिसमूह ते बगरे कहँ छितिराने नगर में ज्वार जोन्हरी औ जव धान के समान ॥ १९ ॥ मंदिर में परम हुलास पूर्वक वेद लोक रीति महाराज कीन्हे अर्थात् वेदरीति जातसंस्कार अभ्युदयिक श्राद्धादि पूतना रक्षणादि, लोकरीति नार गाड़व औ राई नोन वारव औ चौकी हेतु आगि आदि राखब, सब रनिवास कौशल्या कैकेई सुमित्रा आदि रहसविवश कहिए हर्ष के विशेष बस भई ॥ २० ॥ सहन कहँ संपूर्ण कवार कहँ यश ॥ २१ ॥ छुआसिनि कहँ सावित्री कन्यावर्ग, जन दासादि, पुरजन पुरवासी, अवनीश दशरथ महाराज ईश शिव रमेश विष्णु ॥ २२ ॥ आठो सिद्धि औ नवो निधि सब ऐश्वर्य युक्त महाराज के भवन में कमाहिं कहँ परिचर्या करत हैं। लोकप इन्द्रादि। "अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा। प्राप्तिःप्राकाम्यमीशित्वं वशित्वं-श्चाष्टसिद्धयः॥ पद्मो स्त्रियां महापद्म शङ्खोमकरकच्छपौ। मुकुन्दकुन्दनीलाश्च खर्वश्च निधयोनव॥ इति शब्दार्णवे"२३ गिरीश शिव अगम शास्त्र निगम वेद इन्ह को अथाह है व शिवादि को अगम वेद को अथाह है २४।२५।२

राग बिलावल—आजु महामंगल कोसलपुर सुनि नृप के सुत चारि भये। सदन सदन सोहिलो सुहावन नभ अरु नगर निसान हुये ॥ १ ॥ सजिसजि जान अमर किन्नर मुनि जानि समयसम गानठये। नाचहिं नभ अपछरा मुदित मन पुनिपुनि बरषहिं सुमनचये ॥ २ ॥ अति सुख बेगि बोलि गुर भूसुर भूपति भीतर भवन गये। जातकर्म करि कनक बसन मनि भूषित सुरभिसमूह दये ॥ ३ ॥ दल रोचन फल फूल दूब दधि जुबतिन्ह भरिभरि थार लये। गावत चलीं भीर भइ बीथिन्ह बंदिन बांकुरि बिरद बये ॥ ४ ॥ कनककलस चामर पताक ध्वज जहंतहं बंदनवार नये। भरहिं अबीर अरगजा छिरकहिं सकललोक एकरंग रये ॥५॥ उमगि चल्यो आनंद लोक तिहुं देत सबनि मंदिर रितये। तुलसिदास पुनि भरेउ देखियत रामकृपाचितवनि चितये ॥ ६ ॥ ३ ॥

हुये कहैं बजे ॥ १ ॥ समैसम गान ठये अर्थात् सोहरादि गान ठाने, चये समूह ॥ २ ॥ सुरभी धेनु ॥ ३ ॥ बांकुरिबिरद उत्कृष्ट यश, बये कहैं बदे ॥४॥ रए रंगे ॥५॥ रितये खाली किये ॥६॥ टिप्पणी—जान बिमान। अमर देवता। सुमनचये सुमन के समूह। भूसुर ब्राह्मण। जातकर्म नंदीमुख श्राद्ध। दल तुलसी। रोचन हलदी। फल सुपारी नारियल। जुबतिन्ह युवा स्त्रीगण। बीथिन्ह गलियों में। बये कहे वा किये। कनककलस सोने का कलस। तीनों लोक में आनंद उमड़ चला। सभी अपना २ घर खाली करके दान देने लगे। तुलसी दास जी कहते हैं कि श्री रामचन्द्र की कृपा दृष्टि से फिर भरे के भरे देख पड़ते हैं।

राग जयतश्री—गावैं बिमल बिबुध बरबानी। भुवन कोटि कल्यान कंदु जायो पुर कोसिखारानी ॥ १ ॥ मास पाय

तिथि वार नषत्र योग लगन सुभ ठानी। जल थल गगन प्रसन्न साधु मन दसहिसि हिय हुलसानी ॥ २ ॥ बरषत सुमन बधाव नगर नभ हरष न जात बषानी। ज्यों हुलास रनिवासनरेसहिं त्यों जनपद रजधानी ॥ ३ ॥ अमर नाग मुनि मनुज सपरिजन बिगतबिषाद गलानी। मिलिहि मांझ रावन रजनीचर लंकसंक अकुलानी ॥ ४ ॥ देवपितर गुरुविप्र पूजि नृप दियेदान रुचि जानी। मुनि बनिता पुर-नारि सुआसिनि सहसभांति सनमानी ॥ ५ ॥ पाइ अघाइ असीसत निकसत जाचकजन भए दानी। यों प्रसन्न केकई सुमित्रहिं दीहुमहेस भवानी ॥ ६ ॥ दिन दूसरे भूप भामिनि दोउ भई सुमंगलषानी। भयो सोहिलो सोहिलो मो जनु सृष्टि सोहिले सानी ॥ ७ ॥ नाचत गावत मो मनभावत सुष सुअवध अधिकानी। देत लेत पहिरत पहिरावत प्रजा प्रमोद अघानी ॥ ८ ॥ गान निसान कोलाहल कौतुक देषत दुनी सिहानी। हरि विरंचि हरपुर सोभाकुलि कोसलपुरी लुभानी॥ आनंद अवनिराजरवनी सब मागहु कोपि जुडानी। आसिष दैदे सराहहिं सादर उमा रमा ब्रह्मानी ॥ १० ॥ बिभवबिलास बाढि दसरथकी देषि न जिनहिं सोहानी। कीरति कुसल भूति जय रिधि सिधि तिन्ह पर सबै कोहानी ॥ ११ ॥ छठी बारही लोकवेदबिधि करि सुविधानविधानी। राम लषन रिपुदमन भरत धरे नाम ललित गुरज्ञानी ॥ १२ ॥ सुकृत सुमन तिल मोद बासि बिधि जतन ऊंच भरि घानी। सुषसनेह सब दियो दसरथहिं परि पलेल थिर थानी ॥ १३ ॥ अनुदिन उदय उछाह उमग जग घरघर अवधकहानी। तुलसी

रामजन्मजस गावत सो समाज उर पानी ॥ १४ ॥ ४ ॥

विबुध देवता कल्यान कंद कल्यान के मूल वा मेघ जायो उत्पन्न कियो ॥ १ ॥ सुभ ठानी शुभस्थानी। जल थल आकाश औ साधुन के मन प्रसन्न होत भयो औ दशो दिशा को हृदय हुलसत भयो। शंका। जलादि प्रसन्न कैसे भए। उत्तर। जल निर्मल भयो पृथ्वी कृषी संपन्न भई, गगन मेघादिरहित भयो, सोई प्रसन्न होना है ॥ २ ॥ जनपद देश राजधानी अयोध्या ॥ ३ ॥ देवता नाग मुनि मनुज परिवार सहित, विषाद गलानि रहित भए औ रावण राक्षसों के मिलेहिं माझा अर्थात् फुट बिना लंका शंका तें अकुलात भई 'मिलेहिं माझविधि बात बिगारी' जैसे यह चौपाई में मिलेहिं माझ का अर्थ है तैसे इहां जानना। वा जब देवता आदि विषाद गलान रहित भए सो विषाद गलानादि रावन रजनीचर के माझ मिलेहिं ते अर्थात् डेरा किए ते लंका शंका तें अकुलात भई ४।५।६ दूसरे दिन महाराज की दोऊ भामिनी कैकेयी जू सुमित्रा जू सुमंगल की खानि भई अर्थात् श्री राम जी के दूसरे दिन दशमी को पुष्य नक्षत्र मीन लग्न में श्री भरत जी को प्रादुर्भाव भयो। भरत जी के दूसरे दिन एकादशी को श्लेषा नक्षत्र कर्क लग्न में लक्ष्मण जी शत्रुघ्न जी को प्रादुर्भाव भयो। उत्सव में उत्सव भयो मानो सृष्टि उत्सव में सानी है श्री मद्रामायणे "पुष्येजातस्तुभरतो मीनलग्ने प्रसन्नधीः सार्पे जातौ तु सौमित्री कुलीर भ्युदिते रवौ। पाद्मेऽन्येद्युःपाञ्चजन्यात्मा कैकेय्यां भरतोऽभवत्। तदन्येद्युःसुमित्राया मनन्तात्मा च लक्ष्मणः। सुदर्शनात्मा शत्रुघ्नो द्वौ जातौ युगपत्सिये ॥" अतएव श्री गोसाईंजी छठी तीन दिन में स्पष्ट लिखे त्यौं आजु कालि हूं परौं जागर होहिंगे नेवते दिए। शंका। पहिले तेहि अवर सुत तीन प्रगटभए मंगल मुद कल्यान एहि पद में एकै दिन सब भाइन का जन्म जनाए औ इहां तीन दिन में कहे सो कैसे। उत्तर। कल्पांतर करि याको व्यवस्था जानना ॥ ७ ॥ प्रमोद आनंद ॥ ८ ॥ दुनी संसार, कुलि सब ॥ ९ ॥ पृथ्वीपति की रानी आनंदित भई माग कोख ते जुड़ात भई। भाव माग तो पति ते जुड़ानै रह्यो पर पुत्र भए ते कोखिउ करि जुड़ानी वा आनंद की भूमि जे सब महाराज की रानी ते भाग औ कोखि ते जुड़ात भई। रमा उमा ब्रह्मानी

सरारिहे को यह भाव कि विश्व के पिता को पुत्र बनाए तातें धन्य ॥ १० ॥ विभव का विस्तार औ वंश की वृद्धि दशरथ महाराज ी देखि कै तिन को न सोहानी तिन्ह पर यश मंगल ऐश्वर्य जय रिद्धि ौ अणिमादिक सिद्धि सर्व कोहानी भाव ए सब ताको त्याग किए॥११ रु ज्ञानी विधानी जो श्री वशिष्ट जू सो छट्ठी औ बरही की लोक वेद धि को सुंदर विधान नें करि राम लषन रिपुदवन भरत सुंदर नाम रे। इहां छन्दोनुरोध ते क्रमपूर्वक नाम न लिखे ॥१२॥ पहिले तिल ूल में वासा जात है फेर पेरा जात है तब फुलेल होत है ताको रूपक रत हैं ब्रह्मा ने सुकृत रूप सुगंध दार फूल में आनंद रूप तिल को ासि कै यत्न रूप कोल्हू में घानी भरि पेरिकै सुख रूपी फुलेल दशरथ महाराज कों दिए औ खरी औ खलेल कहँ फोकट जो सो थिरयानी कहँ देवता तिन को दिए ॥१३॥ प्रति दिन उछाह को उदै औ उमंग है औ जगत में घर घर अयोध्या जी की कहानी ह रही है सो समाज उर में आनि कै तुलसी रामजन्मयश गावत है। भाव जाते हमारे हृदय में भी उछाह को उमंग उदय होय ॥ १४ ॥ ४ ॥

टिप्पणी—महाराज ने देव पितर गुरु और ब्राह्मणों को पूजि के रुचि जान अर्थात् रुचि अनुकूल दान दिये। मुनिपतनियों को और पुर की नारियों और सुआसिनियों का अनेक प्रकार से सम्मान किया याचकों को इतना दान दिया कि वे लोग आशीर्वाद देते हुए दानी होकर राजद्वार से निकलते हैं अर्थात् इतना अधिक दान मिला और ऐसा आनन्द कि वे लोग भी दानी हो गये। आशीर्वाद में कहते हैं कि हे महेश भवानी ! ऐसेही केकई और सुमित्रा पर प्रसन्न होहु।

रागकेदारा—अवध बधावने घर घर मंगल साज समाज। सगुन सोहावने मुदित करत सब निज निज काज ॥ छंद ॥ निजकाज सजत संवारि पुर नर नारि रचना अनगनी। गृह अजिर अटनि बजार बीथिन्ह चारुचौके बिधिघनी ॥ चामर पताक बितान तोरन कलस दीपावलि बनी। सुष सुकृत सोभामयपुरी बिधि सुमति जननी जनु जनी॥ दो०—चैत

चतुरदंग चांदनी, अमल उदित निसिराजु । उडगन बरषै लसी दस दिसि, उमगत आनन्द आजु ॥ छन्द । आनन्द उमगत आजु बिबुध बिमान बिपुल बनायकै । गावत बजावत नटत हरषत सुमन बरषत आइकै ॥ १ ॥ नर निरखि नर सुर पेखि पुर छवि परस्पर सचुपाइकै । रघुराज साज सराहि लोयनलाहु लेत अघाइकै ॥ २ ॥ दो०—जागिय राम छठी सजनोरी, रजनी रुचिर निहारि । मंगल मोद मठी मूरति जहं नृपबालक चारि ॥ छंद—मूरति मनोहर चारि बिरचि बिरंचि परमारथमई । अनुरूप भूपहि जानि पूजन योग बिधि संकर दई । तिन की छठी मंजुल मठी जगसरस जिन्ह की सरसई । किए नींद भामिनि जागरन अभिरामिनी जामिनि भई ॥ ३ ॥ दो० — सेवक सजग भये समय, सुसाधनसचि सुजान । मुनिवर गुरु सिपये लौकिक, वैदिक बिधि बिधान ॥ छंद । वैदिकबिधान अनेक लौकिक आचरत सुचि जानिकै । बलिदान पूजा मूलिकामनि साधि राखी आनिकै । जे देव देवी सेइयत हितलागि चितसनमानिकै । ते तंत्रमंत्र सिपाइ रावत सबन सो पहिचानिकै ॥ ४ ॥ दो० । सकल सुआसिनि गुरजन, पुरजन पाहुने लोग । बिबुध बिलासिनि सुरमुनि, जाचक जो जेहि जोग ॥ छंद । जेहि जोग जे तेहि भांति ते पहिराइ परिपूरन किए । जै कहत देत असीस तुलसीदास ज्यों हुलसतहिए ॥ ज्यों आजुकालिहु परब जागरु होहिंगे नेवते दिए । ते धन्य पुन्यपयोधि जे तेहिसमैसुपजीवन जिए ॥५॥ दो० । भूपतिभागबली सुरनर, नाग सराहि सिहाहिं । तियबरवेष अली संपति, सिधिअनिमादिक माहिं ॥ छंद ।

अनिमादि सारद सैलनंदिनि वाल लालहि पालहीं। भरि जनम जे पाये न ते परितोष उमा रमा लही॥ निजलोक विसरे लोकपनि घर कौन चरचा चालहीं। तुलसी तपत तिहुताप जग जनु प्रभु छठी छाया लही॥ ६॥ ५॥

अब छठी लिखत हैं, कवि की उक्ति है। अवध में मंगल साज समाज औ वधावा घर घर है औ निज निज काज करत सगुन सोहावने होत ताते सब मुदित हैं। पुर नर नारि अगनित रचना संवारि कै जाको जो काज ताको सजत हैं। गृह आंगन अटारिन बजार औ गलिन में घनी विधि ते सुंदर चौंकैं औ चवंर पताका चंदवा बंदनवार कलश औ दीपावली बनी है। सुख सुकृत सोभामय पुरी जो श्री अयोध्या जू तिन को ब्रह्मा जू की सुंदर मति रूपा जननी ने मानो उत्पन्न करी है॥ अब सखी मति सखी की उक्ति है। आज उजेरी चैत चतुर्दशी को निर्मल अर्थात् धूम मेघ आदि रहित निशिराज कहैं चन्द्रमा प्रकाशमान हैं औ तारागण की पंक्ति सोभित भई है औ दशो दिशा में आनंद उमगत है आजु देवता अनेक विमान बनाय के आनंद उमगत गावत बजावत नाचत हर्षित होत आय के सुमन वर्षत हैं॥१॥ नर आकाश देखि औ देवता पुरछवि देखि परस्पर आनंद पाय रघुराज को साज सराहि अघाय कै लोचन लाभ लेत हैं॥२॥ री सखी राम छठी की राति सुंदर निहारि के जागिए। मंगल औ मोद सोई मंदिर है मंदिर में मूरति रहति है, इहां महाराज के चारों बालक सोई मूर्ति हैं परमार्थ रूप मनोहर चारि मूर्ति ब्रह्मा सुंदर रचिकै ताके अनुरूप महाराज ही को पूजन योग्य जानि ब्रह्मा शिव मिलि दई तिन की छठी सुंदर मंदिर में है वा तिन की छठी मंजुल कहैं सुंदर मंदिर है औ जिन्ह की सरसई करि जगत सरस है सो नींद किए औ भामिनि जागरन किए ताते रमणीया रात्रि भई वा जिन्ह की सरसई ते जगत सरस है तिन्ह की छठी रूप सुंदर मढ़ी में और को को कहैं नींद रूपा भामिनि भी जागरन किये ताते रमणीया रात्रि भई॥३॥ सेवक समय के सुंदर साधनहारे औ सचिव सुजान सब सजग भए तिन के

मुनिवर जे गुरु ते लौकिक वैदिक अनेक प्रकार के विधान
तब मुनि जानि कै अनेक वैदिक लौकिक विधान को आचर
हैं बलिदान पूजांहतु औ जड़ी औ मणि आनि कै साधि रा
हित लागि चित ते सनमानि कै जे देव देवी सेइयत है ते देव
तंत्र मंत्र सबनि सो पहिचानि के सिखाय राखत । पहिचानि कै
को यह भाव कि जेहि देवता में जाकी प्रीति है वा ते देव देवी
मुनिवरन सो पहिचान करि के अपना २ जंत्र मंत्र सिखाय रा
सिखाइवे को यह भाव कि जो एहिवार न पूजे जाहिंगे तो को
कोऊ पूजैगो ॥४॥ संपूर्ण सोहागिनि श्रेष्ठवर्ग पुरजन पाहुन
बिलासिनि कहैं देवपत्नी देवता मुनि औ याचक लोग जो जेहि
के हैं तेहि को तेहि भांति वस्त्र भूषणादि पहिराय परिपूरण किए
तुलसीदास को हृदय हुलसत है तैसे हुलसत हिए जय कहत अर्थात्
देत हैं औ नेवता दिए कि ज्यौं आजु जागरन भयो है अर्थात्
राम की छठी को तैसे काल्ह श्री भरतकी छठी को औ परों श्रीलक्ष्म
शत्रुहन की छठी को जागरन होहिंगे, अब गोसाईं जी कहत हैं ते पन
हैं औ पुन्य के समुद्र हैं जे तेहि समय में सुखपूर्वक जीवन तें सि
अर्थात् वहि उत्सव में जे रहे ॥५॥ संपति कहैं लक्ष्मी औ सिद्धि अणि
मादि ते स्त्री सखी को श्रेष्ठ वेष करि कमाति हैं अर्थात् दासीपना
कराती हैं औ अणिमादि सिद्धि औ सरस्वती औ पार्वती श्री बालक
को लालत पालत हैं जन्म भरि में जे परितोष न पाए ते परितोष उमा
रमा लहतु भई अर्थात् पुत्र खेलायवे को सुख न पाए रहीं सो पाई औ
इंद्रादिक अपने लोक को भूले, जावे को को कहै घर की चरचा तक
नहीं चलावत हैं। गोसाईं जी कहत हैं मानो तीनों ताप में तपत संसार
मसुछठी की छाया पाई है ॥ ६॥५ ॥

राग जयतश्री—बाजत अवध गहागहे आनंद बधाये।
नामकरन रघुबरनि कै नृप सुदिन सोधाए। पाय रजायसु
राय को रिषिराज बोलाए ॥ सिष्य सचिव सेवक सभा
सादर सिरनाए। साधु सुमति समरथ सबै सानंद

दल दूब फल मनि मूलिका कुलि काज लिपाए ॥ १ ॥ गनप गौरि हर पूजिके गोहन्द दुहाए। घर घर मुद मंगल महागुनगान सुहाए। तुरित मुदित जहं तहं चले मग के भए भाए। सुरपति मामनु घन मनो मारुत मिलिधाए ॥२॥ गृह आंगन चौहट गली बाजार बनाए। कलस चनर तोरन ध्वजा मुबितान तनाए ॥ चित्र चारु चौके रची लिपि नाम जनाए। भरि भरि सरवर बापिका अरगजा सनाए ॥ ३ ॥ नर नारिन्ह पल चारि मे सब साज सजाए। दशरथपुर छवि आपनी सुरनगर लजाए ॥ विबुध विमान बनाइकै आनंदित आए। हरषि सुमन बरषन लगे गये धनु जनु पाए ॥४॥ बरे विप्र चहुं बेद के रविकुल गुर ज्ञानी। आपु बशिष्ट अथर्वनी महिमा जग जागी ॥ लोकरीति विधिवेद की करि कछौ सुबानी। मिनु मनेत बेगि बोलिये कौसल्या रानी ॥ ५ ॥ सुनत मुधासिनि लै चलीं गावत बडभागी। उमा रमा सारद सची देपि सुनि अनुरागी। निज निज रुचि वेष विरचियै हिजि मिलि संग लागीं। तेहि अवसर तिहुंलोक की मुदसा जनु जागी ॥ ६ ॥ चारु चौक बैठत भईं भूप भामिनि सोहैं ॥ गोद मोद मूरति लिये सुकृती जन जोहैं। सुप सुपमा कौतुक कला देपि सुनि मुनि मोहैं। सो समाज कहै बरनिके ऐसो कवि कोहैं ॥ ७ ॥ लगे पढन रचारिचा रिपिराज विराजे। गगन सुमन झरि जय जये बहु बाजने बाजे ॥ भए अमंगल लंक मै संक संकट गाजे। मुअन चारिदस के बडे दुप दारिद भाजे ॥ ८ ॥ बाल बिलोकि अथर्वनी

हँसि हरषि बजाये। सुम को सुम मोद मोद को रामगान सुनाये ॥ भाट बात कल कीरिता दल बरन सुहाये। बंद नछत्र आनंद को जनु बंदुरि बादो ॥ ८ ॥ जोहि जाति लपि जोरिकै करपुट सिर राये। जय जय जय करुनानिधि सादर सुर गाये ॥ सत्यसंध सांचे सदा जे आदर पाये ॥ प्रनत पाल पाये सही जे प्रन निभाये ॥ १० ॥ भूमिदेव देव देवि के नरदेव दुलारी। बोलि सचिव सेवक सभा पटभूषन मंडारी ॥ देहु जाहि जेहि चाहिए मन मानि सँभारी। लगे देन हिय हरषिकै हेरि हेरि हँकारी ॥ ११ ॥ राम नेवछावरि लेन को इठि होत सियारी। बहुरि देत तेहि देपिये मानहु धनधारी ॥ भरतलषनरिपुदमनहूं धरे नाम विचारी। फल दायक फल चारि के दसरथ सुतचारी ॥ १२ ॥ भये भूप बालकनि के नाम निरूपन नीके। गये सोच संकट मिटे तब तें पुरती के ॥ सुफल मनोरथ विधि किये सब विधि सबहीके। अब हैहैं गाये सुने सब के तुलसी के ॥ १३ ॥ ६ ॥

कवि की उक्ति। आनंद बधावा अवध में गहागह बाजत है। गहागह यह अनुकरण है चारो भाइन के नामकरण के हेतु। महाराज सुंदर दिन सोधावत भए। महाराज की आज्ञा पाय श्री वशिष्ट जू के शिष्य औ महाराज के मंत्री दास सबा बोलवावत भए वे आइ सादर शिर नवाए ते सब साधु समर्थ को वशिष्ट जू आनंद सहित सिखावत भए। भाव वस्तु आने की विधि समुद्रादि जल तुलसी दुर्वा बिल्वादि दल सोपारी आदि फल पंच रत्न आदि मणि सतावरि आदि जड़ी और जे संपूर्ण काज के वस्तु लिखाइ दिए ॥ १ ॥ गनेश गौरी श्री शिव जी को पूजि कै गाइन को बुलाए। घर घर में महा आनंद मंगल औ गुन के गान सुंदर

५। मन के भाए भए ते सचिव सेवकादि जहां तहां तुरित हर्षित

चले मानो इंद्र की आज्ञा तें मेघ पवन मिलि करि धाए ।२। गृह आदि सुगम । विचित्र सुंदर चौकैं रचि कै नाम लिखि जनावत भए अर्थात् यह चौक श्री राम की है यह श्री भरतादि भैयन की है औ तलाव बावली में अरगजा भरि भरि के सनाए ॥ ३ ॥ एतना बड़ा काज सो चारि पल में नर नारि सब सजाए । दशरथपुर ने अपनी छवि तें इन्द्रलोक को लज्जित किए अतएव देवता बिमान बनाय के आनंदित आए । भाव लजीली पुरी में रहना उचित नहीं। हर्षि के फूल बरखन लगे, मानो गए धन पाए ॥४॥ बशिष्ट जी ने बरे कहैं नेवता दिए चारो बेद के ब्राह्मणों को औ आप बशिष्ट जो अथर्वनी हैं जाकी महिमा जगत जानत है सो लोकरीति औ बेद की बिधि करि सुन्दर बानी ते कहे । सिसुइ० सु० ॥५॥ सुनत मात्र सुआसिनी बड़िभागिनी गावत ले चली । पार्वती लक्ष्मी सरस्वती इन्द्रानी स्वरूप देखि गान सुनि कै अनुरागत भई । अपनी २ रुचि अनुसार बेख बनाय हिलि मिलि संग लागत भई तेहि अवसर में तीनों लोक की मानो सुंदर दशा जागी । भाव चौकठ के बाहर होते सुंदर दसा जागी तो जब घर के बाहर निकसैंगे तब क्या जानै क्या होयगो, बरही के दिन आगन में निकालबे की रीति है ॥ ६ ॥ सुंदर चौके में भूपभामिनी बैठत भई गोद में आनंद की मूर्ति लिए सोभत हैं जेहि मूर्ति को सुकृतीजन देखत हैं, सुख औ परम शोभा औ कौतुक की कला देखि सुनि के मुनि मोहत हैं । सो इ० सु० ॥७॥ विराजे शोभे संक संकट गाजे कहैं संका औ संकट गाजत भए ॥ ८ ॥ बालक को देखि अथर्वणी ने शिव को जनायो जो शुभ को शुस मोद को गोद राम नाम है, सो हंसि के सुनायो माता पिता आदि को सुनायो, हंसने को यह भाव कि, इन का नित्य नाम जो है, ताको अब धरत हौं । पाद्मे- "श्रियः कमलवासिन्याः रमणोऽयं यतो हरिः । तस्मात् श्रीराम इत्यस्य नाम सिद्धं पुरातनम् ॥ सहस्रनामसदृशं स्मरणान्मुक्तिदं नृणाम् ॥" बशिष्ट को अथर्वनी रघुवंश में भी लिखा है। "अथाथर्वनिधेस्तस्य विजितारिपुरः पुरः । अध्यर्धमर्धपति वाचि माददे वदतां वरः ॥" अथर्वनी कहिबे ते, पुरोहित कृत्य के ज्ञाता जनाये, तथा च कामन्दके—"अस्त्रे च दण्डनीत्यां च कुशलः स्यात्पुरोहितः । अथर्वविहितं कुर्या नित्यं शांति-

कर्मौष्टिकम् ॥" तीनों वेद में, औ राजनीति में, प्रवीन होय, सो पुरोहित अथर्वण वेद करि विहित शांतिक पौष्टिक कर्म करै। थाल्हा रूप सुंदर श्री कौशल्या जू हैं, तिन में सकल आनंद को मूल, मानो अंकुर आयो है। इहां अंकुर के स्थान में बाल श्री राम हैं, अंकुर ते दुइ दल निकसत हैं, सो इहां राम नाम के सुंदर दोऊ अक्षर हैं ॥९॥ श्री रामजी को देखि के, औ वशिष्ट जी के कहिवे ते, नाम जानि के ताको जपि कै हस्तपुट जोरि सिर पर राखे, अर्थात् प्रणाम किए, हे करुणानिधे, हे सत्यसंध, हे प्रणपाल, आप की जय होय जय होय, आदर सहित देवता भाषे, आप जे आपर आपे कहैं, कहे अर्थात् "जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुमहि लागि धरिहौं नरवेसा ॥" इत्यादि ते सदा सांचे, जे फल अभिलाषे रहे ते ठीक पाए, अर्थात् आप के अवतार के अभिलाषे रहे सो पाए ॥१०॥ ब्राह्मण औ देवतन को देखि कै सुखी जोनरदेव सो संचिव सेवक सखापटधारी बस्त्रन के अधिकारी, औ भंडारी अन्नादिक के अधिकारी बोलाय के आज्ञा दिए ॥ ११ ॥ धनधारी कुबेर ॥ १२ ॥ भूप के बालकन के उपमा रहित नीके नाम भए, तब ते पुरातियन के सोच गये, औ संकट मिटे, भाव सूतिकागृह में अनेक विघ्न को भय रहत है, औ स्त्रियन को भीरु सुभाव भी होत है, ताते डरी रहीं सो बरही कुशलपूर्वक समाप्ति भई, ताते सोच गयो, वा शुभ को शुभ मोद को मोद राम नाम सुनि सोच रहित भई ॥ १३ ॥ ६ ॥

राग बिलावल—सुभग सेज सोहति कौसल्या रुचिर राम सिसु गोद लिये। बार बार बिधु बदन बिलोकति लोचन चारु चकोर किये ॥ १ ॥ कबहुं पौंढि पय पान करायति कबहुं रायति लाय हिये। बालकेलि गावति हुलरावति पुलकित प्रेम पियूष पिये ॥ २ ॥ बिधि महेस मुनि सुर सिद्धात सब देपत चंबुद ओट दिये। तुलसिदास ऐसो रूप रघुपति पै काहूं तो पायो न विये ॥ ३ ॥ ७ ॥

कवि की उक्ति। बिधु चंद्र ॥१॥ श्री राम मेघ रूप अमृत को पिए,

को श्री कौसल्या जू के बाललीला के पद गावति, औ श्री रघुनाथ को हाथ पर झुलावति, औ रोमांचित होति हैं, भाव हर्ष तें ॥ २ ॥ बादर के ओट देइ देखिबे को यह भाव कि, प्रत्यक्ष होय देखिबे ते माता हम लोगों के ओर दृष्टि करैंगी, तो यह सुख जात रहैगो, ऐसो सुख रघुपति सें दिये कहैं, दूसरे ने न पायो ॥ ३ ॥ ७ ॥

राग सोरठ —कहौ लाल कबहिं बड़े बलि भैया । राम लषन भावते भरत रिपुदवन चारु चाखो भैया ॥ १ ॥ बाल विभूषन बसन मनोहर अंगनि विरचि बनैहौं । सोभा निरषि निछावरि करि उरलाय वारगे जैहौं ॥२॥ छगन मगन अगना षेलिहौ मिलि ठुमुकि ठुमुकि कब धैहौं । कलबल बचन तोतरे मंजुल कहि मा मोहि बुलैहौं ॥ ३ ॥ पुरजन सचिव राउ रानी सब सेवक सषा सहेली ॥ लैहै लोचनलाहु सुफल लषि ललित मनोरथ बेली ॥ ४ ॥ जो सुष को लालसा लटू सिव सुक सनकादि उदासी । तुलसी तेहि सुष सिन्धु कौसिला मगन पै प्रेम पिपासी ॥ ५ ॥ ८ ॥

भैया बलिजाय, हे लाल, कब बड़े है हौ। भावते कहैं सोहाते ॥१॥ बाल विभूषन कटुला जामें बजर बट्ट बघनहा आदि रहत है, औरो पदिक हारादि अनेक, औ बसन झिंगुलिया चौतनी आदि मन के हरैया अंगन में विरचि के बनावोंगी, वा अंगनि को भी विशेष रचि षमै हौं भाव चोटी गांठि उबटि दिठौना आदि दै शोभा देखि नेवछावर करि उरलाय फिरि आपै नेवछावरि होय जैहौं ॥ २ ॥ छगनमगन एक खेल विशेष है, कल बल जो बुद्धि के बहुत कला औ बल से बुझाय तोतरे आध और के और कहे सोई स्पष्ट करत हैं, कहि मा मोहि बुलै हो अर्थात् माय स्पष्ट न कहि मा कहि बोलैहौ ॥ ३ ॥ पुरजन सचिव आदि सुंदर मनोरथ रूप लता में सुंदर फल देखि लोचन लाहु लेइ हैं, इहां सचिव पद से आगे मंत्री जानना, वाल्मीकीये—

" धृष्टि र्जयंतो विजयः सुराष्ट्रो राष्ट्रवर्द्धनः । अशोको धर्मपालश्च सुमंत्रश्चाष्टमो महान्" ॥४॥ लालसा मे लटू हैं, भाव जैसे एकै ठांव घूमत झूमत लटू अचल रहत ॥ ५ ॥ ८ ॥

पगनि कब चलिहो चारो भैया । प्रेम पुलकि उर लाइ सुअन सब कहत सुमित्रा मैया ॥ १ ॥ सुंदरतन सिसु बसन विभूषन नप सिष निरषि निकैया । दलिचिन प्रान नेछावरि वारि वारि लैहै मातु बलैया ॥ २ ॥ किलकनि नटनि चलनि चितवनि भजि मिलनि मनोहर तैया । मनिखंभनि प्रतिबिंब झलक्कछवि छलकिहि भरि अंगनैया ॥ ३ ॥ बाल बिनोद मोद मंजुल बिधु लीला ललित जुन्हैया । भूपति पुन्य पयोधि उमगि घर घर आनंद बधैया ॥ ४ ॥ ह्वै हैं सकल सुकृत सुष भाजन लोचन लाहु लुटैया । अनायास पाइ हैं जनम फल तोतरै बचन सुनैया ॥५॥ भरत राम रिपुदमन लषन की चरित सरित अन्हवैया । तुलसी तब के से अजहुं जानिबे रघुवर नगर बसैया ॥ ६ ॥ ९ ॥

निकैया सुंदराई । तृन तोरिबे को यह भाव कि अपनों नजर न लगै ॥२॥ नटनि नाचानि भजि मिलनि भागि के मिलना मणिखंभनि में जो प्रतिबिंब परैंगे तिन की छवि की झलक भरि अंगनाई छलकिहि, भाव प्रतिबिंब का प्रतिबिंब भरि अंगनाई परिहि वा अवहीं जो घर में रहिवे ते मणि खंभनि में प्रतिबिंब के झलक की छवि है, सो जब बाहर खेलिहैं, तब भरि अंगनाई झलकहि, भाव आंगन भरि बालकै बालक देखि परैंगे ॥ ३ ॥ चारो भैयन के लरिकखेल जो आनंद, सो चन्द्रमा औ सुंदर खेलना जो है, सो तेहि चंद की चांदनी, तेहि चन्द प्रकाश युक्त को देखि कै पुण्य के समुद्र जे भूपति ते उमगिहैं, जब समुद्र उमगत है, तब शब्द करत है, इहां घर घर में आनंद ने जो बधाई

होना है, सो शब्द है ॥ ४ ॥ तोतरे वचन के सुननहारे वेपरिश्रम जन्म के फल को पावैंगे, भाव वेद वेदांत के श्रवण मनन निदिध्यासन विना जन्म को फल अर्थात् मोक्ष पावैंग, इहां माधुर्यपक्ष मे स्पष्ट है ॥ ५ ॥ श्री गोसांई जी कहत हैं, भरत राम रिपुदवन लषन के चरित्र रूपी नदी के स्नान करैया जे हैं तिन को तव के सरिस अबो रघुवरनगर वसैया जानना ॥ ६ ॥ ६ ॥

राग केदार—चुपरि उवटि न्हवाय कै नयन कांजेरचि रुचि तिलक गोरोचन को कियो है। भ्रू पर अनूप मसिविंदु वारे वारैं वार विलसत सीसपर छेरिछरै छियो है ॥१॥ मोद भरि गोदलिये लालति सुमित्रा देपि देव कहैं सवको सुकृत उपवियो है। मातु पितु प्रिय परिजन पुरजन धन्य पुन्यपुंज पेपि पेपि प्रेम रसपियो है ॥ २ ॥ लोहित ललित लघु चरन कर कमल चाल चाहि सो छवि सुकवि जियजियो है। वाल केलि वातवस झलकि झलमलत सोभा की दीयटि मानो रूपदीप दियो है ॥ ३ ॥ राम सिसु सानुज चरित चारु गाय सुनि सुजननि सादर जनमलाहु लियो है। तुलसी विषाद दसरथ दसचारिपुर जैसे सुप योग विधि विरच्यो न वियो है ॥ ४ ॥ १० ॥

उवटन लगाय तेल चुपरि नहवाय के नेत्र में काजर दिये औ रुचि पूर्वक रचि कै गोरोचन को तिलक कियो औ भौंह पर उपमा रहित स्याम विंदु दियो, अर्थात् डिठौना औ छोटे छोटे वार सिर पर शोभित हैं, देखे से हृदय हरि लेत हैं ॥ १ ॥ आनंद में भरि कै गोद में लिये सुमित्रा जू को दुलारत देखि देवता कहत हैं, कि सब को सुकृत उदै भयो है, औ माता पिता प्रिय परिवार के जन औ पुरजन धन्य औ पुन्य के पुंज हैं, काहे ते कि देखि देखि के प्रेम रस को पी लियो है ॥२॥ सुंदर लाल छोटे २ चरन औ कर कमल का चाल कहैं चलावना जो

सो छवि देखि कै सुंदर कवि को जीव जी उठ्यौ है, इहां चाल शब्द ते हाथ पैर का चलावनो लेना क्योंकि बंकइआं चलना अबहीं आगे कहेंगे मानो सोभा रूप दीवट पर रूप रूपी दीया धर्यो है सो बाल केलि रूप वायु के बस झलकि के झलमलात है ॥ ३ ॥ गोसांई जी कहत हैं कि चौदहो भुवन में ऐसे सुख के योग्य महाराज दशरथ को छोड़ि के ब्रह्मा ने दूसरे को नहीं बनायो है ॥ ४ ॥ १० ॥

राम सिसु गोद महामोद भरे दशरथ कौसिलहु ललकि लषन लाल लिये हैं । भरत सुमित्रा लये कैकई सहुसमन तन प्रेम पुलकि मगन मन भये हैं ॥ १ ॥ सेंठी लटकन मनि कनक रचित बाल भूषन बनाइ आछे अंग अंग ठये हैं । चाहि चुचुकारि चूंबि लालत लावत उर तैसे फल पावत जैसे सुबीज बये हैं ॥ २ ॥ घन ओट विबुध बिलोकि बरषत फूल अनुकूल बचन कहत नेह नये हैं । ऐसे पितु मातु पूत पुर परिजन बिधि जानियत आयुभरि एई निरमये हैं ॥ ३ ॥ अजर अमर होहु करो हरि हर छोहु जरठ जठेरिन्हि आसिर्वाद दिये हैं । तुलसी सराहे भाग तिन्ह के जिन्ह हिये बिंब राम रूप अनुराग रंग रये हैं ॥ ४ ॥ ११ ॥

बालराम गोद में हैं, ताते दशरथ महाराज महामोद में भरे हैं औ श्री कौशल्या जू भी ललकि कै लषन लाल को लिये हैं, भरत जू को भी सुमित्रा जू औ शत्रुहन जू को कैकई जू लिये हैं, प्रेम तें तन पुलकि करि कै सब के मन मगन भये हैं ॥ १ ॥ भालपर के बाल को चोटी सरिस दूनो ओर से गूंथि के पीछे के ओर ले जात हैं, ताको सेंठी कहत हैं, तामे लटकने लटकन हैं, और मणि सोना ते रचित, अर्थात् जड़ाऊ बाल समयके भूषन आछे बनाय कै अंग अंग में ठाने हैं, अर्थात् पहिराये हैं, देखि चुचुकारि मुखि कै दुलारत औ हृदय में लगावत हैं तैसे फल पावत जैसे सुंदर बीज बोए हैं, इहां सुंदर बीज सुंदर कर्म

हैं ॥ २ ॥ मेघ के ओट ते देवता देखि के फूल वर्षत हैं औ नये नेह से अनुकूल वचन कहत हैं वा नेह मे देव नम्र है गए हैं वा अनुकूल वचन कहत हैं कि इन के नेह नवीन हैं अर्थात् अस न देखे। पिता माता नगर परिजन को जानियत हैं कि विधाता आयुष भरि में ऐसे इनहीं को बनाए हैं ॥ ३ ॥ जरठ जठेरिन्ह गुद औ बूढ़िया डिंभ बालक रये रंगे ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग बभायरी—आजु अनरसे हैं भोर के पय पियत न नीके। रहत न बैठे ठाढे पालने झूलतहु रोअत राम मेरो सो सोचु सबही के ॥ १ ॥ देव पितर यह पूजिबे तुला तौलिबे घी के । तदपि कबहु कबहु कै सपी ऐसही अरत अब परत दुष्ट दुष्ट ती के ॥ २ ॥ बेगि बोलि कुलगुरु कुअै माथे हाथ धमीके। सुनत आइ रिषि कुसहरे नरसिंहमंत्र पढि जो सुमिरत भय भी के ॥ ३ ॥ जासु नाम सर्दस सदा सिव पारवती के। ताहि झरावति कौसिला यह रीति प्रीति की हिय हुलसति तुलसी के ॥ ४ ॥ १२ ॥

अनरसे हैं खनमनाए हैं ॥ १ ॥ घृत को तुला दान सुख कारक रोगहारकहै, अरत छैलात ॥ २ ॥ शीघ्र बोलाइये कुलगुरु को कि माथ को अमृत रूप हाथ ते छुअैं सुनत मात्र में ऋषि आय कै नरसिंह मंत्र जो सुमिरत भय को भय होत सो पढ़ि कै कुशहरे कुश ते मार्जन किये ॥ ३ ॥ १२ ॥

माथे हाथ जब दियो ऋषि राम किलकन लागे। महिमा समुझि लीला विलोकि गुरु सजल नयन तन पुलकि रोम रोम जागे ॥१॥ लिये गोद धाए गोद ते मोद मुनि मन अनुरागे। निरखि मातु हरषीं हिये बाली ओट कहति मृदु-बचन प्रेम कैसे पागे ॥ २ ॥ तुम सुरतरु रघुबंस के देत अभि-

मत मागे। मेरे विसेपगति रावरी तुलसी प्रसाद जाके सकल अमंगल भागे ॥ ३ ॥ १३ ॥

माता के गोद तें धाए तव मुनि गोद में लिए औ हर्ष से मुनि मन में अनुरागे ॥ २ ॥ सुरतरु कल्पवृक्ष, अभिमत वांछित फल ॥ ३ ॥ १३ ॥

अमिअ विलोकनि करि कृपा मुनिवर जब जोए। तब ते राम अरु भरत लपन रिपुदमन सुमुपि सपि सकल सुअन सुपसोये ॥ १ ॥ लाय सुमित्रा लिए हिए फनिमनि ज्यों गोए। तुलसी नेवछावरि करति मातु अतिप्रेममगन मन सजल सुलोचनकोए ॥ २ ॥ १४ ॥

अमिय विलोकनि अमृत दृष्टि जोए देखे ॥ १ ॥ सुमित्रा जू हृदय में लगाय लिए जैसे सर्प मणि को छपावत कोय कहैं कोर ॥ २ ॥१४॥

मातु सकल कुलगुरुवधू प्रियसषी सुहाई। सादर सब मंगल किए महि मनि महेस पर सवनि सुधेनु दुहाई ॥१॥ बोलि भूप भूसुर लिये अति विनय बडाई। पूजि पांय सनमानि दानदिये लहि असीस मुनि बरषैं सुमन सुरसांई ॥ २ ॥ घरघर पुर बाजन लगे आनंदवधाई। सुप सनेह तेहि समय को तुलसी जानै जाको चोरो है चित चहुंभाई ॥ ३ ॥ १५ ॥

सकल माता कुलगुरु वधू अरुंधती औ सुंदर प्रिय सखी आदर सहित मंगल किए। भूमि में जो मणि कहैं श्रेष्ठ महेश तिन पैं वा माहिम्न स्तोत्र ते सवनि ने सुंदर धेनु दुहाई। अयोध्या खंड में क्षीरेश्वर महादेव पर दूधदुहावना लिखा है ॥ १ ॥ ब्राह्मणों को महाराज बोलाय लिए अति विनय बड़ाई ते पाय पूजि सनमानिकै दान दिए तब आसीस पाय सो मुनि के देवतन के स्वामी फूल वर्षत भए ॥ २ ॥ ३ ॥१५॥

राग धनाश्री—या सिसु के गुन नाम बडाई। कोकहि कै सुनहु नरपति श्रीपतिसमान प्रभुताई ॥ १ ॥ यद्यपि बुधि बय रूप शील गुन समै चारु चारयो भाई। तदपि लोक लोचन चकोर ससि राम भगत सुखदाई ॥२॥ सुर नर मुनि करि अभय दनुजहति हरिहि धरनि गरुआई। कीरति बिमल विश्वअघ मोचनि रहिहि सकल जगछाई ॥ ३ ॥ या के चरन सरोज कपटतजि जो भजिहै मनलाई। सो कुल जुगुल-सहित तरि है भव एह न कछू अधिकाई ॥४॥ सुनि गुरुवचन पुलकितन दंपति हरष न हृदय समाई। तुलसिदास अवलोकि मातुमुख प्रभुसन में मुसुकाई ॥ ५ ॥ १६ ॥

समै बराबर ॥ ५ ॥ १६ ॥

टिप्पणी—राक्षसों को मार कर सुर नर मुनि को अभय करेंगे। और पृथ्वी की गरुआई कहें बोझ उतारेंगे, सो अघ पाप को हरनेवाली विमल कीर्ति संसार में छाये रहेगी ॥ १६ ॥

राग बिलावल—अवध आजु आगमी एकु आयो। करतल निरपि कहत सबगुनगन बहुतनि परिचो पायो ॥ १ ॥ बूढो बडो प्रमानिक ब्राह्मण संकर नाम सुहायो। संग सिसु सिष्य सुनत कौसिल्या भीतर भवन बुलायो ॥ २ ॥ पायपखारि पूजि दयो आसन असन बसन पहिरायो। मेले चरन चारु चारों सुत आगे हाथ दिवायो ॥३॥ नपसिसु बाल बिलोकि बिप्र तनु पुलक नयन जल छायो। लैलै गोद कमल कर निरपत उरप्रमोद अनमायो ॥ ४ ॥ जन्म प्रसंग कह्यो कौसिक मिसि सोयस्वयंवर गायो। राम भरत रिपुदमन लषन को जय सुष सुजन सुनायो ॥ ५ ॥ तुलसिदास रनिवास रहसबस

भयो सब को मन भायो। सनमान्यो महिदेव असीसत सा-
नंद सदन सिधायो ॥ ६ ॥ १७ ॥

शिव जी जोतपी बनि कै संग में सुंदर शिष्य काग भशुंड जी के बनाय कै इष्ट दर्शन हेतु आए हैं। उर प्रमोद अनमायो हृदय में आनंद नहीं अमात है ॥ १७ ॥

टिप्पणी—आगम जानने वाले को आगमी अर्थात् ज्योतपी कहते हैं। करतल तलहथी। परिचो परिचय अर्थात् शिवरूपी ज्योतिषी जी ने जिन २ को जैसा फल कहा सो सच देख पड़ा। शिव जी बार बार राम जी को मोद में ले कर कमल समान कर देख देख कर इतने प्रसन्न हुए कि हृदय में आनन्द नहीं अंटा अर्थात् आनन्द हृदय से उमड़ गया ॥ १७ ॥

राग केदार—पौढिये लाल पालने हौं झुलावौं। कर पद मुख चख कमल लसत लखि लोचन भंवर भुलावौं ॥ १ ॥ बालबिनोद मोद मंजुल मनि किलंकनि खानि खुलावौं। तेइ अनुराग ताग गुहिबे कहुं मति मृगनयनि बुलावौं ॥२॥ तुलसी भनित भली भामिनि उर सो पहिराइ फुलावौं। चारु चरित रघुवर तेरे तेहि मिलि गाइ चरन चित लावौं ॥ ३ ॥१८॥

हे लाल पालने पौढ़िए हम झुलावैं। कर पद मुख नेत्र रूप कमल शोभित देखि कै अपने नेत्र रूप भ्रमर को भुलावैं ॥ १ ॥ बालक्रीड़ा को आनंद सोई सुन्दर मणि है। मणि खानि ते निकसत है सो कहत हैं कि किलकनि रूपी खानि से खुलावौं अर्थात् प्रगटावौं तेहि मणि को अनुराग रूपी धागा में गुहिबे को मति रूपी मृगनैनी अर्थात् पटहारिन को बुलाय लेउं ॥ २ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि भनित भली रूपा भामिनी के उर में सो मणि का हार पहिराय के फुलावौं अर्थात् आनंदित करौं। हे रघुवर तेरे सुन्दर चरित्र को तेहि भनित रूपी भामिनी के संग मिलि गाइकै चरण में चित्त लगावौं ॥ ३ ॥ १८ ॥

सोइए लाल लाडिलेरघुराई । मगनमोद लिए मोद-मुमित्रा बारबार बलिजाई ॥१॥ हँसे हँसत अनरसे अनरसत प्रतिबिंबनि ज्यौं झाई । तुम्ह सब के जीवन के जीवन सकल सुमंगलदाई ॥ २ ॥ मूलमूल सुरबीथि बेलि तमतोम सुदल अधिकाई । नषत सुमन नभ बिटप बोडि मानो छपा छिटकि छबिछाई ॥ ३ ॥ हौ जभांत अलसात तात तेरी बानि जानि मै पाई । गाइ गाइ हलराइ बोलिहौं सुषनीदरो सुषाई ॥४॥ बाछरु छबीले छौना छगन मगन मेरे कहति मल्हाइ मल्हाई । सानुजहिय हुलसति तुलसी के प्रभु कि ललित लरिकाई ।५।१८

हंसिबे ते हंसत हैं औ उदास होवे ते उदास होत है बिंबनि प्रति जैसे परिछाहीं । तुम सब के जीवन के जीवन औ सब सुमंगल देनिहार हौ ॥ २ ॥ मूल मूल नक्षत्र है सुरबीथी लता है औ तमसमूह सुंदर दलों की अधिकाई हैं औ नक्षत्र कहैं तारागण फूल हैं सो आकाश रूप वृक्ष पर छिटकि औ बोढ़ि कहैं फैलि कै मानो रीति छवि छाई है । मूल लिखिबे को यह भाव कि जड़ में एक मुसरा रहत है तामें महीन महीन बहुत सोर रहत है । मूल नक्षत्र के ग्यारह तारे हैं तेहि में से एक मुसरा के स्थान हैं औ दस महीन महीन सोरों के हैं ॥ ३ ॥ हे तात अलसात जम्हात हौ, तुम्हारी बान हम जान पाई, भाव जब अस करत हौ तब सोभत हौं हाथ पैर हिलाय गाय गाय मुखनिंदिया को बोलैहौं ॥ ४ ॥ मल्हाई मल्हाई रगिआय रगिआय ॥ ५ ॥ १९ ॥

ललनलोने लैरुआ बनि मैआ । सुष सोइअै नीदबैरिआ भइ चारु चरित चारयौ भइआ ॥ १ ॥ कहति मल्हाइ लाइ उर छनछन छगन छबीले छोटे छैआ । मोदकंद कुलकुमुदचंद मेरे रामचंद्र रघुरैआ ॥ २ ॥ रघुवरबाल केलि संतन की सुभग सुभद सुरगैआ । तुलसी दुहि पीवत सुपओवत पयसुपे-मघनोघैया ॥ ३ ॥ २० ॥

लेरुआ बछरा चारु चरित सुंदर हैं चरित्र जेहि के ॥ १ ॥ छैया बालक मोद कंद आनंद के मूल औ कुल रूप कुमुद के चंद्रमा ॥ २ ॥ रघुवर की बालकेलि संतन की सुंदर शुभ देनिहारी कामधेनु है। तेहि कामधेनु ते सुंदर प्रेम रूप दूध जामे घना घीव है ताको तुलसी दुहि के पीवत है ताते सुखयुत जीवत है ॥ ३ ॥ २० ॥

सुखनीद कहति आलि आइहौं। रामलषन रिपुदमन भरत सिसु करि सवसुमुख सोआइहौं ॥ १ ॥ रोवनि धोवनि अनखानि अनरसनि डीठि मूठि निठुर नसाइहौं। हंसनि खेलनि किलकानि आनंदनि भूपतिभवन बसाइहौं ॥२॥ गोद विनोद मोदमय मूरति हरषि हरषि हलराइहौं। तनु तिल तिलकरि वारि राम पर लैहौं रोगबलाइ हौं ॥ ३॥ रानी राउ सहित सुत परिजन निरषि नयनफल पाइहौं। चारु चरित रघुवंसतिलक के तहं तुलसिहि मिलि गाइहौं ॥ ४ ॥२१॥

अब माता फुसिलावति हैं कि सुखनींद कहति है कि हे आली मैं आइ हौं, सुमुख प्रसन्न ॥ १ ॥ रोआनि धोआनि रूढि है रोइबे के अर्थ में अनखानि खनमनानि, अनरसनि उदासीनता, दीठि नजर, मूठि टोना ताको निठुरता ते नसाओंगी। भाव दया न करोंगी वा ए सब जो निठुर तिन्ह को नसाओंगी भूपति भवन बसाइबे को यह भाव कि जब बालक सुखपूर्वक सोअत है तब उठे पर आनंदपूर्वक खेलत है ॥ २ ॥ क्रीड़ा औ आनंदमय मूरति को गोद में लै कै हरखि हरखि के हलराओंगी तन को तिल तिल करि कै श्री राम पर नेवछावरि करि रोग बलाय हम लै हौं ॥ ३ ॥ रानी राजा को पुत्र परिवार समेत देखि कै नैननि को फल पाओंगी सुंदर चरित्र रघुवंशतिलक के तहां तुलसी के संग मिलि गाओंगी ॥ ४ ॥ २१ ॥

राग असावरी—कनक रतनमय पालनो रच्यो मनहुं मारसुतहार। विविध खेलौना किंकिनी लागे मंजुल मुकाहार।

रघुकुल मंडन रामलला ॥ १ ॥ जननी उबटि अन्हवाइकै मनिभूषन सजि लिये गोद । पौढाये पटुपालने सिसु निरखि मगन मनमोद ॥ दसरथनंदन रामलला ॥ २ ॥ मदनमोर की चंद्रिका झलकनि निदरति तनजोति । नील कमल मनि जलद की उपमा कहै लघुमति होति ॥ मातु सुकृतफल रामलला ॥ ३ ॥ लघु लघु लोहित ललित है पद पानि अधर एकरंग । को कवि जो छवि कहि सकै नखसिख सुन्दर सब अंग ॥ परिजनरंजन रामलला ॥ ४ ॥ पगनूपुर कटि किंकिनी करकंजन पहुंची मंजु । हिय हरिनख अद्भुत बन्यो मानो मनसिज मनिगनगंजु । पुरजनसुरमनि रामलला ॥५॥ लोयन नीलसरोज से भूपर ममिखिंटु विराज । जनु बिधुमुपछवि अमिय को रक्षक राख्यो रसराज ॥ सोभासागर रामलला ॥ ६ ॥ गभुआरी अलकावली लसै लटकन ललित ललाट । जनु उडुगन विधु मिलन को चले तम विदारि करि बाट ॥ सहजसुहायन रामलला ॥७॥ देखि पेलवना किलकहिं पद पानि विलोचन लोल । विचित्र बिहंग अलि जलज ज्यों सुषमासर करत कलोल ॥ भक्तकल्पतरु रामलला ॥८॥ बाल बोलि बिनु अरथ के मुनि देत पदारथ चारि । जनु इन वचनन्हि ते भये सुरतरु तापस त्रिपुरारि ॥ नाम कामधुक रामलला ॥ ९ ॥ सखी सुमित्रा वारहीं मनिभूषन वसन विभाग । मधुर झुलाइ मल्हावई गावै उमगि उमगि अनुराग । हैं जग मंगल रामलला ॥ १० ॥ मोती जायो सीप में अरु अदिति जन्यो जग भानु । रघुपति जायो कौसिला गुन मंगल रूप निधानु । भुवनविभूषन रामलला ॥११॥ राम

सागर रामलला के नेत्र नील कमल सम हैं औ भौंह पर काजर को बिंदु सोभत है सो मानो काजर को बिंदु नहीं है शृंगार रस है ताको मुख चंद्र के छवि रूप अमृत को रक्षक राख्यो है ॥ ६ ॥ सहज सोहावन रामलला के गभुवारी अलकावली औ सुंदर लटकन ललाट पर लसत है मानो चंद्रमा के मिलन को तारागन तम बिदारि राह करि चले । इहां लटकन उडगन हैं मुख शशि है तम अलकावली है दूनो तरफ घाल अलगाए ते जो लकीर है गई है सो राह है ॥ ७ ॥ भक्तकल्पतरु राम लला जो हैं सो खेलवना देखि कै किलकत हैं पग हाथ नेत्र चंचल है मानो विचित्र पक्षी भ्रमर औ कमल परम सोभा रूप सर में कलोल करत हैं इहां विचित्र विहंग बालकन के पग में महावराद से चिरई लिखी जाति है सो है नेत्र भ्रमर कर कमल है ज्यौं का मानो अर्थ किया है सो भी होत है । कुवलयानंदे "मन्ये शंके ध्रुवंमायोनूनमित्येवमादिभिः । उत्प्रेक्षा व्यज्यते शब्दैरिवशब्दोऽपितादृशः ॥" ज्यौंइवपर्याय है ॥८॥ नाम कामधेनु है जेहि के तेहि रामलला के बिनु अर्थ के बालबचन जो सो सुने से चारो पदार्थ देत है भाव आप तो बे अर्थ को है औ सब अर्थ देत है वा बाल बोल बिनु अर्थ को जो है ताको सुनि कै सुनैया चारो फल देइबे को समर्थ होत है मानो इन बचनन ते भए हैं कल्पवृक्ष औ तपस्वी औ शिव जी भाव देखिबे में बेअर्थ के एऊ हैं पर सब अर्थ देत हैं सो क्यों न होहिं कारण को गुन कार्य में रहतही है ॥ ९ ॥ जगमंगल जो रामलला हैं तिन को सखी औ सुमित्रा जू मणिभूषण बसन पृथक २ नेवछावर करत हैं धीरे २ झुलाय अनुराग ते उमगि २ रागिभाय गावत हैं ॥ १० ॥ मोती सीप में जन्म्यो औ जगत में अदिति ने भानु को जन्मायो औ गुन मंगल मोद के पात्र रघुकुल के पति औ भुवन के विशेष भूषण करनेवाले रामलला को कौशल्या जू उत्पन्न किये ॥११॥ श्री राम प्रगट जब ते भए तब ते सब अमंगल के मूल गए मित्र आनंदित औ हित कहँ नातेदार उदय के प्राप्त भए हैं और बैरिन के उर में नित ही शूल है सो क्यों न होय भव भय के भंजनिहार रामलला हैं ॥ १२ ॥ रिपुगनगंजन रामलला जो हैं सो अनुज सखा मित्र संग लै के जब चौगान खेलन जैहैं जद्यपि जेहि हंदा से गेंदा खेला

जात है ताको चौगान कहत हैं पर इस खेल का भी नाम चौगान है लंका में खरभर औ पुरपुर में नगारा बाजिबे को यह भाव कि बाल काल में इतनी फुरती है तो आगे क्या जानें कैसी होयगी ॥१३॥ जब श्रीराम हाथी रथ घोड़ा संवारि सिकार को चलैंगे तब दसकंधर के उर में धकधकी होयगी कि अब इहां भी धनुधारन फरि के जनि दौड़े सो क्यों न होय, अरि रूपी हाथी के सिंह रामलला हैं ॥१४॥ सुमित्रा औ सखिन के गीत अनुकूल सुर सुनि सुनि के असीस देइ जय जय कहत हर्षत हैं औ फूल वर्षत हैं सो क्यों न सुखी होंहिं सुरन के सुखदायक रामलला हैं। अनुकूल गीत को यह भाव कि जस चाहत रहे तस गीतो में सुनत हैं ॥१५॥ तुलसीजीवन रामलला जो हैं सो यह षोड़श कलानिधान बालचरितमय चंद्रमा है वा तुलसी के जीवन जे रामलला हैं तिन के षोड़शकलानिधान बालचरित्रमय जो यह चंद्रमा है ताको तुलसी अपने चित्त को चकोर कियो सो प्रेम रूपी जो अमृत रस ताको पान करत है। चंद्रमा के षोड़श कला अमृतादि है तेहि के अनुसार रघुकुलमंडनादि षोड़श विशेषण किए। चंद्रकला यथा—"अमृतामानदांतुष्टिपुष्टिप्रीतिरतिंतथा। लज्जाश्रियंस्वधारात्रिज्योत्स्नांहंसवतीतितः॥ छायांचपूरणींवामाममांचंद्रकलाइमाः। स्वकीयाध्यानगेताश्च क्रमात्संपूजयेत्सुधीः॥१॥" शारदातिलकादि तंत्र में शंखस्थापनप्रकरण में प्रसिद्ध है। रघुकुलमंडन रामलला को अमृत कला कहिबे को यह भाव कि वंश बिना मृतक सरीर सम जो रघुकुल भया रहा ताको जिआय लिए। दसरथनंदन को मानदा कला कहिबे को यह भाव कि जो जगत के कारण सो पुत्र भए एहि ते अधिक कवन सन्मान देहिंगे। महिमा अवधि राम पितु माता। औ। विधि हरिहर सुरपति दिसिनाथा। बरनहिं सब दसरथ गुनगाथा॥ मातुसुकृतफल रामलला को तुष्टिकला कहिबे भाव कि अपने सुकृत को फल पाए तोष होत है सो सुकृत फल को पाय संतुष्ट भई। "आनंद अवनिराजरवनी सब मागहुं नी"। परिजन रंजन को पुष्टिकला कहिबे को यह भाव कि के जन को पोषण करि रंजित किए कछुक काल बीते सब बड़े भए परिजन सुखदाई। पुरजन सुरमणि रामलला को प्रीति-

कला कहिवे को यह भाव कि प्रीति तें चिंतामणि सम सब कों मनोवांछित फल देत हैं। प्रणवों पुर नर नारि बहोरी। ममता जिन पर प्रभुहि न थोरी ॥ सोभासागर को रति अर्थात् रमणोद्दीपनकारिणी कला कहिवे को यह भाव कि बालस्वरूपों में सखी देखि कै ठगि गई। अवलोकि हौं सोचविमोचन कों ठगि सी रही जो न ठगे धिग से। सहज सोहावन रामलला को लज्जा अर्थात् लज्जादायिनी कला कहिवे को यह भाव कि जेतने सोहावने रहें सब लजाय गए। भुजनि भुजग सरोज नयननि बदन बिधु जितयौ लरनि ॥ औ ॥ लाजहिं तन शोभा निरपि, कोटि कोटि शत काम। भक्त कल्पतरु को श्री कला कहिवे को यह भाव कि भक्तन को सब प्रकार की श्री देत हैं। राम सदा सेवक रुचि राखी ॥ औ ॥ राखत भले भाव भक्तन को कछुक रीति पारथहिं जनाई। नाम कामधेनु है जाको तेहि रामलला को स्वधा पितृगणतृप्तिजनिका कला कहिवे को यह भाव कि संतान के नाम की बड़ाई सुनि के पितर लोग तृप्ति होत हैं। रामरूप गुन शील सुभाऊ। प्रमुदित होंहिं देपि सुनि राऊ ॥ जगमंगल रामलला को रात्रिकला अर्थात् विश्रामदायिनी कहिवे को यह भाव कि रात्रिउ विश्राम हेतु है औ एऊ हैं। सो सुपधाम राम अस नामा। अपिललोक दायक विश्रामा ॥ भुवनविभूपन रामलला को ज्योत्स्ना कला कहिवे को यह भाव कि भुवन को विभूपन ज्योत्स्ना कला है एऊ हैं। सहज प्रकास रूप भगवाना। औ। पुरुप प्रसिद्ध प्रकाश निधि। भवभयभंजन रामलला को हंस कहिए सूर्य सो रहैं जेहि में सो हंसवंति कला ताको कहिवे को यह भाव कि सूर्य तमनाशक हैं औ एऊ अज्ञानतमनाशक हैं वा हंस जो सूर्य ताको कला चंद्रमा में रहत औ एऊ सूर्यवंशी हैं ॥ राम कस न तुम्ह कहहु अस, हंसवंस अवतंस। रिपुगनगंजन रामलला को छायाकला कहिवे को यह भाव कि छाया ताप हरत औ एऊ रिपुगण के मारि भक्तन को ताप हरत। शीतल सुपद छाह जेहि कर की मेटत पाप ताप माया। अरिकरि केहरि राम लला को पूरणी कला कहिवे को यह भाव कि रावणादि शत्रुन को मारि जगत् के सुख ते परि पूर्ण किए। जय रघुनाथ

समर रिपु जीते । सुर नर मुनि सब के भय बीते ॥ सुरसुखदायक रामलला को वामा कहैं सुंदरी कला कहिवे को यह भाव कि चंद्रमा की सुंदरी कला सुखदायक है एऊ देवतन के सुखदायक है। तुलसी को जीवन राम लला को अमा अर्थात् परिमाणरहित कला कहिवे को यह भाव कि परिमाण रहित कला जीवनदात्री औ एऊ जीवनदाता॥ प्रान प्रान के जीव के जिव सुप के सुप राम । चंद्रमा की चौंदहकला प्रगट है अमावस परिवा की दुइ कला गुप्त है तेहि ते गोसाईं जी चौंदह तुक से बाललीला प्रगट राखे दुइ तुक में गुप्त किए अर्थात् पहिले औ अंत में ॥ १६ ॥ २२ ॥

राग कान्हरा—पालने रघुपतिहि झुलावै । लैलै नाम सप्रेम सरस स्वर कौसल्या कल कीरति गावै ॥१॥ केकिकंठ दुति स्यामवरन वपु बाल बिभूषन बिरचि बनाए । अलकैं कुटिल ललित लटकन भ्रू नीलनलिन दोउ नयन सुहाए ॥२॥ सिसु सुभाय सोहत जब कर गहि बदन निकट पदपल्लव ल्याए । मनहुं सुभग जुग भुजग जलज भरि लेत सुधा ससि सौं सचु पाए ॥ ३ ॥ उपर अनूप बिलोकि पिलौना किलकत पुनि २ पानि पसारत । मनहु उभय अंभोज अरुन सो बिधु भय बिनय करत अति भारत ॥४॥ तुलसिदास बहु बास बिबस अलि गुंजत सो छबि नहिं जात बखानी । मनहु सकल श्रुति ऋचा मधुप छबिसद सुजस बरनत बरबानी ॥५॥२३॥

पालना में रघुपति को झुलावति हैं, कौशल्याजू प्रेम सहित मधुरस्वर से नाम ले ले के अर्थात् बना बना तोता छगन मगन आदि कहि कहि के सुंदर कीर्ति गावति हैं ॥ १ ॥ मोर के कंठ की द्युति समान श्याम वरन शरीर है तामें बाल समय के विभूषण विशेष रचि के बनाये भए हैं टेढ़े अलक हैं भौंह पर सुंदर लटकन हैं औ नील कमल सम सुंदर दोऊ नयन हैं। "अलकाभ्रूकुंतला इलमरः" टेढ़ बार को अलक कहत हैं॥

बाल सुभाव ते जब कर तें गहि कै मुख के निकट पल्लव इव अर्थात् पल्लवसमकोमल औ लाल पद को ले आवत भए तब अस सोहत मनो सुंदर दुइ सर्प सचुपाय कहै आनंदित चंद्रमा से कमल से भरि के सुधा लेन हैं इहां दोऊ हाथ सर्प हैं, पद कमल हैं, मुख चंद्रमा है, छवि सुधा है ॥ ३ ॥ ऊपर उपमा सहित खेलौना देखि कै किलकारी मारत औ पुनि पुनि हाथ पसारत हैं मानो दुइ कमल चंद्रमा के भय से अति आर्त सूर्य से विनय करत हैं। इहां खेलौना सूर्य हैं लाल रंग से औ हाथ दोऊ कमल हैं औ पुनि पुनि पसारना आर्तता है ॥ ४ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि बहु सुगंध ते विवस जो भ्रमर गुंजत है सो छवि बखानी नहीं जाति है मानों सकल वेदन की ऋचा भ्रमर हैं के श्रुति बानी ते उज्ज्वल सुयश रघुनाथ को बरनत हैं ॥ ४ ॥ २३ ॥

भूलत राम पालने सोहैं भूरि भाग जननी जन जोहैं। अधर पानि पद लोहित लोने सर सिंगार भव सारस सोने ॥३॥ किलकत निरपि बिलोल पिलौना मनहुं विनोद लरत छवि छौना ॥ ४ ॥ रंजितअंजन कंजबिलोचन भ्राजत भाल तिलक गोरोचन ॥ ५ ॥ लसै मसिबिंदु वदन विधु नीको चितवत चित चकोर तुलसी को ॥ ६॥२४ ॥

जोहैं देखत हैं ॥ १ ॥ तन कोमल के सुन्दर श्यामता में बाल समय के विभूषणन की परिछाही झलकति है ॥ २ ॥ ओठ हाथ पद सुंदर लाल हैं मानो शृंगार रूप तडाग में लाल रंग के कमलैं उत्पन्न भए हैं इहां उत्प्रेक्षा है इहां सर शृंगार से श्याम शरीर लेना काहे से कि शृंगार रस भी श्याम है ॥३॥ खेलौना देखि चंचल है किलकत हैं मानो खेलवार में छवि के बालक लरत हैं। इहां हाथ पर हाथ पांव पर पांव का फेकना सो लरना है कमलवत् नेत्र जो अंजन से रंजित हैं औ भाल में गोरोचन कै तिलक शोभत है ॥५॥ सुंदर विधु वदन में डिठौना लसत है तेहि मुखचंद्र को चित रूप चकोर तुलसी को चितवत ॥६॥२४॥

रागकल्यान—राजत सिसुरूप राम सकलगुननिकाय

धाम कौतुकी कृपाल ब्रह्म जानु पानिचारो। नीलकंज जलद पुंज मरकतमनि सदृश स्याम कामकोटि सोभा अंग अंग ऊपर वारी ॥ १ ॥ कटक मनि रत्नपचित रचित इन्द्र मंदिराभ इंदिरानिवास सदन विधि रच्यो सँवारी। विहरत नृपअजिर अनुजसहित बालकेलिकुसल नील जलजलोचन हरि मोचन भय भारी ॥ २ ॥ अरुन चरन अंकुस ध्वज कंज कुलिस चिन्ह रुचिर भ्राजत अति नूपुर वर मधुर मुखकारो। किंकिनी विचित्र जाल कंबु कंठ ललित माल उर विसाल कैहरिनपकंकन कर धारी ॥ ३ ॥ चारु चिबुक नासिका कपोल भालतिलक भृकुटि श्रवन अधर सुंदर द्विज छबि अनूप न्यारो। मनहु अरुन कंजकोस मंजुल जुग पांति प्रसव कुंदकली जुगुल जुगल परम शुभ वारी ॥४॥ चिकुन चिकुरावली मनो षडंघ्रिमंडली बनी बिसेषि गुंजत जनु बालक किलकारो। एकटक प्रतिबिंब निरषि पुलकत हरि हरषि हरषि लै उछंग जननी रसभंग मन विचारी ॥५॥ जा कहं सनकादि संभु नारदादि शुक मुनिंद्र करत विविधि जोग काम क्रोध लोभ जारी। दसरथ गृह सोइ उदार भंजन संसार भार लीलाअवतार तुलसिदासचास हारी ॥ ६॥२५ ॥

सकल गुणसमूह के धाम कृपाल ब्रह्म कौतुकी शिशुरूप राम वहां इहां है शोभत है। रूप पद से यह जनाए कि रूप मात्र से शिशु सकल गुणनिधान से वात्सल्यादि सकल गुण संपन्न जनाए। अर्थात् केवल निर्गुण नहीं, कौतुकी ते स्वतंत्र जनाए। कृपाल ते यह जनाए कि हैं तो ब्रह्म पै लोगन के सुख देवे हेतु घुटुरुअन तें चलत हैं, नील कंज जलद पुंज मरकत मणि सदृश स्याम, इहां तीन उपमा दिए ताते मालोपमा अलंकार है वा कमलवत् कोमल औ मेघवत् गंभीर मरकतवत्।

औ श्यामता नीलिउ को, अपर सुगम ॥ १ ॥ जेहि नृप को सदन सुवर्ण मणि रत्न से जड़ित औ रचित इंद्र मंदिर के सदृश लक्ष्मी को वासस्थान विधाता ने संवारि के रच्यौ तेहि नृप के आंगन में अनुज सहित हरि विहरत हैं सो कैसे हैं बालकेलि में कुशल हैं औ नीलकमल सम लोचन हैं जिन को औ भारी भय के नाशनिहारे हैं, मणि रत्न का भेद मणि नागादि ते होत है यों रत्न पर्वत ते, वह रत्न शब्द श्रेष्ठ वाचक है "रत्नं स्वजातिश्रेष्ठऽपि इत्यमरः" अर्थात् श्रेष्ठ मणि ॥२॥ लाल चरण हैं तामें अंकुश ध्वज कमल बज्र के सुंदर चिन्ह हैं औ मधुर शब्द करनिहारा श्रेष्ठ नूपुर अतिही शोभत हैं औ कटि में विचित्र किंकिनिन को जाल कहैं समूह औ शंखवत्कंठ वा "रेखात्रयान्विता ग्रीवा कंबुग्रीवेति कथ्यते"। औ विशाल उर हैं तामें सुंदर माला औ बघनहा है हाथ में कंकन धारण किए हैं ॥ ३ ॥ ठोढी नासिका कपोल भालतिलक भौंह कान औ ओष्ठ सुंदर हैं औ सुंदर उपमा रहित दांतन की छवि न्यारी है मानो लाल कमल के कोश में सुंदर दुइ पांति की प्रसव कहैं उत्पत्ति है तिन में परम शुभ्र वारी कहैं छोटी कुंदकली दुइ दुइ हैं। इहां लाल कमल कै कोश मुख है तामें ऊपर नीचे के दंतस्थान अर्थात् दाढ़ ते युग पांति हैं ता में छोटी छोटी दुइ दुइ जो दंतुली तेई कुंदकली हैं ॥४॥ चिकन जे बालन की पांति हैं ते मानो विशेष बनी भई भंवरन की मंडली है औ जो बालक की किलकारी है सोई मानो तिन का शब्द है एकटक ते प्रतिबिंब को देखि हरषि हरषि कै पुलकत जो हरि तिन को माता रसभंग जिय में विचारि कै गोद में लै लिए भाव अबहीं तो हरषत हैं अस न होय कि हरि उठैं वा हरि तो हरषि हरषि पुलकत हैं पर माता ने डर ते पुलकना विचारा ताते उठाय लिए ॥ ५ ॥ लीला अवतार लीला के हेतु अवतार है जेहि को ॥ ६ ॥ २५ ॥

राग कान्हरा—आंगन फिरत ठुठुरुवनि धाए। नील-जलद तनु स्याम राम सिसु जननि निरखि सुप निकट बुलाए ॥१॥ बंधुक सुमन अरुन पद पंकज अंकुश प्रमुख चिन्ह बनि आए। नूपुर जनु मुनिवर कलहंसनि रचे नीड दै बांध

बसाए ॥२॥ कटि मेखल बर हार ग्रीव दर रुचिर बाहु भूषन पहिराए। उर श्रीवत्स मनोहर हरिनख हेम मध्य मनिगन बहु लाए ॥३॥ सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका श्रवन कपोल मोहि अति भाए। भ्रू सुंदर करुनारसपूरन लोचन मनहुं जुगल जलजाए ॥४॥ भाल बिसाल ललित लटकन बर बाल दसा के चिकुर सोहाए। मनो दोउ गुरु सनि कुज आगे करि ससिहि मिलन तम के गन आए ॥५॥ उपमा एक अभूत भई तब जब जननी पट पीत ओढाए। नील जलद पर उडगन निरषत तजि सुभाव मानो तड़ित छपाए ॥६॥ अंग अंग पर मारनिकर मिलि छबिसमूह ले ले जनु छाए। तुलसिदास रघुनाथरूप गुन तौ कहौ जौ बिधि होहि बनाए ॥ ७॥२६ ॥

घुटुरुवनि बकैयां ॥१॥ दुपहरिआ के फूल सम लालचरन है तामें कमल अंकुश आदि चिन्ह बने हैं औ नूपुर है मानो रघुवर ने नूपुर रूप खोता रचे तेहि में मुनिवर रूप कलहंसनि कों बांह दै बसाए। भाव इहां कोई भय नहीं होयगो इहां बसना ध्यान करना है अंकुशादि चिन्ह यथा महारामायणे। रेखोर्द्धावर्त्तते मध्ये दक्षिणस्यांघ्रिपंकजे॥ पादादौ स्वस्तिकंज्ञेयमष्टकोणस्तथैवच ॥१॥ श्रियंहलंचमुशलंसर्पोवाणांवरेतथा। पद्ममष्टदलंचैवस्यंदनंवज्रमुच्यते ॥२॥ यवोंगुष्ठे तथाप्येतारेखोर्द्धावामतःस्थिताः। रेखोर्द्धादक्षिणेचैवस्वस्तिकाधोब्जपादपः ॥ ३ ॥ अंकुशंचध्वजंचैवमुकुटंचक्रमेवच। सिंहासनंमृत्युदंडंचामरंछत्रमुद्यतं ॥ ४ ॥ मृचिन्हंयवमालेमेचतुर्विंशतिलक्षणाः। क्रमेणैवमवर्तन्तेश्रीरामस्यांघ्रिदक्षिणे ५ ऊर्द्धरेखायथासव्येऽपसव्येसरयूतथागोप्यदंपादमूलेचतदधःसागरांवरा ॥६॥ कुंभंचैवपताकांचजम्बूफलमथोद्यतं। अर्द्धचंद्रोदरश्चैवषट्कोणंचात्रिकोणकं ॥७॥ गदातथाचजीवात्माबिंदुरंगुष्ठमध्यगः। सरय्वादक्षिणेकोणेलक्षणंत्रेयमुत्तमं ॥ ८ ॥ गोपदाधस्तथाशक्तिःसुधाकुंडमथोद्यतं। त्रिवलीकामपत्रं-

च पूर्णः सिंधुसुतस्तथा ॥९॥ वीणा वंसी धनुस्तूणोमरालश्चांद्रिकेति च। चतुर्विंशतिरामस्य चरणेवामके स्थिता ॥१०॥ चतुर्विंशतिरामस्येति छान्दसोदीर्घाभावः स्थितेति स्थितानीत्यर्थः। सुपांसुलुगितिसुपोडादेशः परमेव्योमन्सर्वाभूतानीत्यादिवत्। तानि सर्वाणि रामस्य पादे तिष्ठंति वामके। यानि चिन्हानि जानक्यादक्षिणे चरणे स्थिता ॥११॥ यानि चिन्हानि रामस्य चरणे दक्षिणे स्थिता। तानि सर्वाणि जानक्याः पादे तिष्ठंति वामके ॥१२॥ ऊर्द्धरेखारुणा ज्ञेया स्वस्तिकंपीतमुच्यते। सितारुणंचाष्टकोणंश्रीश्च बालार्कसन्निभा ॥ १३ ॥ हलंच मुशलंचैव श्वेतधूम्रमितिस्मृतं। सर्पोऽसितस्तथा बाणः श्वेतपीतारुणोहरित् ॥ १४ ॥ नभोवदंवरं ज्ञेयमरुणं पंकजंस्मृ-

। रथंविचित्रवर्णंच युक्तं वेदहयैः सितैः ॥ १५ ॥ वज्रंतडिन्निभंज्ञेयं स्वेतरक्तं तथायवं। कल्पवृक्षं हरिद्वर्णमंकुशं श्याममुच्यते ॥ १६ ॥ लोहिता च ध्वजा तस्यां चित्रवर्णाभिधीयते। सुवर्णं मुकुटं चक्रंरत्नसिंहासनाभकं ॥ १७ ॥ कांस्यवद्यमदंडं स्याच्चामरं धवलंमहत्। छत्रंचिन्हं शिवंशुक्लं नृचिन्हं सितलोहितम् ॥ १८ ॥ बाणवज्रेच माला च वामे च सरयू सिता। गोप्पदश्च सितारक्तः पीतरक्तसिता मही ॥ १९ ॥ स्वर्णवर्णोऽसितं किंचित्कुंभोऽप्येवं प्रवर्तते। चित्रवर्णा पताकाच श्यामंजंबूफलंतथा ॥ २० ॥ धवलश्चार्द्धचंद्रोऽतिरक्तंदंपत्सितोदरः। पद्मकोणंच महास्वच्छं त्रिकोणोऽरुणएवच ॥२१॥ श्यामला तु गदा ज्ञेया जीवात्मा दीप्तिरूपकः। विंदुःपीतःतथा शक्तीरक्तस्यामसिताऽपिच ॥ २२ ॥ सितरक्तं सुधाकुण्डं त्रिवलीच त्रिवेणीव। वर्तते रौप्यवन्मीनोधवलःपूर्णसिंधुजः ॥ २३ । पीतरक्तसिता वीणा वेणुश्चित्रविचित्रकः। हरिन्पीतोरुणश्चैव त्रिविधंधनुरुच्यते ॥ २४ ॥ वेणुवद्वर्तते तूणोहंसईषत्सितारुण। सितपीतारुणा ज्योत्स्ना सर्वतोरंगमद्भुतं ॥ २५॥२। कटि में किंकिनी कंठु कंठ में सुंदर हार औ सुंदर बाहु में भूषण पहिराए हैं उर में मनोहर श्रीवत्स औ षट् मणिगणयुक्त सुवर्न के मध्य में जो दामिनस सो उर में है "पीतं प्रदक्षिणावर्तं विचित्रंरोमराजिकं। विष्णोर्वक्षसियद्दीप्तं श्रीवत्संतन्त्रकीर्तितम्" ॥३॥ करुणा रस पूर्न जो लोचन है सो मानो दुइ कमल है॥४॥ सुंदर विशाल भाल है तामें सुंदर लटकन औ बाल दसा के सुंदर बार हैं मानो दोऊ गुरु अर्थात् बृहस्पति शुक्र औ शनैश्चर मंगल आगे करि

बसाए ॥२॥ कटि मेखल बर हार ग्रीव दर रुचिर बाहु भूषन पहिराए। उर श्रीवत्स मनोहर हरिनख हेम मध्य मनिगन बहु लाए ॥३॥ सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका श्रवन कपोल मोहि अति भाए। भ्रू सुंदर करुनारसपूरन लोचन मनहुं जुगल जलजाए ॥४॥ भाल बिसाल ललित लटकन बर बाल दसा के चिकुर सोहाए। मनो दोउ गुरु सनि कुज आगे करि ससिहि मिलन तम के गन आए ॥५॥ उपमा एक अभूत भई तब जब जननी पट पीत ओढाए। नील जलद पर उडगन निरपत तजि सुभाव मानो तड़ित छपाए ॥६॥ अंग अंग पर मारनिकर मिलि छबिसमूह ले ले जनु छाए। तुलसिदास रघुनाथरूप गुन तौ कहौ जौ बिधि होहि बनाए ॥ ७॥२६ ॥

घुटुरुवनि चलैयां ॥१॥ दुपहरिआ के फूल सम लालचरन है तामें कमल अंकुश आदि चिन्ह बने हैं औ नूपुर है मानो रघुवर ने नूपुर रूप खोता रचे तेहि में मुनिवर रूप कलहंसनि कों बांह दै बसाए। भाव इहां कोई भय नहीं होयगो इहां बसना ध्यान करना है अंकुशादि चिन्ह यथा महारामायणे। रेखोर्द्धावर्त्तते मध्ये दक्षिणस्यांघ्रिपंकजे॥ पादादौ स्वस्तिकंज्ञेयमष्टकोणस्तथैवच ॥१॥ श्रियंहलंचमुशलंसर्पोबाणांवरेतथा। पद्ममष्टदलंचैवस्यंदनंवज्रमुच्यते ॥२॥ यवोंगुष्ठे तथाप्येतारेखोर्द्धावामतःस्थिताः। रेखोर्द्धादक्षिणेचैवस्वस्तिकाधोन्जपादपः ॥ ३ ॥ अंकुशंचध्वजंचैवमुकुटंचक्रमेवच। सिंहासनंमृत्युदंडंचामरंछत्रमुद्यतं ॥ ४ ॥ मृचिन्हंयवमालेमेचतुर्विंशतिलक्षणाः। क्रमेणवमवर्तन्तेश्रीरामस्यांघ्रिदक्षिणे ५ ऊर्द्धरेखायथासव्येऽपसव्येसरयूतथागोप्यदंपादमूलेचतदधःसागरांवरा ॥६॥ कुंभंचैवपताकांचजम्बूफलमथोयतं। अर्द्धचंद्रांदरथैवषट्कोणंचात्रिकोणकं ॥७॥ गदातथाचजीवात्माबिंदुरंगुष्ठमध्यगः। सरस्वादक्षिणेकोणेलक्षणंज्ञेयमुत्तमं ॥ ८ ॥ गोपदाधस्तथाशक्तिःसुधाकुंडमथोयतं। त्रिवलीकामपत्रं-

रघुवर की बाललवि वर्नन करि कहत हौं सो छवि कैसी है कि सब सुख की मर्यादा है औ कोटि काम की शोभा हरनिहारी है ॥ १ ॥ मानो अरुनता सूर्य को छोड़ि के चरण कमलन में आय बसी औ सुंदर नूपुर औ किंकिनी की धुनगुन करनि मन हरति है ॥ २ ॥ सुंदर श्याम कोमल तनु के योग्य भूषणन की भरनि है अर्थात् भरत है मानो सुंदर शृंगार रूप बाल तरु अद्भुत फरनि से फरयो है इहां । शृंगार रूप छोटा तरु रघुनाथ हैं औ भूषण जे शरीर में भरे हैं ते फल हैं अनुहरति कहिबे को यह भाव कि श्याम तन में जो रंग शोभा पावै । शृंगार तरु कहिबे को यह भाव कि शृंगार का रंग भी श्याम है । अद्भुत कहिबे को यह भाव कि छोटा तरु फरत नाहीं कदापि फरत भी है तौ अनेक रंग का फल नहीं ॥ ३ ॥ भुजों ने सर्प को औ नैनों ने कमल को औ मुख ने चंद्रमा को समर में जीत्यो तें सब बिल, जल औ आकाश में रहे अर्थात् बिल में सर्प औ जल में कमल, आकाश में चंद्रमा रहे और अपर जेती उपमा ते डरनि से छपि रहीं भाव हमारी भी न दुर्दशा होय ॥ ४ ॥ घुटुरुअनि चलनि से मनि आंगन में हाथ को प्रतिबिंब सोहत है सो प्रतिबिंब नहीं है कमल को संपुट है तेहि में सुंदर छवि भरि भरि के मानो धरनी अपने उर में धरति है । इहां चाल प्रति जो परिछाहीं मेटात आवत है सोई उर में धरना है ॥ ५ ॥ श्री कौशल्या जू पुत्र को देखि कै अपने पुन्य फल को अनुभव करति हैं औ तेहि समय की किलकनि औ लरखरनि प्रभु की तुलसी के हृदय में बसति है ॥ ६ ॥२७॥

नेकु विलोकु धौ रघुवरनि । चारि फल चिपुरारि तोको दिये कर नृप घरनि ॥१॥ बाल भूषन बसन तनु सुंदर रुचिर रज भरनि । परस्पर पेलनि अजिर उठि चलनि गिरि गिरि परनि ॥ २ ॥ झुकनि झांकनि छांह सों किलकनि नटनि हठि लरनि । तोतरी बोलनि विलोकनि मोहनी मन हरनि ॥ ३ ॥ सपि वचन सुनि कौसिला जपि सुढर पासे ढरनि । लेत भरि भरि अंक कैतति पैत जनु दुहुक रनि ॥४॥

कै चंद्रमा के मिलवे को तम के समूह आए हैं इहां पोखराज हीरा नीलम मानिक के जो चारो लटकन हैं सोई बृहस्पति शुक्र शनि मंगल हैं मुख चंद्र है बिखरे बार जे मुख पर परे हैं ते तमगन हैं आगे करि आइवे को यह भाव कि अंधकार से चंद्रमा से बैर है ताते चंद्रमा के मान्य वर्ग कों आगे करि लिये अर्थात् बृहस्पति गुरु हैं शुक्र उपकारी हैं जब गुरुपत्नी से चंद्रमा ने कुचाल किया रहा तब शुक्र सहाय किए रहे भारत में ख्यात है औ शनि ग्रहराज जे सूर्य तिन के पुत्र हैं ताते एऊ मान्य हैं औ मंगल मित्र हैं ॥ ५ ॥ जब जननी पट पीत ओढ़ाए तब एक अद्भुत उपमा भई अब सो उपमा कहत हैं कि मानो श्याम मेघ पर तारागण को देखत मात्र चंचलता सुभाव छोड़ि कै बिजुरी ने छिपाय लिए अर्थात् तारागण को भाव तारागण की अयोग्यत करना देखिवे ते बिजुरी ने भी अयोग्यता किया ॥ ६ ॥ मानो अनेक काम मिलि कै छवि समूह को लैलै कै अंग अंग पर छावत भए गोसाईं जी कहत हैं कि रूप गुण रघुनाथ को तौ कहौं जौं ब्रह्मा के बनाए होंहिं वा जौं रघुनाथ ब्रह्मा के बनाए होंहिं तौ रूप गुण कहौं ॥ ७॥२६ ॥

राग केदारा । रघुवर बालछवि कहौ बरनि । सकल सुष की सीव कोटिमनोजआभाहरनि ॥ १ ॥ बसी मानहु चरन-कमलनि अरुनता तजि तरनि । रुचिर नूपुर किंकिनी मनु हरनि रुनझुन करनि ॥२॥ मंजु गोचक मृदुल तनु अनुहरति भूषन भरनि । जनु सुभग सिंगार सिसुतन फल्यौ है अद्भुत फरनि ॥३॥ भुजनि भुजग सरोज नयननि वदन विधु जित्यौ लरनि । रहै कुहरनि सलिल नभ उपमा अपर टुरि डरनि॥४॥ लसत कर प्रतिबिंब मनि आंगन घुटुरुअनि चरनि । जलज संपुट सुकवि भरि भरि धरति जनु उर धरनि ॥५॥ पुण्यफल अनुभवति सुतहि बिलोकि दसरथघरनि । बसत तुलसी हृदय प्रभु किलकनि ललित लरपरनि ॥ ६॥२७ ॥

रघुवर की बालछवि वर्नन करि कहत हौं सो छवि कैसी है कि सब सुख की मर्यादा है औ कोटि काम की शोभा हरनिहारी है ॥ १ ॥ मानो अरुनता सूर्य को छोड़ि कै चरण कमलन में आय बसी औ सुंदर नूपुर औ किंकिनी की रुनझुन करनि मन हरति है ॥ २ ॥ सुंदर श्याम कोमल तनु के योग्य भूषणन की भरनि है अर्थात् भराव है मानो सुंदर शृंगार रूप बाल तरु अद्भुत फरनि से फरयौ है इहां । शृंगार रूप छोटा तरु रघुनाथ हैं औ भूषण जे शरीर में भरे हैं ते फल हैं अनुहरति कहिवे को यह भाव कि श्याम तन में जो रंग शोभा पावै । शृंगार तरु कहिवे को यह भाव कि शृंगार का रंग भी श्याम है । अद्भुत कहिवे को यह भाव कि छोटा तरु फरत नाहीं कदापि फरत भी है तौ अनेक रंग का फल नहीं ॥ ३ ॥ भुजों ने सर्प को औ नैनों ने कमल को औ मुख ने चंद्रमा को समर में जीत्यौ तें सब बिल, जल औ आकाश में रहे अर्थात् बिल में सर्प औ जल में कमल, आकाश में चंद्रमा रहे और अपर जेती उपमा ते डरनि से छपि रहीं भाव हमारी भी न दुर्दशा होय ॥ ४ ॥ घुटुरुअनि चलनि मे मनि आंगन में हाथ को प्रतिबिंब सोहत है सो प्रतिबिंब नहीं है कमल को संपुट है तेहि में सुंदर छवि भरि भरि के मानो धरनी अपने उर में धरति है । इहां चाल प्रति जो परिछाहीं मेटात आवत है सोई उर में धरना है ॥ ५ ॥ श्री कौशल्या जू पुत्र को देखि कै अपने पुन्य फल को अनुभव करति हैं औ तेहि समय की किल-कनि औ लरखरनि प्रभु की तुलसी के हृदय में बसति है ॥ ६ ॥२७॥

नेकु बिलोकु धौं रघुवरनि । चारि फल त्रिपुरारि तोको दिये कर नृप धरनि ॥१॥ बाल भूषन बसन तनु सुंदर रुचिर रज भरनि । परस्पर पेलनि अजिर उठि चलनि गिरि गिरि परनि ॥ २ ॥ झुकनि झांकनि छांह सों किलकनि नटनि हठि लरनि । तोतरी बोलनि बिलोकनि मोहनी मन हरनि ॥ ३ ॥ सपि बचन सुनि कौसिला सपि सुटर पासि टरनि । लेत भरि भरि अंक कैतति पेत जनु टुकरनि ॥४॥

चरित निरखत विबुध तुलसी ओट दे जल धरनि । चहत सुर सुरपति भयो सुरपति भयो चह तरनि ॥ ५॥२८ ॥

कौशल्या जू को और काम में लगी देखि सखी कहति है हे नृप-धरनि चारो भैअन को नेकु देखु तौ मानो त्रिपुरारि ने चारो फल तोको हाथ पर दिए हैं इहां लुप्तोत्प्रेक्षा है ॥ १ ॥ अजिर आंगन-॥ २॥ नटनि नाचनि ॥ ३ ॥ सखी के वचन सुनि कै औ सुंदर पासे की ढरनि लखि के अर्थात् सुकृत को फल जानि कै कौशल्या जू चारो भैअन कों गोदी में उठाय उठाय लेत हैं मानो उठाय नहीं लेत हैं पैत कहँ दाव ताको दोऊ हाथ से बटोरत हैं। भाव जीत कै जब पासा देखत है तब खेलारी जो दांव पर द्रव्य धरा रहत है ताको दूनो हाथ से बटोरि लेत है ॥ ४ ॥ देवता इंद्र भयो चाहत है औ इन्द्र सूर्य भयो चाहत हैं। भाव देवता हजार नेत्र तें देखिबे हेतु इन्द्र भयो चाहत हैं औ इन्द्र विश्व भरि के नेत्र तें देखिबे हेतु सूर्य भयो चाहत हैं अर्थात् सूर्य सब के नेत्र मे रहत हैं ॥ ५॥२८ ॥

रागजैतश्री—भूमितल भूप के बडे भाग । राम लषन रिपु-दमन भरत सिमु निरषत अति अनुराग ॥१॥ बाल विभूषन लसत पाइ मृदु मंजुल अंग विभाग । दसरथ सुकृत मनोहर विरवनि रूप फरइ जनु लाग ॥ २ ॥ राज मराल विराजत विहरत जो हरहृदय तडाग । ते नृपअजिर जानु कर धायन धरन चटक चल काग ॥३॥ सिव सिहात सराहत मुनि मन कहँ सुर किन्नर नाग । हैं बस विहग विलोकिये बालक बसि पुर उपवन बाग ॥४॥ परिजन महित राय रानिन्ह कियो मज्जन प्रेम प्रयाग । तुलसी फल चारो ताके मनि मरकत पंकज राग ॥ ५॥२९ ॥

सुंदर कोदण्ड अंगन के विभाग पाइ के बाल समय को विभूषण

शोभत हैं मानों श्री दशरथ महाराज के सुकृत रूपी मनोहर बिरवानि में रूप रूपी करहा लगा। बिरवा बाल तरु को कहत हैं ॥२॥ जे राज मराल हर के हृदय रूपी तडाग में बिहरत बिराजत ते दशरथ महाराज के आंगन में चंचल काग के धरन को धकैयां ते शीघ्र धावत हैं। इहां चंचल काग भुशुंडी जी हैं " किलकल मोहि धरन जब धावहिं। चलों भागि तब पूप देपावहिं" वा चटक गंवरा औ चंचल काग के धरन को धावत हैं ॥ ३ ॥ सिद्धि सिहात हैं, भाव अस भाग हमारो न भयो औ मुनिगन सराहत हैं, भाव कहत हैं कि महाराज सब ते धन्य हैं औ सुर किन्नर नाग कहत हैं बरु पुर के उपवन और बाग में बिहंग हैं बसि बालकानि को बिलोकिए। पुर के समीप सो उपवन दूरि सो बाग ॥४॥ परिवार सहित राजा औ रानिन्ह ने प्रेमरूपी प्रयाग में मज्जन कियो तेहि मज्जन के फल चारिउ बालक हैं। मरकत मणि औ पद्मराग मणि के सम अर्थात् नीलमणि सम श्री राम जू औ भरत जू, पंकज राग सम लक्ष्मण जू औ शत्रुघ्न जू हैं ॥ ५॥२९ ॥

राग असावरी—छगन मगन आंगन खेलत चारु चारयो भाई। सानुज भरत लाल लपन राम लोने लोने लरिका लषि मुदित मातु समुदाई ॥१॥ बाल बसन भूषन धरे नष सिष छवि छाई। नील पीत मनसिज सरसिज मंजुल मालनि मानो इन्ह देहनि ते दुति पाई ॥ २ ॥ ठुमुकि ठुमुकि पग धरनि नटनि लरपरनि सोहाई। भुजनि मिलनि रूठनि टूठनि किलकनि अवलोकनि बोलनि बरनि न जाई ॥ ३ ॥ जननि सकल चहुं ओर आल बाल मनि अंगनाई। दसरथ सुकृत बिबुध बिरवा बिलसत बिलोकि जनु बिधि बर नारि बनाई ॥ ४ ॥ हर बिरंचि हरि हेरि राम प्रेम परवसताई। सुष समाज रघुराज के बरनत बिमुध मन सुरनि सुमन झरिलाई ॥ ५ ॥ सुमिरत श्रीरघुबरनि की लीला लरिकाई।

तुलसिदास अनुराग अवध आनंद अनुभवत तब को सो अजहु अघाई ॥ ६॥३० ॥

सुगम ॥ १ ॥ काम को नील पीत कमल की मालों ने मानहुं इन देहन ने द्युति पाई है ॥२॥ दृगनि प्रसन्न होनि ॥ ३ ॥ मणि का आंगन नहीं है थाहा है चारों भैया नहीं हैं दशरथ सुकृत के बाल कल्पवृक्ष हैं ताको विलसत देखि कै ब्रह्मा ने माना रूपी श्रेष्ठवारि चारों ओर बनाई हैं वारि संधानि ॥ ४ ॥ शिव ब्रह्मा विष्णु राम की प्रेम ते परवसतनहिं देखि कै दशरथ महाराज के सुख समाज को विशुद्ध मन ते वर्णत हैं औ देवतों ने फूलनि की झरिलाई है ॥ ५ ॥ श्री मान् चारों भैयन की लरिकाई की लीला सुमिरत मात्र तुलसीदास अनुराग रूप अवध में तब के ऐसो आनंद अजहु अघाय कै अनुभव करत हैं ॥ ६ ॥ ३० ॥

राग बिलावल- आंगन पेलत आनदकंदा। रघुकुल कुमुद सुपद चारु चंदा ॥१॥ सानुज भरत लषन संग सोहै। सिसु भूषन भूषित मन मोहै ॥२॥ तनु द्युति मोर चंद जिमि झलकै। मनहुं उमगि अंग अंग छवि छलकै ॥ ३ ॥ कटि किंकिनी पाय पैजन बाजै। पंकज पानि पहुचिया राजै ॥४॥ कठुला कंठ बघनहा नीके। नयन सरोज मयन सरसीके ॥५॥ लटकन लसत ललाट लटूरी। दमकत दैहैदंतुरिआ रूरी ॥६ मुनिमन हरत मंजु मसि बुंदा। ललित बदन वलि बाल मुकुंदा ॥ ७ ॥ कुलही चित्र बिचित्र झँगूली। निरषत मातु मुदित प्रतिफूली ॥ ८ ॥ गहिमनिखंभ डिंभ डगि डोलत। कलबल बचन तोतरे बोलत ॥ ९ ॥ किलकत झुंकि झांकत प्रतिबिंबनि। देत परम सुष पितु अरु अंबनि ॥१०॥ सुमिरत सुषमा हियहुलसी है। गावत प्रेम मगन तुलसी है ॥११॥३१॥

१। २। ३। पंकज पाणि कर कमल ॥ ४ ॥ मानो नेत्र काम के

तड़ाग के कमल हैं वा काम रूप तड़ाग के ॥ ५ ॥ रूरी भली ॥६॥७॥ कुलही टोपी औ झंगुली अंगरखी, मातु बलिहारी जात संते हर्षहिं बलि जो पूर्व पद में है ताको अन्वय इहां करना ॥ ८ ॥ डिंभ बालक ।९।१० सुषमा परमा शोभा ॥ ११ ॥ ३१ ॥

राग कान्हरा—ललित सुतहि लालति सचुपाये। कौसल्या कल कनक अजिर महं सिषवत चलन अंगुरिया लाये ॥ १ ॥ कटि किंकिनी पैजनिया पायेन बाजत रुनझुन मधुर सिंगाए। पहुंची करनि कंठ कठुला बन्यौ केहरिनष मनि जरित जराये ॥ २ ॥ पीत पुनीत बिचित्र झंगुलिया सोहत स्याम सरीर सोहाये। दंतिया द्वै द्वै मनोहर मुपछवि अरुन अधर चित लेत चुराये ॥ ३ ॥ चिबुक कपोल नासिका सुंदर भाल तिलक मसिबिंदु बनाये। राजत नयन मंजु अंजनयुत पंजन कंज मीन मदुनाये ॥ ४ ॥ लटकन चारु भृकुटियां टेढी मेढी सुभग सुदेस सुभाये। किलकि किलकि नाचत चुटकी मुनि डरपति जननि पानि छुटकाये ॥ ५ ॥ गिरि घुटुरुनि टेकि उठि अनुजनि तोतरि बोलत पृप देपाये। बालकेलि अवलोकि मातु सब मुदित मगन आनंद अनमाये ॥ ६ ॥ देपत नभ घन बोट चरित मुनि जोग समाधि बिरति बिसराये। तुलसिदास जे रसिक न येहि रस ते जन जड़ जीवत जग जाये ॥ ७ ॥ ॥ ३२ ॥

लालनिकहँ दुलारति, मचुपाए आनंद पाए, कल सुंदर ॥ १ ॥ मधुर सिंगाए धीरे धीरे चलाए औ इहां जो जड़ाए शब्द है ताको रुदि लक्षणा करि पहिराये अर्थ करना ॥ २ ॥ ३ ॥ खंजन कमल मीनों के मद को नीचे किए अंजन युत सुंदर नयन शोभन हैं ॥ ४ ॥ मेढ़ी आदि को अर्थ पहिले लिखि आए, पानि छुटकाए राय छोड़ाए में जननी डरपति

ह वा आप श्री राम दरपत हैं ॥ ५ ॥ पूप देखाए माता के मालपूआ देखाए से तोतर बोलन अर्थात् तोतराय के मागत बालकेलि देखि के माता सब हर्षित हैं औ अनमाए कहैं जो न अमाय अर्थात् अपार आनंद तेहि में मगन हैं ॥ ६ ॥ विरति वैराग्य जाए वृथा ।७॥३२ ॥

राग ललित । छोटो छोटी गोड़िआ अंगुरिआं छोटी छवीली । नव जोति मोती मानो कमल दलनि पर । ललित आंगन पैले ठुमुकि ठुमुकि चलै झुंझुन झुंझुन पाय पैंजनी मृदु मुपर ॥ १ ॥ किंकिनी कलित कटि झाटक रतन जटि मंजु कर कंजनि पहुचिआ रुचिरतर । पिअरी झीनी झंगुली सांवरे सरीर पुलो बालक दामिनि ओढो मानो वारे वारि-धर ॥२॥ जर वघनहा कंठ कठुला झंगूले केस मेढी लटकन मसिबिंदु मुनिमन हर । अंजन रंजित नैन चित चोरै चित-वनि सुप शोभा परवारों अमित असमसर ॥ ३ ॥ चुटकी बजावति नचावति कौसल्या माता बालकेलि गावति मलहावत प्रेम सुभर । किलकि किलकि हंसै दै दै दंतुरिआं लसै तुलसी कै मन बसै तोतरे बचन बर ॥ ४॥३३ ॥

मृदु मुखर कोमल शब्द से ॥ १ ॥ कटि में किंकिनी शोभित है औ सोना रत्नन से जड़ी अतिशय सुंदर पहुंचियां सुंदर कर कमलनि में हैं औ बालक के सांवरे शरीर में खुले वाली पीत रंग की झीनी झंगुली है मानो बालक नहीं है छोटे मेघ हैं झिंगुली नहीं है दामिनि है ताको ओढ़ि लई है ॥ २ ॥ झंगुले केश बिखरे वार असमर कहैं पंचबाण अर्थात् काम ॥ ३ ॥ प्रेम सुभर प्रेम में सुंदर भरि ॥ ४॥३३ ॥

सादर सुमुखि बिलोकि राम सिसु रूप अनूप भूप लिये कनियां । सुंदर स्याम सरोज बरन तन सब अंग सुभग सकल सुप दनियां ॥ १ ॥ अरुन चरन नप जोति जग-

सगति रुनझुन करति पांय पैंजनियां। कनक रतन मनि जटित रटति कटि किंकिनि कलित पीतपटतनियां ॥ २ ॥ पहुंची करनि पदिक हरि नख उर कठुला कंठ मंजु गजमनियां। रुचिर चिबुक रद अधर मनोहर ललित नासिका लसति नथुनियां ॥ ३ ॥ विकट भृकुटि सुषमानिधि आनन कल कपोल कानन नगफनियां। भाल तिलक मसिबिंदु विराजत सोहत सीस लाल चौतनियां ॥ ४ ॥ मन मोहनी तोतरी बोलनि मुनिमन हरनि हसनि किलकनियां। बाल सुभाय विलोल विलोचन चोरति चितहि चारु चितवनियां ॥ ५ ॥ सुनि कुलवधू झरोषनि झांकति रामचंद्रछवि चंद्र वदनियां। तुलसिदास प्रभु देखि मगन भई प्रेमविवस कछु सुधि न अपनियां ॥ ६॥३४ ॥

हे सुमुखि रूप है अनूप जेहि को तेहि राम शिशु को भूप गोद में लिए हैं ते देखु, सखी को उक्ति है ॥ १ ॥ पीत पटतनियां करिके कलित कहैं युक्त जो कटि तेहि में रतन माणिन से जड़ित जो कनकमयी किंकिनी सो रटति है। पीतपट तनियां कहैं पीत रंग के वस्त्र की कछनी, मारवाड़ में लंगोटी को तनियां कहत हैं पर इहां राजकुमार हैं ताते कछनी जानना ॥ २ ॥ पदिक धुकधुकी गजमनियां गजमुक्ता रद दांत ॥ ३ ॥ विकट टेढ़ कल सुंदर नगफनियां कान को भूषण प्रसिद्ध है जाको काशी आदि देश में दुर्बचा भी कहत हैं, चौतनियां टोपी ॥ ४ ॥ विलोल चंचल ॥ ५ ॥ यह सखी को वचन सुनि चंद्रवदनी कुलवधू झरोखनि तें झांकति हैं। यह कथा सत्योपाख्यान में स्पष्ट है ॥ ६॥३४ ॥

राग विलावल। सोहत सहज सोहाये नयन। पंजन मीन कमल सकुचत तव जब उपमा चाहत कवि दैन ॥१॥ सुंदर सब अंगनि सिसुभूषन राजत जनु सोभा आये लैन।

बडो लाभ लालची लोभवस रहि गए लखि रूपमा बहु मैन ॥२॥ भोर भूप लिए गोद मोद भरे निरखत बदन सुनत कल बैन। बाल रूप अनूप राम छबि निवसति तुलसिदास उर चैन ॥ ३। ३५ ॥

सहज सोहाए अर्थात् अंजनादि बिना ॥ १ ॥ सुंदर सब अंगन में बालभूषण शोभत हैं। मानो भूषण नहीं हैं बहु काम हैं ते शोभा लेवे को आवत भए पर रूपमा रूप बड़ी लाभ लखि लालची काम लोभ वस रहि गए ॥२॥ निवसति उर अंन हृदय रूपी गृह में वसति ॥३।३५

राग विभास—भोरभयो जागहु रघुनंदन गतव्यलीक भगतनि उरचंदन। ससिकर छीन छीन दुतितारे तमचर मुखर सुनहु मेरे प्यारे ॥ १ ॥ विकसत कंजकुमुद बिलपाने। लै पराग रस मधुप उडाने। अनुज सखा सब बोलनि आए। बंदिन्ह अतिपुनीत गुनगाए ॥ २ ॥ मनभावतो करेऊं कीजै। तुलसिदास कहं जूठन दीजै ॥ ३ ॥ ३६ ॥

माता की उक्ति है। हे रघुनंदन भोर भयो जागहु। तुम कैसे हौ कि व्यलीक कहैं कपट तेहि करि रहित जो भक्त तिन के उर के चंदन हौ अर्थात् शीतल करनिहारे ॥ १ ॥ चंद्रमा किरन रहित भए औ तारन की द्युति छीन भई औ मुरगा बोलि रहे हैं तेहि शब्द को सुनहु ॥ २ ॥ कमल फूले औ कोई सम्पुटित भई औ कमलन की धूरी रस लैके भ्रमर उड़त भए ॥ ३।३६ ॥

प्रात भयो तात वलि मातु बिधुवदन पर मदनवारो कोटि उठो प्रानप्यारे। सूत मागध वंदी बदत बिरदावली हारसिसु अनुज प्रियतम निहारे ॥ १ ॥ कोकगत सोक अवलोकि ससि छीन छवि अरुनमय गगन राजत रुचिर तारे। मनहु रवि ।ाल मृगराज तमनिकर करि दलित अति ललित मनिगन

विघारे ॥२॥ सुनहु तमचर मुपर कीर कलहंस पिक केकि रव कलित बोलत बिहंगवारे । मनहुं मुनिबृन्द रघुवंसमनि रावरे गुनतगुन आश्रमनि सपरिवारे ॥ ३ ॥ सरनि विकसति कंजपुंज मकरंद वर मंजुतर मधुर मधुकर गुंजारे । मनहुं प्रभुजन्म सुनिचयन अमरावती इंदिरानंद मंदिर संवारे ॥४॥ प्रेम संमिलित वर बचन रचना अकनिराम राजीव लोचन उघारे । दास तुलसी मुदित जननि करें आरती सहज सुंदर अजिर पांउ धारे ॥ ५ ॥ ३७॥

हे तात ! प्रात भयो, मैं माता बलि जाउं औ तुम्हारे मुख चन्द्र पर कोटि मदन वारों । हे प्रानप्यारे उठो, पौराणिक कथक भांट विरदावली कहत हैं औ तुम्हार अतिशय प्रिय बालक और अनुज द्वार पर खड़े हैं ।१॥ चंद्रमा की छवि छीन देखि कै चक्र वाक शोक रहित भए औ लाल रंग मय आकाश में सुंदर तारे राजत हैं । मानो बाल रवि रूप सिंह ने तममूह रूप हाथिन को विदारित करि अति सुंदर मणि गणन को छितिराय दिये । इहां मणिगण तारा हैं मुरगा बोलत हैं औ सूगा औ राजहंस औ कोइलि औ मोर रव कलित कहे शब्दयुक्त हैं औ बचौ पच्छिन के बोलत हैं सो सुनहु । पक्षी औ पक्षिन के बच्चा नहीं बोलत हैं हे रघुवंशमणि मानो मुनिगन परिवार सहित आश्रमन में आप के गुण वर्णत हैं, इहां आश्रम खोता है । २ । तड़ागन में कमलन के समूह प्रफुल्लित हैं तिन में श्रेष्ठ रस है तापर भ्रमर अति सुंदर मधुर गुंजार करत हैं मानो भ्रमर गुंजार नहीं करत हैं प्रभु को जन्म सुनि के इन्द्र के पुरी में चयन है अर्थात् देवता लोग नृत्यगान करत हैं प्रफुल्लित कमल नहीं है लक्ष्मी ने आनंद को मंदिर बनायो है ॥ ४ ॥ प्रेमयुक्त श्रेष्ठ बचन रचना सुनि श्रीराम कमल सम नेत्र उघारत भए । गोसाईं जी कहत हैं कि हरषित जननी आरती करति हैं औ सहज सुंदर जो रघुनाथ सो आंगन में पधारत भए ॥ ५ ॥ ३७ ।

जागिये कृपानिधान जानि राय रामचन्द्र जननी कहै

ीन अर्थात् शोभाहीन औ मय तारन की द्युति मलीन मानो सूर्य हीं उए पूर्ण ज्ञान को प्रकाश भयो औ रात्रि नहीं बीती भव का बिलास अहंता ममतादि बीत्यो औ आश त्रास रूप अंधकार को तोप रूप सूर्य के नेन ने जगाय दिये ॥ २ ॥ हे प्राण जीवन धन मेरे बारे मधुर शब्द ते पक्षीन के समूह बोलत हैं, हमारे बचन को विश्वास करि श्रवन तें तुम सुनहु मानो पक्षी नहीं बोलत हैं वेद रूप बंदी औ मुनि-वृंद रूप सूत मागधादि जय जय जय जय जयति कैट भारे कहि यस कहत हैं ॥३॥ कमल समूहों के फूलन मात्र कमलन के त्यागि के पृथक है भंवरन के समूह सुंदर कोमल धुनि तें गुंजत चले भाव सायंकाल में कमलन के संपुटित होने तें भीतर पदि गए रहे ते उदि चले ते भ्रमर कमल विहाय गुंजार करत नहीं उड़त हैं मानो वैराग्य पाय सब शोक रूप गृह कूप छोड़ि कै तिहारे सेवक गुण को गुणन प्रेम में मत्त फिरत हैं। संपुटित कमल का गृह कूप में उत्प्रेक्षा करने का यह भाव कि संपुटित कमल से भी निकलना कठिन है औ गृह कूप से भी निकलना कठिन है औ संपुटित भए पर भ्रमर को केवल कमल देखि परत है तैसे गृहकूप में जे पड़े हैं तिन को केवल घर देखि पड़त है । इहां कमल के प्रफुल्लित होए से भ्रमर छुट्टी पावत है इहां प्रभु कृपा करि जब निकालैं तब छुट्टी पावै ॥ ४ ॥ रसाल प्रिय बचन सुनत मात्र अतिशय दयाल जे श्री राम ते जागे। जंजाल भागत भए औ अनेक दुःखन के समूहन के टारत भए। गोसाईं जी कहत हैं कि दास मुखार-विंद देखि कै अति अनंद भए तातें माया के परम मंद भारे भ्रम फंद छूटे ॥ ५ ॥ ३८ ॥

बोलत अवनिपकुमार ठाढे नृप भवन द्वार रूप सील गुन उदार जागहु मेरे प्यारे । बिलपित कुमुदिनि चकोर चक्रवाक हरष भोर करत सोर तमचर पग गुंजत अलि न्यारे ॥ १ ॥ रुचिर मधुर भोजन करि भूषन सजि सकल अंग संग अनुज बालक सब विविधिविधि सँवारे । करतल गहि ललित चाप भंजन रिपुनिकरदाप कटितट पटपीत

तून सायक सनियारे । २ ॥ उपवन मृगया विहार क
गवने कृपाल जननी मुख निरख पुन्य पुंज निज विचारे।
तुलसिदास संग लीजै जानि दीन अभै कीजै दीजै
विमल गावैं चरितवर तिहारे ॥ ३॥३९ ॥

रामभवन के दरवाजे पर राजन के बालक ठाढे भए बोलत
अर्थात् तुम्हारे जागिबे को मलासा देखत हैं। हे रूपशील गुन
मेरे प्यारे जागहु, भोर भए तें कोई औ चकोर बिलखात हैं औ चकव
को दरप है मुरगा औ और पछी शोर करत हैं और भ्रमर न्यारे
करत हैं, एतना सुनि जागे दसरथ देव हैं ॥१॥ अनुज औ बालक सब
बिबिधि बिधि सँवारे भए हैं तिन के संग सुंदर मधुर भोजन करि
औ सकल अंगन में भूषन औ कटिदेस में पीतपट औ तरकस
सायक पुख साजि के औ रिपु समूहन के अहंकार भंजन क
सुंदर चारहरवल में गाढि के उपवन में सिकार खेलिवे के हेतु
गवने। जननी ने मुख देखि के अपने पुन्य का समूह विचारा। कृपाल
कौशि को भाव मानस रामायन में स्पष्ट है। जे मृग राम बान के मारे
ते तनु तजि सुरलोक सिधारे। गोसाईं जी कहत हैं कि हम को संग
लीजै औ दीन जानि के अभै कीजै औ निर्मल मति दीजै जाते तेहारो
अति चरितन को गावैं। इहां गोसाईं जू आवेस में देहाध्यास भूलि प्रथम
पद कहे ॥ ३९ ॥

रामनट—पेलन चलिबै आनदकंद। सषा प्रिय नृप हार
ठाढे बिपुल बालक बृन्द ॥१॥ तपित तुम्हरे दरस कारन
बालक दास। वपुष वारिद वरषि छवि जल हरहु लोचन
॥२॥ बंधु वचन बिनीत सुनि उठे मनहु केहरि बाल।
सर चाप कर उर नयन बाहु बिसाल ॥३॥ चलत
प्रतिबिंब राजत अजिर सुषमापुंज। प्रेमबस प्रतिबान
देति आसन कंज ॥ ४ ॥ निरपि परम बिचित्र

सोभा चकित चितवहिं तात। हरष बिबस न जात कहि निजभवन बिहरहु तात ॥ ५ ॥ देखि तुलसीदास प्रभुछबि रहे सब पल रोकि। थकित निकर चकोर मानहु सरद इंदु बिलोकि ॥ ६ ॥ ४० ॥

सखा औ प्रिय जे बालकन के अनेक युत्थें ते, नृपद्वार में खड़े हैं वा सखा औ प्रिय औ बालकन के अनेक युत्थें नृपद्वार में खड़े हैं, तुम्हारे दरस के कारन, चतुरदास रूप चातक जे त्रिपित हैं तिन को सरीर रूप मेघ ते छबि रूप जल बरषि कै नेत्रन की प्यास हरहु ॥२। बिनीत नम्र केहरि बालक कहें सिंह को बालक ॥३॥ परम शोभा पुंज जो आंगन है तेहि में चलत संते पद की परिछाहीं शोभति है सो परिछाहीं नहीं है मानो प्रेमबस चरण प्रति पृथ्वी कमलन के आसन देति है ॥ ४ ॥ हर्ष के विशेष बस हैं ताते नहीं कहिजात है कि हे तात निज भवन में बिहरहु अर्थात् बाहर न जाहु ॥ ५ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभुछबि देखि कै सब पलक रोकि रहे मानो चकोरन के समूह सरद पूनो के चंद को देखि थकित भए ॥ ६ ॥ ४० ॥

बिहरत अवध बीथिन्ह राम। संग अनुज अनेक सिसु नव नील नीरद स्याम ॥ १ ॥ तरुन अरुन सरोजपद बनि कनकमय पद चान। पीत पट कटि तून बर कर ललित सुघ धनुबान ॥ २ ॥ लोचननि को लहत फल छबि निरषि पुर-नरनारि। बसत तुलसी दास उर अवधेस के सुत चारि ॥३॥४१

नवीन स्याम मेघ सम स्याम श्रीराम अनुज औ अनेक शिशुन के संग अवध की गलिन में बिहरत हैं ॥ १ ॥ तरुण जो लालकमल तद्वत चरण हैं तामें सुवर्ण मयी पनही बनी है अर्थात् पहिरे हैं, पीतपट औ तरकस कटि में है, श्रेष्ठ करनि में सुंदर छोटे धनुष औ बान हैं ॥ २ ॥ लोचन इ० सु० ॥ ३ ॥ ४१ ॥ करतल सोहत बान धनुहिया। यह पद छेपक है ताते न लिखा

तैसे राम ललित तैसे लोने लषन लालु। तैसेई भरत सील सुषमा सनेहनिधि तैसई सुभ प्रसंग सत्रुसालु ॥१॥ धरें धनु सर कर कसे कटि तरकसी पीरे पट बीढे सबैं चारु चालु। अंग अंग भूषन जराय के जगमगत हरत जन के जी को तिमिर जालु ॥२॥ पैलत चौहटा घाट बीथी बाटकनि प्रभु सिव सुप्रेम मानस मरालु। सोभा दान दैदै सनमानत जाचक जन करत लोक लोचन निहालु ॥ ३ ॥ रावन दुरित दुष दलै सुर कहै आजु अवध सकल सुष को सुकालु। तुलसी सराहै सिद्ध सुकृत कौसल्या जू के भूरिभाग भाजन भुआलु ॥ ४॥४२ ॥

ललित सुंदर, लोने सुंदर, सील सुखमा सनेह निधि सील औ परम सोभा औ स्नेह के समुद्र, शत्रुशालु शत्रुहन जी ॥ १ ॥ तरकसी तरकस जराय के जड़ाऊ के तिमिर जाल अंधकार समूह ।२॥ शिव जी के सुंदर प्रेम रूप मानस सर के हंस जो प्रभु हैं सो चौहटा औ घाट गली औ फुलवारिन में खेलत हैं औ लोक के लोचन रूप जाचक जन के सोभा दान दै दै के सनमानत हैं औ निहाल करत हैं ॥ ३ ॥ देवता कहत हैं कि अवध में सकल सुख को सुकाल है पर रावन पाप रूप दुख को आजुऐ मारैं, भाव अवध के सुख में न भूलैं हमारे दुख को देखि शीघ्रता करैं वा देवता कहत हैं कि आजु कहैं वा समैं में रावन पाप रूप जो दुख है ताको मारैं तो अवध में सकल सुख को सुकाल होय। भाव फेर दुकाल का भै न रहि जाय। गोसाईं जी कहत हैं कि बड़े भाग्य के पात्र जो महाराज दशरथ औ कौशल्या जू तिन के सुकृत को सिद्ध सराहत हैं। ४। ४२ ॥

राग ललित। ललित ललित लघु लघु धनु सर कर तैसि तरकसि कटि कसे पट पिअरे। ललित पनहि पाँय पैंजनी किंकिनि धुनि सुनि सुष लहै मनु रहै नित निअरे ॥१॥

पहुंचो अंगद चारु हृदय पदिक हार कुंडल तिलक छवि गडो कवि जिअरे। सिर सिटे पारो लाल नीरज नयन बिसाल सुंदर वदन ठाढ़े सुरतरु सिअरे ॥ २ ॥ सुभग सकल अंग अनुज बालक संग देषि नर नारि रहै ज्यौ कुरंग दिअरे। बिलत अवध पोरि गोलो भोंरा चकडोरि मूरति मधुर बसै तुलसी के हिअरे ॥ ३ ॥४३॥

ललित० इ० मु० ॥ १ ॥ अंगद विजायठ पदिक धुकधुकी हार माला वा सात पदिक के माला का नाम पदिक हार है सिर सिटे पारे लाल सिर में लाल टोपी है नीरज कमल । सुरतरु सियरे कल्पवृक्ष के छाया में ॥ २ ॥ ज्यों कुरंग दियरे जैसे मृगा दीपक को देखि कै। संका। मृगा तो गान सुनि मोहित होत है दीपक ने कैसे लिखे? उत्तर। व्याधा दीपक बारि के कुछ गान करत हैं तब मृगा उहां आवत है यह प्रसिद्ध है चकडोरी चकई ॥ ३ ॥ ४३ ॥

छोटि ऐ धनुहिया पनहिया पगनि छोटो छोटि ऐ कछौटी कटि छोटि ऐ तरकसी । लसत झंगूलो झोनो दामिनि की छवि छोनो सुंदर वदन सिर पगिया जरकसी ॥१॥ वय धनुहरत विभूषन विचित्र अंग जोहै जिय आवति सनेह की सरकसी। मूरति की मूरति कही न परै तुलसी पै जानै सोई जाके उर बसकै करकसी ॥ २।४४ ॥

कछौटी कछनी ॥ १ ॥ अवस्था के अनुहार विचित्र भूषण अंग में हैं देखिये तें जिय में स्नेह की सरसताई आवति है तुलसी पै मूरति की मूरति नहीं कहि परै है जा के हृदय में करक ऐसी कसकै है अर्थात् मूरति सोई जानै ॥ २ ॥ ४४ ॥

राग टोड़ी राम लषन एक ओर भरत रिपुदमन लाल एक ओर भए। सरजु तीर मन सुघट भूमिथल गनि गनि

गोइआ बांटि लये ॥ १ ॥ कंदुक केलि कुसल हय चढि चढि मन कस कसि ठोकि ठोकि पये। करकमलनि बिचित्र चौगानै पेलन लगे पेल रिझये ॥२॥ व्योम विमाननि विबुध विलोकत पेलक पेषक छांहछये। सहित समाज सराहि दसरथहि बरषत निज तरु कुसुमचये ॥ ३ ॥ एक लै बढत एक फेरत सब प्रेम प्रमोद विनोद मये। एक कहत भइ हाल राम जू को एक कहत भइया भरत जये ॥ ४ ॥ प्रभु बकसत गज बाजि बसन मनि जय धुनि गगन निसान हये। पाइ सपा सेवक जाचक भरिजीव न दूसरे द्वार गये ॥ ५ ॥ नभ पुर परति निछावरि जहँ तहँ सुरसिद्धनि बरदान दये। भूरिभाग अनुराग उमगि जे गावत सुनत चरित नित ये ॥६॥ हारे हरष होत हिय भरतहि जिते सकुचि सिर नयन नए। तुलसी सुमिरि सुभाव सील सुकृती तेइ जे एहि रंग रए॥७॥५॥

राम इ० सु० ॥ १ ॥ गेंदा के खेल में जे कुशल हैं ते घोड़न पर चढ़ि चढ़ि कै मन को ठोकि ठोकि मजबूत करि करि के खड़े भए ठोकि ठोंकि मजबूत करिबे को यह भाव कि हम हारेंगे नहीं अवश्य जीतेंगे अस निश्चै करि करि वा मन को फेरि फेरि के अर्थात् मिलाप छोड़ि छोड़ि के ताल ठोंकि २ के खड़े भए वा मन भरि घोड़न को कसि कसि के याल ठोकि ठोकि के चढ़ि चढ़ि खड़े भए हस्त कमलन में बिचित्र दण्डा है रिझावनवाले खेल खेलन लगे यह खेल या भांति ते खेला जात है दूनो ओर गोइंया खडे होत हैं बीच में एक सींवां बनावत हैं जमीन में गेंदा को धरि घोड़े पर से दंडा मारि मारि के गेंदा को सींवा के ओर बढ़ावत हैं औ दूसरे ओर से दंडा मारि मारि के गेंदा को फेरत हैं जेहि ओर से सींवा पार होय तेहि की हाल होय अर्थात् जीत होय ॥ २ ॥ आकाश तें बिमानन पर देवता देखत हैं खेलनेवाले और खनेवालों की छाया छाय रही वा खेलनेवालों पर देखनेवालों की

छाया छाय रही वा खेलनेवालों की छाया सम देखनेवाले अर्थात् देवता छाजे समाजसहित राजा दशरथ को सराहि के अपना तरु जो कल्पवृक्ष ताको पुष्प समूहैं वर्षत भए ॥ ३ ॥ सब प्रेम अनन्द औ कौतुक मैं जे हैं तिन में से एक गेंदा कों लै बढ़त औ एक रोकि कै फेरत एक कहत है कि राम जू की जीत भई औ एक कहत है कि भैया भरत जीते ॥ ४ ॥ हये कहैं हने अर्थात् बजाए ॥५॥ जहं तहं पुर तें औ आकाश तें नेवछावरि परति है अर्थात् आकाश तें देवता औ पुर तें पुरवासी नेवछावर करत देवता औ सिद्ध वरदान देत भए अनुराग में उमगि के जे ए चरित नित्य सुनत गावत हैं तिन के बड़े भाग हैं ॥६॥ सिर नैन नए सिर औ नैन नीचे के नवावत भए रए कहैं रंगे ॥७॥४५॥

पेलि पेलि सुपेलनिहारे। उतरि उतरि चुचुकारि तुरंगनि सादर जाइ जाहारे ॥१॥ बंधु सखा सेवक सराहि सनमानि सनेह संभारे। दिए वसन गज बाजि साजि सुभ साजि सुभांति संवारे ॥२॥ मुदित नयन फल पाइ गाइ गुन सुर सानंद सिधारे। सहित समाज राज मंदिर कहं रामराउ पग धारे ॥ ३ ॥ भूपभवन घर घर घमंड कल्यान कोलाहल भारे। निरपि हरपि आरती निछावरि करत सरीर बिसारे ॥ ४ ॥ नित नये मंगल मोद अवध सब विधि सब लोग सुपारे। तुलसी तिन्ह सम तेउ जिन्ह के प्रभु ते प्रभुचरित पियारे ॥ ५॥४६ ॥

सुंदर खेलनेवारे खेल खेलि के ॥ १ ॥ बंधु सखा सेवक कों सराहि सनमानि के फिरि सनेह को सम्हारे अर्थात् सनेह में आप जो विह्वल है गए रहे ताको सम्हारे पुनि वसन औ घोड़ा हाथी साजि कै औ सुंदर भांति ते संवारे जे सुभ साज भाव सुंदर पोसाक ते दिए वा कल्यान साजि के सुंदर भांति ते संवारत भए औ वसनादि दिए वा सनेह सम्हारे यह सब दिए भाव जेहि की जेतनी प्रीति तेतनी दिए वा

सनेहको सम्हारे भए जो बंधु आदि हैं तिनकों सराहि सनमानि कै बस-नादि दिए सनेह सम्हारे भए कहिबे को यह भाव कि सनेह को न सम्हारैं तो देहाध्यास रहित ह्वै जाहिं ॥२॥ मुदित इ० सु० ॥३॥ भूपति के भवन में औ घर घर में कल्यान को घमंड है अर्थात् कल्यान पूरि रहा है वा कल्यान को अहंकार है ॥ ४ ॥ गोसांई जी कहत हैं कि तिन्ह अवध वासी सम तेऊ हैं जिन्ह के प्रभु तें प्रभु का चरित पिआरा है ॥५॥४६॥

राग सारंग—चहत महामुनि जाग जयो। नीच निसाचर देत दुसह दुख क्लसतन ताप तयो ॥ १ ॥ सापे पाप नये निदरत पल तब यह मंत्र ठयो। बिप्र साधु सुर धेनु धरनि हित हरि अवतार लयो ॥२॥ सुमिरत श्रीसारंगपानि छन मै सब सोचु गयो। चले मुदित कौसिक कोसलपुर सगुननि साथ दयो ॥ ३ ॥ करत मनोरथ जात पुलकि प्रगटत आनंद नयो। तुलसी प्रभु अनुराग उमगि मग मंगलमूल भयो ॥ ४ ॥ ४७ ॥

महामुनि जे विश्वामित्र जू ते यज्ञ औ जय दोऊ चाहत हैं। महामुनि कहिबे को यह भाव कि तपबल याही देह भए क्षत्री ते ऋषिपति अस कोऊ मुनि नहीं भयो। नीच निसाचर दुःसहदुःख देत हैं ताते तन तापन ते तयो औ कृश भयो ॥ १ ॥ अब विश्वामित्र जू का विचार कहत हैं शाप देइबे में पाप है औ नवनई किए में खल निरादर करत है अस विचारि कै तब यह मंत्र ठान्यो कि बिप्रादि के हित हरि अवतार लियो है इहां और नाम न कहे हरिहीं कहे ताको यह भाव कि या काल में अपना दुःख हरिबे पर दृष्टि है अर्थात् हरतीति हरिः ॥ २ ॥ सारंगपानि कहिबे को यह भाव कि सारंग अस धनुष हाथ में है तो क्यों न हमारे शत्रु को नाशैंगे। सगुननि साथ दयो कहिबे को यह भाव कि सार भरि सगुन होन लागो ॥ ३ ॥ पुलकि करि कै मनोरथ करत जात हैं औ नयो जो कबहूं न भयो आनंद सो प्रगटत हैं गोसांई जी

कहत हैं कि प्रभु अनुराग के उमग झारि कै मग मंगलमूल भयो। भाव जनताई पग के ओर घर में लोग रहे नवताई न भयो। औ प्रभु के ओर चलत राह मे भयो आगे क्या जानै कैतना होयगो ॥ ४ ॥ ४७ ॥

आजु सकल शुभ फल पाइहौं। नृप को सोच अवधि आनद को अवध विलोकिहौं आइहौं ॥ १ ॥ सुतन्ह सहित दसरथहि देखिहौं तिय पुलकि उर लाइहौं। रामचन्द्रमुख चन्द्र सुधा छवि नयन चकोरनि प्याइहौं ॥ २ ॥ सादर समाचार नृप बूझिहै हौं सब कथा सुनाइहौं। तुलसी छल छाल्य आश्रमहि राम लखन लै आइहौं ॥ ३ ॥ ४८ ॥

अब विश्वामित्र जी को मनोरथ कहत हैं सुख की सीमा औ आनंद की सीमा ऐसी जो अयोध्या जी हैं तिन को जाय मैं देखिहौं ॥ १ ॥ श्रीरामचंद्र के मुख रूप चन्द्र को जो छवि रूप अमृत है ताको नैन रूप चकोरन को पिआइ हौं ॥ २ ॥ सादर इ० सु० दो०। बहुविधि करत मनोरथ, जात न लागी बार। करि मज्जन सरजू जल, गए भूप दरबार ॥ चौ०। मुनि आगमन सुना जब राजा। मिलन गयउ लै विप्र समाजा ॥ करि दंडवत मुनिहि सनमानी। निज आसन बैठारिन्हि आनी ॥ चरन पखारि कीन्ह अति पूजा। मोसम आजु धन्य नहिं दूजा ॥ बिबिधि भांति भोजन करवावा। मुनिवर हृदय हरष अतिपावा ॥ पुनि चरनन मेले सुत चारी। राम देखि मुनि देह बिसारी ॥ भये मगन देखत मुख सोभा। जनु चकोर पूरन शशि लोभा ॥ इहां बतनी कथा छोड़ि दिए प्रसंग मिलाइबे हेतु हम लिखि दिया ॥ ३ ॥ ४८ ॥

राग नट—देखि मुनि रावरि पद आजु। भयो प्रथम बनती में अब तहां जहां लौ साधु समाजु ॥ १ ॥ चरन बंदि करजोरि निहोरत कहिय कृपा करि काजु। मेरे कछु न चहिय राम बिनु देह गेह सब राजु ॥ २ ॥ भली कही भूपति बिभुवन में को मुकुती सिरताजु। तुलसी राम जनम तें जानिअत सकल सुकृत को साजु ॥ ३ ॥ ४९ ॥

देखि इ० पद सुगम ॥ ३ ॥ ४९ ॥

राजन रामलषन जौ दोजै । जस रावरो लाभ ढोटनिहु मुनि सनाथ सब कीजै ॥ १ ॥ डरपत हौ सांचेहु सनेहबस सुत प्रभाव विनु जाने । बूझिये वामदेव अरु कुलगुरु तुम पुनि परम सयाने ॥ २ ॥ रिपुरन दलि मष राषि कुसल अति अलप दिननि घर ऐहैं । तुलसिदास रघुबंसतिलक की कबि कल कीरति गैहैं ॥ ३ ॥ ५० ॥

राजन इ० पद सुगम ॥ ३ ॥ ५० ॥

रहे ठगि से नृपति सुनि मुनिबर के बैन । कहि न सकत कछु राम प्रेमबस पुलकगात भरे नीर नैन ॥ १ ॥ गुरु बसिष्ट समुझाय कह्यौ तब हिय हरषाने जानि सेषसयन । सौंपे सुत गहि पानि पांय परि भूसुर उर चले उमगि चयन ॥ २ ॥ तुलसी प्रभु जोइत पोइत चित सोइत मोइत कोटि मयन । मधु माधव मूरति दोउ संग मानो दिनमनि गमन कियो उत्तर अयन ॥ ३ ॥ ५१ ॥

रहे ठगि सु० ॥ १ ॥ विश्वामित्र जू चैन कहैं आनन्द में उमगि चले ॥ २ ॥ गोसांई जी कहत हैं कि कोटि काम के मोहत जो प्रभु सोभत हैं सो देखत मात्र चित्त कों पोहि लेत हैं अर्थात् अपने में लगाइ लेत हैं मानो चैत्र बैसाख रूप दोउ मूरति संग लै विश्वामित्ररूप सूर्य उत्तर दिसा को गवन कियो भाव चैत्र बैसाख पाय सूर्य अति प्रताप-युक्त होत हैं तैसे इन दोऊ भैयन को पाय विश्वामित्र जू भए ॥३॥५१॥

राग सारंग । रिषि संग हरषि चले दोउ भाई । पितु पद बंदि सीस लियो आयसु सुनि सिष आसिष पाई ॥ १ ॥ नील पीत पाथोज बरन वपुवयकिसोर बनि आई । सर धनु पानि पीत पट कटितट कसे निषंग बनाई ॥ २ ॥ कलित कंठ

मनिमाल कलेवर चंदन पौरि सुहाई। सुंदर वदन सरोरुह लोचन मुख छवि वरनि न जाई ॥ ३ ॥ पल्लव पंप सुमन सिर सोहत क्यौ कहौ वेष लोनाई। मनो मूरति धरि उभय भाग भई विभुवन सुंदरताई ॥ ४ ॥ पैठत सरनि सिलनि चढ़ि चितवत पगमृग वन रुचिराई। सादर सभय सप्रेम पुलकि मुनि पुनि पुनि लेत बोलाई ॥ ५ ॥ एक तीर तकि हती ताडका विद्या विप्र पढाई। राख्यो जज्ञ जीति रजनीचर भइ जग विदित बड़ाई ॥ ६ ॥ चरन कमल रज परसि अहल्या निज पति लोक पठाई। तुलसिदास प्रभु के बूझे मुनि सुरसरि कथा सुनाई ॥ ७ ॥ ५२ ॥

पिताकी शिक्षा सुनि आज्ञा शिर धरि लिए फिर पद कों बंदि आशिष पाइ कै ऋषि के संग हरषि कै दोऊ भाई चले ॥१॥ श्याम पीत कमल के समान सरीर के वर्ण हैं औ किशोर अवस्था बनि के आई अर्थात् भली भांति आई है बान धनुष हाथ में है औ कटि देश में पीत पट है औ तामें तरकस बनाय कै कसे हैं ॥२॥ कंठ में मणिमाल शोभित है औ सरीर में सुंदर चंदन की खौरि है सुंदर मुख औ कमल सम लोचन हैं मुख की छवि बरनी नहीं जाति है ॥३॥ अपर पद सु० ॥४॥५॥६॥७॥५२॥

राग नट। दोऊ राजसुवन राजत मुनि के संग। नव सिप लोने लोने वदन लोने लोयन दामिनि वारिदवर वरन अंग ॥ १ ॥ सिरसि सिखा सुहाई उपवीत पीत पट धनु सर करकुसे कटि निपंग। मानो मय रज निसिचर हरिवे को सुत पावक के साथ पठये पतंग ॥ २ ॥ करत छाह घन वरषे सुर सुमन छवि वरणत अतुलित अनंग। तुलसी प्रभु विलोकि मग लोग पग मृग प्रेम मगन रंगे रूप रंग ॥ ३॥५३ ॥

लोने सुंदर लोयन नेत्र दामिनि वरण अंग श्रीलक्ष्मण जी
औ मेघवरण अंग श्री राम जी को है ॥ १ ॥ मानो मख के
रूप निशाचर हरिवे को अग्नि के साथ पुत्र जो अश्वनी कुमार
को सूर्य पठए हैं इहाँ पावक विश्वामित्र जू हैं अश्वनी कुमार रूप
भाई हैं सूर्य चक्रवर्त्ती महाराज हैं ॥ २ ॥ मेघ छांह करत हैं देवता
वर्षतहैं औ अनेक अनंग सम छवि वरनतहैं वा छवि वरनते में काम
तुलित होत है वा अतुलित जो छवि ताको काम वरनत है ॥३॥५३

राग कल्यान । मुनि के संग विराजत वीर । काक
धर कर कोदंड सर सुभग पीत पट कटि तूनीर ॥१॥ क
इंदु अंभोरुह लोचन स्याम गौर सोभा सदन सरीर । पुल
रिपि अवलोकि अमित कवि उर न समात प्रेम को भीर ।
प्रेलत चलत करत मग कौतुक बिलमत सरित सरोवर तो
तोरत लता सुमन सरसीरुह पियत मुधासम सीतल नीर
बैठत बिमल सिलनि बिटपनि तर पुनि पुनि बरनत
समीर । देखत नटत कोकि कल गावत मधुप मराल कोकि
कीर ॥ ४ ॥ नयननि को फल लेत निरखि मृग पग मृ
व्रजवधू अहीर । तुलसी प्रभुहि देत सब आसन निज
मन मृदु कमल कुटीर ॥ ५ ॥ ५४ ॥

काक पक्ष जुलुफ कोदंड धनुष तूनीर तरकस ॥ १ ॥ इंदु चं
अंभोरुह कमल ॥ २ ॥ सरसीरुह कमल ॥ ३ ॥ नाचत जो मो
औ सुंदर गावत जो भ्रमर हैं औ हंस कोकिल सुआ जे हैं तिन
देखत हैं ॥ ४ ॥ मृग पक्षी गौ औ पंखिन के रखवाली जो स्त्री
सं० नयननि को फल लेत हैं गोसाईं जी कहत हैं कि सब प्रभु
पायोज मन रूप कुटी में कोमल कमल को आसन देत हैं
कि को कठोर जानि अस भावना करत हैं । ५ । ५४ ।
आगने न्हरा—मोहत मग मुनि संग दोउ भाई । रा
राम को

तमाल चारु चंपक छवि कवि सुभाय कहि जाई ॥ १ ॥ भूषन वसन अनुहरति अंगनि उमगति सुंदरताई। वदन मनोज सरोज लोचननि रही है लोभाइ लोनाई ॥ २ ॥ अंसनि धनु सर करकमलनि कटि कसे हैं निषंग वनाई । सकल भुवन सोभा सरवस लघु लागत निरपि निकाई ॥ ३ ॥ मंजु मृदु पथ घनछांह सुमन सुर वरपि पवन सुपदाई। जल-थलरुह फल फूल सलिल सब करत प्रेम पहुनाई ॥ ४ ॥ सकुच सभीत विनीत साथ गुरु वोलनि चलनि सुहाई। पग मृग विचिच विलोकत विच विच लसत ललित लरि-काई ॥ ५ ॥ विद्या दई जानि विद्यानिधि विद्यहु लही वडाई। ब्याल दली ताडका देपि रिपि देत असीस अघाई ॥६॥ वूझत प्रभु मुरसरि प्रसंग कहि निज कुल कथा सुनाई। गाधिसुवन सनेह-सुप सम्पति उरथासम न समाई ॥ ७ ॥ वन वासी वड जती जोगि जन साधु सिद्धि समुदाई। पूजत पेपि प्रीति पुलकत तन नयनलाभ लुटि पाई ॥ ८ ॥ सप राप्यो पलदल दलि भुजबल वाजत विवुध वधाई। नित पथचरितसहित तुलसोचित वसत लपन रघुराई ॥८॥५५॥

सुंदर तरुण तमाल के वृक्ष सम श्रीरघुनाथ की औ चंपक सम श्रीलक्ष्मण की छवि यह कवि सुभाव ने कहि जात है। कविसुभाव कहिवे को यह भाव कि प्रायः जो न घटै सो घटावना। कविन का सुभाव होत है ॥ १ ॥ अंगनि के अनुरूप भूषन वसन है अर्थात् श्रीरामजी को पीत वसन औ पीत मणि आदि को भूषन है औ श्रीलक्ष्मणजी को नीलवसन औ नीलमणि आदि को भूषण है औ सुंदर-ताई उमगति है औ मुखन पर काम की नैनन पर कमलन की शोभा लोभाय रही है ॥ २ ॥ अंसन कहँ कांधन पर सरवस कहँ सब ॥ ३ ॥

पूरनविधु वदन मदन मन मोहै ॥ ४ ॥ सिरनि सिखंड सुमन दल मंडन बाल सुभाय बनाये। केलि अंक तनु रेनु पंक जनु प्रगटत चरित चुराये ॥ ५ ॥ मख रापवे लागि दसरथ सो मागि आश्रमहि आने। प्रेम पूजि पाहुने प्रानप्रिय गाधिसुवन सनमाने ॥ ६ ॥ साधन फलसाधक सिद्धनि के लोचनफल भवही के। सकल सुकृतफल मातु पिता के जीवन धन तुलसी के ॥ ७॥५६ ॥

सुंदर मंगल मय नृपबालक हैं, मंजुल मंगल कहिवे को यह भाव कि जेहि के नाम लेवे ते अमंगल नसि जात हैं, मुनि औ मुनि की पत्नी औ मुनि के बालक कोमल मनोहर जोड़ी देखि कै कहत हैं ॥ १ ॥ नाम औ रूप योग्य वेष औ अवस्था से श्रीराम लषन अति लोने हैं मानो मेघ दामिनि काम मरकत मणि औ सोना ने इनही तें छवि लही है ॥ २ ॥ कमल सम चरण है कटिदेश में पीतपट औ तरकस औ बान धनु धारन किए हैं। सिंघ सम कांध हैं, काम रूप हाथी के श्रेष्ठ सुंड सम विशाल भुजा औ पराक्रम भारी है ॥३॥ दूषनरहित जे समय सम भूषण ते सुअंगनि पाय सोभत हैं। दूषणरहित कहिवे को यह भाव कि बहुत मणि दोष सहितो होत हैं। नवीन कमल सम नेत्र हैं पूर्णचंद्र सम मुख है सो मदन को मन मोहत है ॥ ४ ॥ शिर पर मोरपंख औ फूल दल को भूषण बाल सुभाय ते बनाए हैं। खेल कै चिन्ह जो तनु में रेनु औ पंक सो मानहु चोराए चरित को प्रगटत है भाव विश्वामित्र जी को जो आंख बचाय कै खेले कूदे हैं ताकों प्रगटत हैं ॥५॥ विश्वामित्र जू यज्ञ राखिवे के हेतु चक्रवर्ती महाराज सों मांगि के आश्रम में ले आए प्रान ते प्रिय जो पाहुन दोऊ भाई तिन्ह कों प्रेम ते पूजि कै सन्मानत भए ॥६॥ साधन इ० सु० ॥७॥ ॥ ५६ ॥

राग सूहव । रामपद पदुम पराग परी। रिपितिय त्यागि तुरत पाहनतन छबिमय देह धरी ॥ १ ॥ प्रबल पाप पतिसाप दुसह दव दारुन जरनि जरी। कृपा सुधा सींची

विबुध बेलिं ज्यौ फिरि सुप फरनि फरी ॥ २ ॥ निगम अगम मूरति महेस मति युवति वराय वरी । सोइ मूरति भइ जानि नयनपथ एक टक ते न टरी ॥ ३ ॥ वरनत हृदय सहज सील गुन प्रेम प्रमोद भरी । तुलसिदास ऐसे केहि आरत की आरति प्रभु न हरी ॥ ४॥५७ ॥

पराग धूरि पाहन पाखान ॥ १ ॥ प्रबल पाप से जो पानिशापरूपी दुःसह अग्नि तेहि करि कठिन जरनि से जो जरी रही सो कृपारूपी अमृत से सींची गई फेरि कल्पलता के समान सुखरूप फरनि से फरी । पाठ- "गच्छतस्तस्य रामस्य पादस्पर्शान्महाशिला । काचिद्योपाऽभवत्सद्योविस्मितं मुनिरब्रवीत् ॥ शापदग्धा पुरा भर्त्रा राम शक्रापराधतः । अहल्याख्या शिला जज्ञे शतलिंगीकृतः स्वराट् ॥ त्वदंघ्रिस्पर्शनात्तस्यै शापान्तं माह गोतमः तस्मादियं ते पादाब्जस्पर्शाच्छुद्धाऽभवत्प्रभो' ' ॥२॥ जो मूरति वेद को अगम अर्थात् वरनन में औ महेश की मतिरूप युवती ने चुनि कै वरी । वराय वरी कहिवे को यह भाव कि विष्णु नृसिंह वामनादि को तजि कै वरी सोई मूरति नयन गोचर भई जानि एक टक ते न टरी ॥३॥ रूप शील गुण के हृदय में वरनत मात्र प्रेम औ आनंद से भरत भई । गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभु यहि प्रकार ते केहि आरत की आरति नहीं हरी है । भाव सब की हरी है ॥४॥ ५७ ॥

परत पद पंकज रिषिरवनी । भई है प्रगट अतिदिव्य देह धरि मानो त्रिभुवन छबिछवनी ॥१॥ देखि बडी आचरज पुलकि तन कहत मुदित मुनिभवनी । जौ चलि है रघुनाथ पयादे सिला न रहि है अदनी ॥ २ ॥ परसि जो पाय पुनीत सुरसरी सोहै तीनि पथ गवनी । तुलसिदास तेहि चरन रेनु की महिमा कहै मति छवनी ॥ ३ ॥ ५८ ॥

छवनी कन्या ॥ १ ॥ मुनिभवनी मुनिपत्नी ॥ २ ॥ तीनि पथ स्वर्ग मर्त्य पाताल लोक ॥ ३ ॥ ५८ ॥

भूरि भाग भाजन भई। रूपरासि अवलोकि बंधु दीउ प्रेम सुरंग रई ॥ १ ॥ कहा कहै केहि भांति सराहै नहि करतूति नई। बिनु कारन करुनाकर रघुवर केहि केहि गति न दई ॥ २ ॥ करि बहु विनय राखि उर मूरति मंगल मोद मई। तुलसी ह्वै बिसोक पतिलोकहि प्रभुगुन गनत गई ॥ ३ ॥ ५८ ॥

भाजन पात्र, सुरंग रई सुंदर रंग में रंगी ॥ १ ॥ बिनु कारन बिनु हेतु ॥ २ ॥ करि इ० सु० ॥ ३ ॥ ५९ ॥

राग कान्हरा—कौसिक के मख के रखवारे। नाम राम अरु लषन ललित अति दमरथराज दुलारे ॥ १ ॥ सेचक पीत कमल कोमल बर काकपक्षधरवारे। सोभा सकल सकेलि मदन बिधि सुकर सरोज सँवारे ॥ २ ॥ सहस समूह सुबाहु सरिस खल समर सूर भटभारे। केलि तून धनु बान पानि रन निदरि निसाचर मारे ॥ ३ ॥ रिपितिय तारि स्वयंबर पैपन जनक नगर पगधारे। मग नर नारि निहारत सादर कहि बडभाग हमारे ॥४॥ तुलसी सुनत एक एकनि सो चलत बिलोकनिहारे। मूकनि बचन लाहु मानो अंधनि लहे हैं बिलोचन तारे ॥ ५ ॥ ६० ॥

अब मग के नर नारिन की उक्ति लिखत हैं कौशिक इ० सु० ॥१॥ ए बालक श्याम पीत कोमल कमल सम हैं औ सुंदर जुल्फ धारन किए हैं मानो सकल शोभा समेटि के काम रूप विधाता ने अपने कर कमल से सँवारे हैं, इहां लुप्तोपमा है। २ ॥ समर में शूर बड़े योद्धा सुबाहु सरिस खल अनेक सहस निशाचरन को खेलवाड़ के नरहम औ धनुष बान जो हाथ में हैं तारी सो रण में निरादर करि के मारे ॥३॥ देखन पहँ देखन ॥ ४ ॥ मानो मूकनि ने बचन लाभ औ अंधनि ने नेत्रन की पुतरी लहे हैं ॥ ५ । ६० ।

राग टोड़ी--आए सुनि कौसिकु जनकु हरषाने हैं। बोलि गुरु भूसुर समाज सो मिलन चले जानि बड़े भाग अनुराग अकुलाने हैं ॥ १ ॥ नाइ सीस पगनि असीस पाइ प्रमुदित पांवड़े अरघ देत आदर सो आने हैं। असन बसन बास कै सुपास सब विधि पूजि प्रिय पाहुने सुभाय सनमाने हैं ॥ २ ॥ बिनय बड़ाई रिषि राजऊ परस्पर करत पुलकि प्रेम आनद अघाने हैं। देखे राम लषन निमिष बिषकित भए प्रानहु ते प्यारे लागे बिनु पहिचाने हैं ॥ ३ ॥ ब्रह्मानंद हृदय दरस सुष लोयननि अनुभए उभय सरस राम जाने हैं। तुलसी बिदेह की सनेह की दसा सुमिरि मेरे मनमाने राउ निपट सयाने हैं ॥ ४ ॥ ६१ ॥

कौशिक को आगमन सुनि अपने बड़े भाग जानि अनुराग से विह्वल भए हैं औ हरषाने हैं जे जनक महाराज सचिव आदि तिन के सहित मिलिबे को चले। शंका। गुरु को कैसे बोलाए? उत्तर। श्रीजनक महाराज के गुरु जागवल्क जी हैं सतानंद जी पुरोहित हैं पुरोहित को भी गुरु कहत हैं ॥ १ ॥ प्रिय पाहुने बिश्वामित्र जी ॥ २ ॥ विनय इ० सु० ॥ ३ ॥ ब्रह्मानंद उर से औ रामदरसन सुख नेत्रन तें दूनों अनुभव किए। तब सरस राम हैं यह जाने अर्थात् नेत्रसुख को अधिक माने। गोसांई जी कहत हैं विदेह के स्नेह की दसा सुमिरि कै हमारे मन ने मान लिया कि महाराज अत्यंत चतुर हैं भाव ज्ञान में न भूले। "श्रेयः श्रुतिं भक्तिमुदस्य ते विभो क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये। तेषामसौ क्लेशल एवशिष्यते नान्यद्यथास्थूलतुषावघातिनाम्" ॥ ४॥६१ ॥

राग मलार—कोसल राय के कुंअरोटा। राजत रुचिर जनकपुर पैठत स्याम गौर नीके जोटा ॥१॥ चौतनी सिरनि कनकखलि काननि कटि पट पीत सोहाए। उर मनिमाल विसाल विलोचन सीय स्वयंवर आए ॥ २ ॥ बरनि न जात

मनहि मन भावत सुभग अवहि वय थोरी। भइ है मगन विधु वदन विलोकत वनिता चतुर चकोरी ॥ ३ ॥ कहं सिवचाप लरिकवनि बूझत विहंसि चितै तिरछो हैं। तुलसी गलिन भीर दरसन लगि लोग अटनि अवरोहैं ॥ ४ ॥ ६२ ॥

कुअरौटा कहं कुअरे जोटा जोड़ी ॥ १ ॥ चौतनी टोपी कनककली सोना की कलिकाकार कुंडल वा पीत रंग के पुष्प की कली कान पर खोसे हैं ॥ २ ॥ धरनि इ० सु० ॥ ३ ॥ अटनि अवरो हैं अटारिन पर चढ़े हैं ॥ ४ ॥ ६२ ॥

ए अवधेस के सुत दोऊ। चढ़ि मंदिरनि विलोकति सादर जनकनगर सब कोउ ॥ १ ॥ स्याम गौर सुंदर किसोर तन तून बान धनु धारी। कटि पट पीत कंठ मुकुतामनि भुज विसाल बल भारी ॥२॥ मुख मयंक सरसोरुह लोचन तिलक भाल टेढ़ी भौंहैं। कल कुंडल चौतनी चारु अति चलत मत्त गज गौंहैं ॥३॥ विश्वामित्र हेतु पठए नृप इन्हहि ताडिका मारी। सप राख्यौ रिपु जीति जानि जग मग मुनिबधू उधारी ॥ ४ ॥ प्रिय पाहुने जानि नर नारिन्ह नयनन्हि अयन दये। तुलसिदास प्रभु देखि लोग सब जनक समान भये ॥५॥६३

गजगौंहैं गज गति से, अयन गृह, जनक समान भए विदेह भए, अपर पद सुगम ॥ ५ ॥ ६३ ॥

राग टोड़ी—बूझत जनकनाथ ढोटा दोउ काके हैं। तमन तमाल चारु चंपक वरन तनु कौने बडभागी के सुकृत परिपाके हैं ॥१॥ सुख के निधान पाये हिय के पिधान लाये ठग कैसे लाडूपाये प्रेम मधु छाके हैं। स्वारथरहित परमारथी कहावत हैं मे सनेहविवस विदेहता विवाके हैं ॥२॥

सील सुधा कें अगार सुषमा के पारावार पावत न पर पार पैरि पैरि थाके हैं। लोचन ललकि लागे मन अति अनुरागे एकरस रूप चित्त सकल सभा के हैं ॥ ३ ॥ जिय जिय जोरत सगाई राम लषन सो आपने आपने भाय जैसे भाय जाके हैं। प्रीति को प्रतीति को सुमिरवे को सेइवे को सरन को समरथ तुलसीस्र तावे हैं ॥ ४ ॥ ६४ ॥

जनक महाराज बूझत हैं कि हे नाथ ए दोउ बालक कोहि के हैं। ए जे नूतन तमाल औ सुंदर चंपा के बरन सम शरीर ते कौने बड़े भागी के सुकृत के फल हैं ॥ १ ॥ अब कवि की उक्ति है सुख के रासि पाय हृदय को पिधान कहैं ढपना लगावत भए भाव जब कोऊ धन पावत है तब गुप्त ठौर में तोपि कै धरत है, इहां गुप्त ठौर हृदय है, ताको पिधान देहाध्यास भूलना है, ठग के लडुआ अस खात भए अर्थात् बिख डारि कै लडुआ ठग खवावत हैं, तब खवइआ अचेत ह्वै जात है तस भए औ प्रेम रूपी मदिरा में छकि गए हैं। कहावत तो रहे स्वारथरहित परमारथी पर सनेह के विशेष बस भए तें विदेहता रहित ह्वै गए हैं। भाव सनेहविवस भए तातें स्वारथसहित औ विदेहता विवा के ताते परमारथ रहित। इहां गोसांई जी यह जनाए कि परमार्थी के फल रूप राम है ॥ २ ॥ सकल सभा के एक रस रूप में चित्त हैं ताते लोचन ललकि के लागे औ मन अति अनुरागे ते लोचन मन शील रूप अमृत के गृह परम शोभा के समुद्र को पैरि पैरि थाके हैं पर पार नाहीं पावत हैं। शील सुधा के अगार कहिबे को यह भाव कि समुद्र सुधा को भवन है। औ यह परम शोभा रूप समुद्र शील रूप अमृत को भवन है। थाके हैं कहिबे को यह भाव कि अघाते नहीं हैं पारावार समुद्र का नाम है। "समुद्रोऽब्धिरकूपारः पारावारः सरित्पतिः" जाके जैसे जैसे भाव हैं तेहि भाव के अनुकूल अपने अपने जिय में राम लषन सो नाना जोरत है। प्रीति करिबे को विश्वास करिबे सुमिरिबे को सेवन करिबे को औ सरन जाइबे को योग्य जो ताको सिंधु ने ताके हैं ॥ ४ ॥ ६४ ॥

राग मलार—ए कौन कहां ते आए। नील पीत पाथोज वरन मनहरन सुभाय सुहाये ॥ १ ॥ मुनिसुत किधौ भूपबालक किधौ ब्रह्म जीव जग जाए। रूप जलधि के रतन सुछवि तिय लोचन ललित लुभाये ॥ २ ॥ किधौ रविसुअन मदन रितुपति किधौ हरिहर वेष बनाए। किधौ आपने सुकृत सुरतरु के सुफल रावरेहि पाये ॥ ३ ॥ भए विदेह विदेह नेहवस देहदसा बिसराए। पुलकगात न समात हरष हिय सलिल सुलोचन छाए ॥ ४ ॥ जनकवचन मृदु मंजु मधुर भरे भगति कौसिकहि भाये। तुलसी अति आनंद उमगि उर राम लषन गुन गाये ॥ ५ ॥ ६५ ॥

श्यामपीत कमल सम वरन औ मन के हरनिहारे स्वाभाविक सुंदर जे ए ते कौन हैं औ कहां ते आए हैं ॥ १ ॥ कैधौं मुनिसुत हैं कैधौं राजा के बालक हैं। इहां मुनि के संग ते मुनिपुत्र का संदेह औ राजकुमार सम देखि राजपुत्र का संदेह वा विश्वामित्र जी के कोई पहिले के संबंधी तो नहीं हैं याते क्षत्री का संदेह कदापि अब के सम्बन्धी होहिं याते ब्राह्मण का संदेह है कैधौं जीव औ जगत को जो उत्पन्न किए जे सोई ब्रह्म हैं। मानसरामायन में स्पष्ट करि लिखा। ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा। उभय वेष धरि की सोइ आवा ॥ इहां अत्यंत शांत औ चमत्कार देखि ब्रह्म कहे। कोऊ अस अर्थ करत हैं कैधौं ब्रह्म जीव ही तो नहीं जगत में जन्मे हैं कैधौं रूप रूपी समुद्र के मणि हैं कैधौं ए लला सुंदर छवि रूप तिय के सुंदर लोचन हैं ॥ २ ॥ कैधौं रविसुअन कहैं हंस हैं, काऊ अस कहत कैधौं रविसुअन कहैं अश्वनीकुमार सो तो नहीं हैं, कैधौं काम वसंत हैं रूप जलधि के रत्न इहां से औ मदन रितुपति किधौं इहां लो अत्यंत रूप देखि संदेह है। कैधौं वेष बनाए भए हरि हर तो नहीं हैं। इहां अति तेजस्वी देखि हरि हर का संदेह है, कैधौं अपने सुकृत रूप कल्पवृक्ष के सुंदर फल आप ही ने

पाए हैं अर्थात् दोऊ भाइन के इहां विश्वामित्र जी को सर्वोत्कृष्ट तपस्वी जानि तप के फल रूप में संदेह है ॥ ३ । नेहवस देहदसा को विसराए ताते विदेह महाराज विदेह भए । इहां भए विदेह विदेह कहिबे को यह भाव कि अवताईं नाम मात्र रहा है सांचे विदेह आज भए हैं वा अब ताईं जगत में विदेह रहे अब ब्रह्मानन्द हूंते विदेह भए । इहां स्वरूपानन्द की बड़ाई जानना, पुलकावली अंग में है, हृदै में हरष नहीं समात है औ नेत्रन ने आंसू छाए भाव जब हर्ष हृदय में न समायो तब नैन के राह बाहर भयो ॥ ४ ॥ जनक जी के सुंदर कोमल औ मीठे औ भगति भरे वचन कौशिक को भाए । गोसाईं जी कहत हैं अति आनंद जो सो हृदय ते उमगि के श्री राम लषन के गुन गावत भए अर्थात् जनक महाराज से सब कहि देत भए ॥ ५ । ६५ ॥

कौसिक कृपाल हू को पुलकित तनु भो । उमगत अनुराग सभा के सराहे भाग देपि दसा जनक की कहिबे को मनु भो ॥ १ ॥ प्रीति के न पातकी दिए हू साप पाप बडो मप मिसि मेरो तव अवध गवनु भो । प्रानहू ते प्यारे सुत मागे दिये दसरथ सत्यसंध सोच सहै सूनो सो भवनु भो ॥२॥ काकसिपा सिरकर केलितूनु धनुसर बालक बिनोद जातुधाननि सो रनु भो । बूझत विदेह अनुराग आचरज बस रिपिराज जाग भयो महाराज अनुभो ॥३॥ भूमि देव नरदेव सचिव परस्पर कहत हम को सुरतरु शिवधनु भो । सुनत राजाकी रीति उपजी प्रतीति प्रीति भाग तुलसी के भगि साहिब को मनु भो ॥ ४ ॥ ६६ ॥

कृपाल जो विश्वामित्र तिन हू को तन रोमांच युक्त भयो अनुराग ..... संत सभा के भाग सराहे औ जनक जी की दशा देखि के ..... कहिबे को मनु भो ॥ १ ॥ अब वृत्तान्त कहत हैं पातकी ने ..... ने प्रीति के नहीं है औ शाप दिए हू में बड़ो पाप है तब मख के

बहाने मे मेरो अवध में गमन भयो। भवन सूनो सो भयो शोच सहे पर सत्यसंधि जे दशरथ महाराज ते मान हू ते प्यारे सुत मांगिवे ते दिए॥२ शिव विषे जुग्फ मात्र है अर्थात् कुंडी आदि नहीं तरकस औ हाथ में जे धनु बान ते खेलवाड़ के हैं। भाव युद्ध के नहीं औ बालविनोद से अर्थात् रोष मे नहीं औ युद्ध निशाचरन के नायकन में भयो, भाव साधारन मे नहीं। "जानूनिरक्षांसि दधानिपुष्मातीनि जातुधानः। राक्षस नायक इत्यर्थः॥ अनुराग औ आश्चर्य के बस हैं विदेह महाराज वृझन हैं कि हे ऋषिराज यज्ञ भयो तब विश्वामित्र जू बोले कि हे महाराज अनुभो अर्थात् सम्यक् भयो वा महाराज अनुभो हे महाराज आप ही अनुभव करिए जौ यज्ञ न पूर्ण होता तो हम आनंदपूर्वक इहां कैसे आवते॥ ३॥ सुनत मात्र रघुनाथ में राजा की रीति उपजी भाव निश्चय भयो कि राजकुमार हैं नाते उपजी औ प्रीति प्रतीति उपजी भाव ऐसे राक्षसन के मार हैं तो क्यों न धनु तोरेंगे औ ब्राह्मण राजा मंत्री परस्पर कहते हैं कि हम को शिवधनु कल्पवृक्ष भयो भाव यही शिवधनु के प्रसाद से यह दर्शन पाए। राजा की रीति कहे व्यवहार सुनत मात्र प्रतीति औ प्रीति उपजी कि भाग तुलसी के हैं कि भले साहेब को गुलाम भयो। भाव जेहि साहब के पाए ते ब्रह्मज्ञ जे जनक महाराज तेऊ अपने को कृतार्थ माने॥ ५॥ ६६॥

चाप्यो भले बेटा देव दसरथ राय के। जैसे राम लषन भरत रिपुहन तैसे सील सोभा सागर प्रभाकर प्रभाय के॥१॥ ताडका संघारि मष राषे नीके पाले ब्रत कोटि कोटि भट किए एक घाय के। एक बान बेगही उडाने जातुधान जात सूषि गए गात ह्वै पतउआ भये बाय के॥ २॥ सिला छोर छुवत अहल्या भई दिव्य देह गुन पैये पारस के पंकरुह पाय के। राम के प्रसाद गुरु गौतम ससमु भये रावरेहु सतानंद पूत भये माय के॥ ३॥ प्रेम परिहास पोषे बचन परस्पर कहत सुनत सुष सबही सुभाय के। तुलसी सराहे भाग

कौसिक जनक जू के विधि के सुढर होत सुढर सुदाय के।४।६७

हे देव हे महाराज राजा दशरथ के चारो बेटा भले हैं जैसे राम लषन तैसे भरत शत्रुहन शील शोभा के समुद्र औ प्रताप के सूर्य हैं। इहां चारो भाइन को वर्णन करि यह जनाये कि आप को अन्यत्र वर न ढूंढ़नो परैगो ॥ १ । ताड़कादि वध फेर कहत हैं ताड़क मारि कै यज्ञ राखे औ प्रतिज्ञा भले पाले कोटि कोटि भट एक एक चोट के किए तिन में एक चोट के जातुधानै बान के वेग से उड़ाने जात हैं ताते तिन के गात्र सूखि गए बवंडर के पत्ता सम भाव फिर भूतल में न आए ॥ २ ॥ शिला के कोर छुअत अहल्या दिव्य देह भई चरण कमल के पारस के गुण देखे भाव जैसे पारस के छुए लोहा सोना होत तैसे जड ते दिव्य भई श्रीराम के प्रसाद ते रावरे गुरु जो गौतम जी ते खसम भए । भाव रहुआपन छूटा औ सतानंद अपने माता के पूत भए । भाव वे महतारी के हुअर कहावत रहे सो छुटा ॥ ३ ॥ प्रेम औ परिहास तें पुष्ट भए जे सुंदर भाव के वचन परस्पर कहत हैं ते सुनत मात्र सब ही को सुख भयो । गोसाईं जी कहत हैं कि कौशिक जनक जी को भाग सराहे औ कहे विधि अनुकूल से सुंदर दांव के पासा सुढार होत है इहां सुंदर पासा परना रघुनाथ का आगमन है ॥ ४॥६७ ॥

ए दोऊ दसरथ के बारे । नाम राम घनस्याम लषन लघु नप सिष अंग उज्यारे ॥ १ ॥ निज हित लागि मांगि आने मै धरम सेतु रघवारे । धीर बीर विरुदैत बांकुरे महा बाहु बल भारे ॥ २ ॥ एक तीर तकि हती ताडका किय सुर साधु सुपारे । जज्ञ राषि जग साषि तोषि रिषि निदरि निसाचर मारे ॥ ३ ॥ सुनितिय तारि स्वयंवर पेषन आए मुनि वचन तिहारे । राउ देषि है पिनाक नेक जेहि नृपति लाज जर जारे ॥ ४ ॥ सुनि सानंद सराहि सपरिजन वारहि वार निहारे । पूजि सप्रेम प्रसंसि कौसिकहिं भूपति सदन

सिधारे ॥ ५ ॥ सोचत सत्य सनेह विवस निसि नृपहि गनत
एतारे । पठये बोलि भोर गुर के संग रंगभूमि पगुधारे ॥६॥
नगर लोग सुधिपाइ मुदित सबही सब काज बिसारे । मनहुं
मघा जल उमगि उदधि रूप चले नदी नद नारे ॥ ७ ॥ ए
किसोर धनु घोर बहुत बिलपाति बिलोकनिहारे । टग्यौ न
चांप तिन्ह तें जिन्ह सुभटनि कौतुक कुधर उपारे ॥ ८ ॥ ए
जाने बिनु जनक जानियत करिपन भूप हंकारे । नतरु सुधा-
सागर परिहरि कत कूप पनावत पारे ॥ ९ ॥ सुषमा सील
सनेह सानि मानो रूप बिरंचि सँवारे । रोम रोम पर सोम
काम सत कोटि वारि फेरि डारे ॥ १० ॥ कोउ कहै तेज
प्रताप पुंज चितये नहि जात भियारे । छुअत सरासन सलभ
जरे गो ये दिनकर बंस दियारे ॥ ११ ॥ एक कहै कछु होउ
सुफल भए जीवन जनम हमारे । अवलोकि भरि नयन भानु
तुलसी के प्रानहुते प्यारे ॥ १२ ॥ ६८ ॥

उज्यारे कहे सुंदर ॥ १ ॥ धर्मसेतु के रक्षक धीर वीर विरदवाले बांके आजानु बांहु और भारी बल वाले जे श्री राम लषन तिन को निज हित लागि मैं मांगि आने ॥ २ ॥ ३ ॥ धनु तोरै सो वरै जानकी यह बचन सुनि नृपति लाज जरिजारे लाज रूप ज्वर ने राजनि को जिन्ह ने जारे हैं ॥ ४ ॥ सपरिजन परिवार सहित जनक जी ॥ ५ ॥ सत्य औ सनेह के बिवस ते सोचत हैं । भाव न सत्यै छोड़न बनत न रामसनेहै । राजा को तारा गनत रात्रि गई । भाव कब बिहान होयगो ॥६॥ मानो मघा नक्षत्र के जल ने नदी नारे उमगि के समुद्र के ओर चले इहां सुधि पावना मघा को जल है, उदधि श्री राम को संकल्प है, नदी नद नारे पुरवासी हैं ॥ ७ ॥ कौतुक में कुधर कहे पर्वत को जिन्ह उखारे अर्थात् रावणादि ॥ ८ ॥ इतारे बोलाए इहां सुधासागर रघुनाथ हैं औ खारा कूप अवधेश हैं ॥ ९ ॥ परम शोभा शील औ नेह मानि

कै मानो इन के रूप ब्रह्मा ने संचरि फिरि रोम रोम पर मन
चंद्रमा औ काम नेवलाचरि करि डारे ॥ १० ॥ कोऊ कहत हैं
भैया तेज औ प्रताप के पुंज हैं तातें नितए नहीं जात हैं। ए कि
वंस दीपक के छुअन मात्र गरासन रूप फनिगा नरंगो ॥११॥
जी कहत हैं आजु नयन भरि मान हुंते प्यारे के अवलोके ॥१२॥

जनक विलोकि बार बार रघुवर को। मुनिपद
नाय आयसु अमीम पाइ एई बातें कहत गवन कियो
को ॥ १ ॥ नींद न परत राति प्रेम पन एक भांति रहे
सकोचत बिरंचि हरिहर को। तुम्ह ते सुगम सब देव
को अब जसु हंस किये जोगवत जुग पर को ॥ २ ॥
संग कौसिक सुनाये कहि गुनगन पाए देखि दिनकर
दिनकर को। तुलसी तऊ सनेह को सुभाउ बाउ
चल दल को सो पात करै चित चर को ॥ ३॥६९ ॥

एई बाते कहत अर्थात् श्रीराम लक्ष्मण विषयक बातें कहत
राति में नींद नाहीं परत जाते प्रेम औ प्रतिज्ञा एक भांतिहै। भाव
योग दूनो नाहीं ताते सोचत हैं औ ब्रह्मा विष्णु शिव को सकोच
हे देव ! तुम ते सब सुगम सुनत आए सो अब देखिबे को है अ
की उक्ति है कि श्री जनक महाराज अपने यस को हंस किए ता
पर के योगवत हैं इहां दोऊ पर प्रेम औ पन है ॥ २ ॥
ऐसे महात्मा अर्थात् अनहोनी करनिहारे ते संग लेआए औ
के गुनगन मारीचादि वध औ अहल्या को पापान ते चैतन्य
कहि सुनाए औ आपो दिनकर कुल दिन कर को देखि आए
जाके देख ब्रह्मानंदो भूलि गयो सो गोसाईं जी कहत हैं ताहू पर
को सुभाव मानों वायु है सो पीपर के पात के समान चि
चल करत है ॥ ३॥६९ ॥

राग केदारा। रंगभूमि भोरे हो जादुकै। राम
लखि लोगलटि है लोचन लाभ अघाइकै ॥ १ ॥ भु

र घर पुर बाहर इहै चरचा रही छाइकै। मगन मनोरथ
ोद नारि नर प्रेम विवस उठै गाइकै ॥ २ ॥ सोचत विधि
ति समुझि परस्पर कहत वचन विलपाइकै। कुअर
कशोर कठोर सरासन असमंजस भयो आइकै ॥ ३ ॥
सुकृत संभारि मनाइ पितर सुर सोस ईस पद नाइ कै।
घुवर कर धनुभंग चहत सब अपनो सो हितु चितु लाइकै।
। ४ ॥ लेत फिरत कनसुई सगुन सुभ बूझत गनक बुलाइ-
कै। मुनि अनुकूल मुदित मन मानहु धरत धीरजहि धाइकै
। ५ ॥ कौसिक कथा एक एकनि सो कहत प्रभाउ जनाइ
कै। सोय राम संयोग जानियत रच्यौ विरंचि बनाइकै ॥६॥
एक सराहि सुबाहु मथन बर बाहु उछाह बढाइकै।
सानुज राज समाज विराजिहै राम पिनाकु चढाइकै ॥७॥
बडी सभा बडो लाहु बडो जसु बडो बडाई पाइकै। को
सोहिहै और को लायक रघुनायकहि बिहाइकै ॥ ८ ॥
गवनिहै गंवहि गवाइ गरब गृह नृपकुल बलहि लजाइ-
कै। भली भांति साहिब तुलसी के चलिहै व्याहि बजाइकै
॥ ९॥७० ॥

रंग इ० सु० ॥१॥ मनोरथ जनित आनंद में नारि नर मगन हैं। प्रेम के विशेष वस हैं ताते गाय उठे ॥ २ ॥ शोचत इ० सु० ॥ ३ ॥ अपनो सो हितु चितु लाय कै अपने हित समान चित्त लगाय कै ॥४॥ कनसुई कानाफुसुकी अर्थात् सलाह की बातें सुनत फिरत औ ज्योतिषी बोलाय कै सुभ सगुन बूझत अनुकूल सगुन सुनि मुदित होत हैं मानो सगुन नाहीं सुनत हैं धीरज को धाइ कै धरत हैं ॥५॥ प्रभाव जनाय कै कौशिक की कथा एक एकनि सो कहत। भाव जो नहीं होनिहार ताके करनिहारे विश्वामित्र जी हैं ताते सीताराम जू को संयोग

विरंचि ने बनाए के रचनो गए जानियत है ॥ ६ ॥ एक उजार बहु के सुधारू के गर्वनिहार जो रघुनाथ की भेष धारू है ताको सखी कहत हैं कि पिनाक यज्ञ के भनुष सहित श्रीरामचन्द्र समान में देखे हैं ॥ ७ ॥ वही ३० शु० ॥ ८ ॥ नूपन के कुल कहँ समूह बनावहँ ॥ गर्व पल को संघात गर्वाहि मे अर्थात् गढ़ने मे शूर को गर्वनि ॥ ९॥७० ॥

राग टोड़ी—भोर फूल बीनबे को गए फुलवाई है। सोभनि टपारे उपबीत पीत पट कटि दोना बाम करनि सलोने भए सवाई है ॥ १ ॥ रूप के अगार भूप के कुमार दुई मार गुरु के प्रान अधार रंग सियकाई है। नीच ज्यों टारत करे रूप रावे अनुमेरे कौसिक से कोहो बस किये टुइ भाई है ॥२॥ सपिन सहित तेहि औसर विधि संजोग गिरिजा पूजिवे को जानकी जू आई है। निरपे लखन राम जाने रति पति काम मोहि मानो मदन मोहनो मूडनाई है ॥ ३ ॥ राघो जू ओ जानकी लोचन मिलिवे को मोद कहिवे को जोग न मैं बाते सौ बनाई है। स्वामी सोय सपिन्ह लखन तुलसीको तैसो तैसो मनभयो जाको जैसोबै सगाई है ॥४॥७१

भोरहीं फूल बीनिवे को फुलवारी में गये हैं शिरन पर टोपी औ पीत यज्ञोपवीत है और पीत पट कटि में है इहां देहली दिपक न्याय करि के पीत को दूनो के संग करना औ बाम हाथन में दोना है औ सवाई सलोने भए हैं। सवाई होवे को यह भाव कि अंग आवरण राखे हैं वा कदापि कोऊ आए अपने रूप से दबाय न लेय ताते सवाई भए वा कुछ मदन महीप का भी रंग आय पड़ा है ताते वा विदेह महाराज की वाटिका की छबीली फूली कलीन ते बाम अंग भूषित है ताते सवाई सलोने भए हैं सो जब कलिन ते एतना भए तब आगे नहीं जानते कि केतना होहिंगे वा दोना लेने से एक मुद्रा विचित्र की

ताते बनाई कहे एक तो रूप के गृह हैं भाव रूप मात्र के आधारभूत हैं ताहू पर भूप के कुमार हैं अर्थात् काहू साधारन के नहिं ताहू पर सुकुमार हैं औ गुरु के प्राण आधार हैं तथापि संग में सेवकाई करत हैं कैसे करन सो लिखत हैं नीच जैसे टहल करै तस करत औ रूप राखे काम करत हैं। कौसिक ऐसे क्रोधी को दोऊ भाइ बस किए हैं॥२॥ श्रीलखनलाल श्रीराम जू को निरखे जाने कि यह राजकुमार नहीं हैं बसंत औ काम हैं ताते मोहि गई मानो देखि न मोही काम ने मूढ पर मोहनी नाई है ताते मोही ॥३॥ श्रीरावव जू औ श्रीजानकी जू के नजरि मिलवे को जो आनंद सो कहिवे योग्य नहीं है। हम ने बनाई बातें ऐसी कही हैं रघुनाथ जी को औ जानकी जू को सखिन को औ लखनलाल जू को औ तुलसी को जाकी जैसी सगाई है ताको तैसो मन होत भयो इहां आनंद में भूलि गोसाईं जू अपने को प्रत्यक्ष सम कहे ॥ ४॥७१ ॥

पूजि पारवती भले भाय पाय परि कै। सजल सुलोचन सिथिल तन पुलकित आवे न वचन मन रह्यौ प्रेम भरि कै ॥ १ ॥ अंतरजामिनि भवभामिनि स्वामिनि सोही कही चही बात मातु अंत तौ ही लरि कै। मूरति कृपाल मंजु माल दै बोलत भई पूजो मनकामना भावतो बरु वरि कै॥२॥ राम कामतरु पाइ बेलि ज्यौं बोडी बनाइ माग कोपि पोषि फैलि फूलि फरि कै। रहौगी कहोगो तब सांची कही अंबा सिय गहे पांय है उठाय माथे हाथ धरिकै ॥ ३ ॥ मुदित असीस सुनि सीम न इ पुनि पुनि विदा भई देवी सो जननि डर डरि कै। हरषी सहेली भयो भावतो गावती गीत गौनी भवन तुलसी के प्रभु को हियो हरिकै ॥४ ।७२॥

पूजि इ० सु० ॥ १ ॥ अंत तो हौं लरिकै कहिवे को यह भाव कि अंतर्जामिनी सो कुछ न कहा चाहिए क्योंकि सब जानत ही हैं पर

कहिबे को जो चाहत हौं सो लरिका हौं सो कृपाला जो मूरति हैं
सुंदर माला दै करिकै बोलति भई कि मन भावतो वर वरि कै तुम्हा
मनकामना पूजि जाउ श्रीरघुनाथरूप कल्पवृक्ष पाइकै फैली। बनी
समान बनाय करि कै माग कोपि ते तुष्ट पुष्ट है फैलि फूलि पति
जब रहोगी तब कहोगी कि अंबा ने सांची कही यह सुन जानकी
चरन गहे तब है कहै भाव यह क्या करती हौं औ माथे हाथ धरि
उठाय लिए ॥ ३॥४॥७२ ॥

रंगभूमि आये दसरथ के किसोर हैं। पेपन सो देख
चले हैं पुर नर नारि वारे दूटे अंध पंगु करत निहो
हैं ॥ १ ॥ नील पीत नीरज कनक मरकत धन दामि
वरन तन रूप के निचोर हैं। सहज सलोने राम लखन
ललित नाम जैसे सुने तैसेई कुअर सिरमोर हैं ॥ २ ॥ पा
सरोज चारु जंघा जानु उरु कटि कंधर विसाल बाहु बी
बरजोर हैं। नीके कै निषंग कसे कर कमलनि लसै ब
विसिषासन मनोहर कठोर हैं ॥ ३ ॥ काननि कनकचू
उपवीत अनुकूल पियरे दुकूल झिलमिल चारु छोर हैं।
सिय नयन विधु बदन टेवारे सिर नव निज अंगनि ठौ
ठौर ठौर हैं ॥ ४ ॥ सभा सरवर लोक कोकनद काहू
प्रमुदित मन देखि दिनमनि भोर हैं। अनुज सखी
मेलि मखिपाल भये कहुक कालु कहु मृगुद अकोर हैं।
माई मो कहत बात कौसिकहि सकुचात बोल मनोहर
बोलत बार बार हैं। सावरुप सरवरि विलोकत सरवरि न
हृदय को हरिन कैसि मृगया को चार है ॥ ६ ॥ ७३ ॥

[illegible]

को निरोग करत हैं। उत्तर सुनत राजकिशोर शिरमौर की बात सुनिये हैं ॥१॥ श्याम कमल औ मरकत मणि औ मेघ के वर्ण सम तन श्रीराम जू को है औ पीत कमल औ कनक औ दामिनी के वर्ण सम तन श्रीलक्ष्मण जू को है औ रूप को निचोर है अर्थात् उत्तमांग हैं औ सहज ही दोऊ भाई सलोने हैं अर्थात् बनावट ते नहीं औ नामौं सुंदर हैं जैसे सुने रहे तैसेई दोऊ भैया कुअंग के शिरमौर हैं ॥२॥ सुंदर चरण कमल औ जंघा औ ठेहुन औ उरु औ कटि औ उन्नत स्कंध हैं औ बाहु बड़े जोरावर हैं। शंका। बाहन की जोरावरी कैसे जाने। उत्तर। सुबाहु आदि को बध सुनिये तें। जंघा उरु में पुनरुक्ति शंका नहीं करना क्योंकि जंघा नाम ठेहुन के नीचे के भाग का है औ ठेहुन के ऊपर के भाग के उरु नाम है, जाको आज कालि लोग जंघा कहत हैं। पर गोसाईं जी शास्त्र रीति ते लिखे। जंघातु प्रसृताजानूरुप-र्वाष्ठीवदाश्रियाम्। सक्थिक्लीवपुमानुरुस्तम्भोऽपुंसि वङ्क्षणः। इत्यमरः जंघाप्रसृतौ द्वेजंघायाःजानु उरुपर्वअष्ठीवत्स्त्रीणिजानुनःसक्थिउरूद्वेऊरोः ॥ भली भांति तरकस कसे हैं औ करकमलनि में बान धनुष हैं ते देखिवे में तो मनोहर पर कठोर हैं ॥ ३ ॥ कानन में पुष्पाकार सोने के कुंडल हैं औ अनुकूल यज्ञोपवीत है अर्थात् जस स्त्री को चाहिए औ पीत रंग को वस्त्र है तामें आछे किनारे शोभत हैं अर्थात् मोती मणि आदि करि कै, कमल सम नयन औ चंद सम मुख हैं, टोपी सिरन में है, नख ते शिखा पर्यंत अंगन में ठौर ठौर ठगोरी अर्थात् जहां जाइ मन तहईं लोभाई ॥ ४ ॥ सभा जो सोई श्रेष्ठ तड़ाग औ लोग सब जो हैं सोई कमल औ चक्रवाक के समूह हैं, ते भोर के दिनमणि रघुनाथ के देखि प्रमुदित भए, मूढ़ मन मैले आशावाले जे महिपाल हैं ते कछु उल्लू अर्थात् घुघुआ कछु कुमुद कोई कछुक चकोर भए। कोऊ अस कहत हैं महिपाल जे मूढ़ ते उलूक औ जे नहीं सहनेवाले ते कुमुद औ जे मन मैले ते चकोर भए ॥ ५ ॥ यद्यपि बोल घन सम गंभीर हैं पर विश्वा-मित्र ते सकुचात हैं ताते भाई ते धीरे धीरे बात कहत हैं सन्मुख सब के हैं औ सब के भली भांति देखत हैं औ कृपा से हंसि कै तुलसी के ओर हेरत हैं ॥ ६ ॥ ७३ ॥

एई राम लषन जी मुनिसंग आए हैं। चौतनी चोलना काछे सपि सोहैं आगे पाछे आछेहु तें आछे आछे भाव भाये हैं ॥१॥ सांवरे गोरे सरीर महा बाहु महाबीर कटि तूल तीर धरे धनुष सुहाए हैं। देषत कोमल कल अतुल विपुल बल कौसिक कोदंड कला कलित सिषाये हैं ॥ २ ॥ इन्हो ताडिका मारी गौतम की तीय तारी भारी भारो भूरि भट रन बिचलाये हैं। रिषि मष रषवारे दसरथ के दुलारे रंग भूमि पगुधारे जनकु बुलाये हैं ॥ ३ ॥ इन्ह के बिमल गुन गनत पुलकित तन सतानंद कौसिक नरेसहिं सुनाये हैं। प्रभु पद मन दिये सो समाज चित किए तुलसि हुलसि हिये तुलसिहु गाये हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

जे राम लषन मुनि संग आए हैं ते एई हैं, हे सखी टोपी औ कुरता पहिरे हैं औ आगे पाछे शोभत हैं अर्थात् आगे राम जी पाछे लक्ष्मण जी। सुंदर हू ते सुंदर सुंदर हैं औ भला भाव जो कोई पहिरे है ताहू को भाए हैं वा भले यह भैया हैं ताते हम सब के भाए हैं वा सुंदर हू ते जो सुंदर ताहू ते सुंदर सुंदर भैया हैं ताते भाए हैं वा भला भाव है जेहि को अर्थात् विश्वामित्र जी तिन के भाए भए हैं ॥ १ ॥ देखत में सुंदर कोमल हैं पर बड़े बलवान नहीं तुलत हैं वा बहुत बल हैं अतएव अतुल हैं औ विश्वामित्र जी ने सुंदर धनुर्विद्या की कला इन को सिखाए हैं ॥ २ ॥ जनक जू के बोलाए ते रंगभूमि में पग धरे हैं इन के बिमल गुन गन को पुलकित तन ते सतानंद औ विश्वामित्र जू नरेश को सुनाए हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

रागकान्हरा—सोय स्वयंवर माई दोउ भाई आए देषन ... चली प्रमदा प्रमुदित मन प्रेम पुलकि तन मनहु मत्त कुंजर पेषन ॥ १ ॥ निरषि मनोहरताई सुष पाइ कहै एक सो भरि भाग हम धन्य मानिए दिन एषन। तुलसी

सहज सनेह सुरंग सब सो समाज चित्त चित्रसार लागो लेपन ॥ २ ॥ ७५ ॥

प्रमदा स्त्री पेखन कहँ देखन ॥ १ ॥ भूरि बहुत, खन कहँ क्षण, गोसाईं जी कहत हैं सो सब समाज नारिन को अपने सहज सनेह रूपी सुंदर रंग से अपने चित्त रूपी चित्रसार में लिखने लगीं ॥ २ ॥७५॥

राग गौरी —राम लषन जब दृष्टि परेरी । अवलोकत सब लोक जनकपुर मनो विधि विविध विदेह करेरी ॥ १ ॥ धनुष जग्य कमनीय अवनि तलकौतुक ही भए आय परेरी । छबि सुरसभा मनहु मनसिज कि कलित कल्पतरु रूप फरेरी ॥ २ ॥ सकल काम बरषत मुष निरषत करषत चित हित हरष भरेरी । तुलसी सबै सराहत भूपहिं भले पैत पासे सुढर ढरेरी ॥ ३ ॥ ७६ ॥

री सखी जब ते राम लषन दृष्टि परे तब ते जनकपुर के लोग देखत हैं अर्थात् एकटक देखत हैं। मानो विधाता ने अनेकन विदेह किए हैं। भाव विदेह महाराज के डाह ते, इहां विदेह कहिवे ते सब को देहाध्यास रहित जनाए ॥ १ ॥ धनुष यज्ञ के सुंदर जो भूमि तल है तामें कौतुकही भाय कै खड़े भए हैं। मानो धनुष यज्ञ की सुंदर भूमि नहीं है छवियुक्त सुरसभा जो सुधर्म्मा सो है औ श्रीराम लषन नहीं हैं काम के शोभित कल्पवृक्ष हैं औ राम लषन का जो रूप है सो रूप नहीं है तेहि कल्पवृक्ष को फल है। इहां दुइ कल्पवृक्ष जानना ॥२॥ मुख निरखत मात्र में सकल कामना को बरषत हैं इहां कल्पवृक्ष ते अधिक जनाए क्योंकि कल्पवृक्ष छाया के नीचे गए फल देत है औ ए देखत मात्र औ हर्ष भरे जेहि तन के चित्त तेहि को कर्षत हैं वा यद्यपि चित्त चोरावत हैं तथापि हित मानि हर्ष भरे वा चित को तो चोरावत हैं पर हित ते हर्ष भरत हैं । गोसाईं जी कहत हैं कि जनक महाराज के सब सराहत हैं कि भले दाव के पासे सुंदर परे हैं। भाव जो पन किए ताको भलो फल पाए ॥ ३ ॥ ७६ ॥

नेकु सुमुखि चितु लाइ चितौरी । राजकुअर मूरति रचिबे को रुचि रुचि विरंचि श्रमु कियो है कितौरी ॥ १ ॥ नख सिख सुंदरता अवलोकत कह्यौ न परत सुख होत तितौरी। सांवर रूप सुधा भरिबे कहु नयन कमल कल कलस रितौरी ॥ २ ॥ मेरे जान इन्हहि बोलिबे कारन चतुर जनक ठयो ठाठ इतौरी। तुलसी प्रभु भंजिहै संभुधनु भूरि भाग सिय मातु पितौरी ॥ ३ ॥ ७७ ॥

अरी सुमुखि तनक चित लगाय कै देखु। ब्रह्मा ने राजकुंअर की मूरति रचिबे की रुचि ते केतनो श्रम कियो है। नख ते सिख लौं सुंदरताई के अवलोकत जेतना सुख होत है तेतना कहि नहिं परत। सांवर रूप जो कोई अमृत है ताको भरिबे को सुंदर नयन कमल रूप कलश को खाली करो। इहां और ओर न देखनो खाली करना है॥२॥ मेरे जान चतुर जनक ने इन्हें बोलिबे कारन इतो ठाट ठयो है। तुलसी के प्रभु शंभुधनु तोरिहैं। भूरिभाग जानकी जू के माता औ पिता के हैं ॥ ३॥७७ ॥

राग सारंग। जब ते राम लषन चितयेरी। रहे एकटक नर नारि जनकपुर लागत पलक कलप बितयेरी ॥१॥ प्रेम बिबस मागत महेस सो देषत ही रहिये नितएरी। कै ए सदा बसहु इन्ह नयनन्हि कै नयन जाहु जितयेरी॥२॥ कोउ समुझाय कहै किन भूपहिं बडे भाग आए इतयेरी। कुलिस कठोर कहां संकरधनु मृदु मूरति किसोर कितए री ॥ ३ ॥ विरचत इन्हहिं विरंचि भुवन सब सुंदरता पोजत रितए री। तुलसिदास ते धन्य जनम जन मन क्रम वच जिन्ह के हित ए री ॥ ४॥७८ ॥

जब ते इ० सुगम ॥ ४॥ ७८ ॥ टिप्पणी—नर नारियों को पलक गाने का समय एक कल्प के समान मालूम होता है अर्थात् वे लोग पलक

निमेष भर के लिये भी राम लषन का दर्शन नहीं छोड़ना चाहते ॥१॥ प्रेम के विशेष वश होकर प्रेम से मांगते हैं कि ये यहीं रहें वा जहां जायं वहां मेरे नेत्र भी जायं ॥ २ ॥ ब्रह्मा ने इन की सुन्दरता बनाते समय भुवन भर की सुन्दरता लिये अर्थात् खाली कर दिये। तुलसी दास जी कहते हैं कि जिन के मन वच कर्म से ये हित हैं उन के जन्म धन्य हैं ॥ ४ ॥ ७८ ॥

सुनु सखि भूपति भलोइ कियो री। जेहि प्रसाद अवधेसु कुअंर दोउ नगर लोग अवलोकि जियोरी ॥ १ ॥ मानि प्रतीति कहें मेरे ते कत मंदेहबस बारत हियो री। तौलौं है यह संभुसरासन श्री रघुवर जौलौं न लियोरी ॥ २ ॥ जेहि विरंचि रचि सीय सवारी अरु रामहि ऐसो रूप दियो री। तुलसिदास तेहि चतुर विधाता निजकर यह संयोग सियोरी ॥ ३॥७९ ॥

सुन इ० मु० ॥ ७९ ॥ टिप्पणी—तुलसीदास जी कहते हैं कि जिस ब्रह्मा ने सीता को संवारा और राम को ऐसा रूप दिया है उसी चतुर विधाता ने यह संयोग (दोनों का मेल वा विवाह) भी सियो कहें सीया अर्थात् रचा है ॥ ३॥७९ ॥

अनुकूल नृपहि सूलपानिहैं। नीलकंठ कामन्यसिंधु हर दीनबंधु दिनदानिहैं ॥ १ ॥ जो पहिलेहि पिनाक जनक को गए सौंपि जिय जानिहैं। बहुरि विलोचन लोचन के फल सबहि सुलभ किये आनिहैं ॥ २ ॥ सुनियत भव भाव ते राम हैं सिय भावतो भवानि हैं। प्रगटत प्रीति प्रतीति पयजपनु रहे काज ठटु ठानिहै ॥ ३ ॥ भये विलोकि विदेह नेहबस बालक विनु पहिचानिहै। होत हरे होने विरवनि दल सुमति कहति अनुमानिहै ॥ ४ ॥ देखियत

कारयुक्त यद्यपि नहीं बोलत हैं ॥ ५ ॥ भानि हैं तोरि हैं ॥ ६ ॥ सकल सुमंगल के खानि हैं ताते नारि नर व्याह उछाह देखिहैं ॥ ७ ॥ ८० ॥

राग केदारा—रामहि नीकै कै निरपि सुनयनी । मनसहु अगम समुझि यह अवसरु कत सकुचत पिकबयनी ॥१॥ बडे भाग मखभूमि प्रगट भई सोय सुमंगल अयनी । जाकारन लोचन गोचर भइ मूरति सब सुख दयनी ॥२॥ कुलगुरु तिय के बचन मधुर सुनि जनक जुवति मति पयनी । तुलसी सिथिल देह सुधिबुधि करि सहज सनेह बिषयनी ॥ ३॥८१ ॥

श्री सतानन्द की पत्नी सुनैना जू से कहति हैं कि श्रीराम को नीके निरखहु हे पिकबैनी मनो ते अगम अर्थात् श्रीराम हैं अस समुझि के फिर कत सकुचति हौ ॥ १ ॥ सीय सुमंगल को गृह बड़े भाग्य ते यज्ञ भूमि में प्रगट होती भई जा कारण ते सब सुख देनिहारी मूरति नैनन की विषै भई। श्रीमद्रामायणे विश्वामित्रं प्रति जनकवाक्यम्। "अथ मे कृषतः क्षेत्रं लांगलादुत्थिता ततः। क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्नासीतेति विश्रुता" अथेति वृत्तान्तरारम्भे क्षेत्रं यागभूमिम् मम कृषतः मयि कर्षति अग्निचयनार्थमितिशेषः ऋषभेण कर्षतीत्यादिशास्त्रात् लांगलादुत्थिता आविर्भूता यज्ञक्षेत्रं शोधयता सीताः लाङ्गलपद्धतेर्मया लब्धा ततो नाम्ना सीतेति प्रसिद्धा । पाद्मे च । "अथ लोकेश्वरी लक्ष्मीर्जनकस्य पुरेस्वतः शुभक्षेत्रे हलोत्खाते तारेचोत्तरफाल्गुने अयोनिजा पद्मकरा बालार्कशशिसन्निभा सीतामुखे समुत्पन्ना बालभावेन सुन्दरी। सीतामुखोद्भवात् सीता इत्यस्या नाम चाकरोत्।" भविष्येच। "सर्वर्तुनिकरश्रेष्ठे ऋतौ तु वसुमाकरे। मासि पुण्यतमे विप्र माधवे माधवप्रिये ॥ नवम्यां शुक्लपक्षे च वासरे मङ्गले शुभे। सार्पर्क्षसे च मध्यान्हे जानक्यां जनकालये ॥ आविर्भूता स्वयं देवी योगेषु गतिरुत्तमा"॥२॥ श्री जनक जू की रानी सुनैना जू सानि की घोषी हैं सो कुलगुरु तिय के मधुर बचन सुनि के सहज सनेह विषयनी सुधि करि जो देह के ओर ते शिथिल भई रहीं सो देखि की सुनि

नेत्र ॥ १ ॥ दुअन दुष्ट, जनकपुर रूप आकाश में प्रभु को सुजस रूप विमल चंद अब उगा चाहत है ॥ २ ॥ ८३ ॥

रागटोडी । राजा रंगभूमि आजु बैठे जाइ जाइकै। आपने आपने घल आपने आपने साज आपनी आपनी बर बानिक बनाइकै ॥ १ ॥ कौसिकसहित राम लषन ललित नाम लरिका सलाम लीने पठए बुलाइकै। दरस लालसा बस लोग चले भाय भले विकसत मुष निकसत धाइ धाइकै ॥२॥ सानुज सानंद हिए आगे ह्वै जनक लिये रचना रुचिर सब सादर देषाइकै। दिये दिव्य आसन सुपास सावकास अति आछेआछे बीछे बीछे बिछौना बिछाइकै ॥३॥ भूपति-किसोर दुहु ओर बीच मुनिराउ देषिबे को दाउ देषो देषिबो बिछाइकै । उदय सयल सोहै सुंदर कुअर जोहै मानो भानु भोर भूरि किरनि छपाइकै ॥ ४ ॥ कौतुक कोलाहल निसान गान पुर नभ बरषत सुमन सुबिमान रहे छाइ कै। हित अनहित रत विरत विलोकि बाल प्रेम मोद मगन जनमफल पाइकै ॥ ५ ॥ राजा की रजाइ पाइ सचिव सहेली धाइ सतानंद ल्याए सिय सिबिका चढाइकै। रूप दीपिका निहारि मृग मृगी नर नारि बिथके बिलोचन निमेषे बिस-राइकै ॥ ६ ॥ हानि लाहु अनष उछाहु बाहुबल कहि बंदी बोले बिरद अकस उपजाइकै। दीप दीप के महीप आये सुनि पैजपनु को जै पुरुषारथ को औसर भोआइकै ॥ ७ ॥ आनाकानो ऊठहंसी मुहाचाही होनलागी देषि दसा कहत बिदेह बिलषाइकै। धरनि सिधारिऐ सुधारिऐ आगिले काज पूजि पूजि धनु कीजै बिजय बजाइकै ॥ ८ ॥ जनक

भूमि के हरैआ उपरदूआ भूमि धरनि के बिधि बिरचे प्रभाउ जाको जग जईहै। बिहंसि हिय हरषि हटके लषन राम सोहत सकोच सील नेह नारि नई है ॥ ३ ॥ सभा सकल जनक भए बिकल राम लषि कौसिक असीस पन्ना दई है। तुलसी सुभाय गुरु पाय लागि रघुराज ऋषिराज की रजाइ माथे मानि लई है ॥ ४ ॥ ८५ ॥

लछिमन जी की उक्ति है भूपति बिदेह ने जो भई है सो कही ताते ठीक है आंक एक ही कहैं निश्चय करि हांकि कहैं ललकारि कै ॥ १ ॥ प्रतिज्ञा की मर्यादा और भांति ते सुनि गई है। अर्थात् जो तोरे सो वरै कदापि यह नहीं होता तो भूमि के हरैआ औ भूमिधरन के उखरैआ को जीतनिहार जेहि को प्रभाव जगत में बिधि बिरचे हैं तेहि उतरे चांप को मद्धु के प्रताप ते चढ़ाइ कै अपने बल को देखाय देते पर याको फल पापमई है। भाव बड़े के रहते छोटे का प्रथम बिवाह होना अनुचित है अर्थात् छोटा बड़ा दोऊ देव पितर के काम लायक नहीं रहत तथाच स्मृतिः "दाराग्नि होत्रसंयोगं कुरुतेयो ऽग्रजे स्थिते। परिवेता सविज्ञेयः परिवित्तिस्तु पूर्वजः ॥" यह कहनो अनुचित रहा पर मेरो कहनो अनुचित नहीं है क्योंकि लरिकाई बस कहत हौं ॥२॥ हृदय में हरषि के मुमुकाय के श्री राम जू लखन को बरजे तब संकोच शील औ नेह ते श्री लखन लाल की नारि कहैं गर्दन नई भई सोही ।३।४।८५

सोचत जनक पोच पेच परि गई है। जोरि कर कमल निहोरि कहै कौसिक सों आयसु भो राम को सो मेरे उचितई है ॥ १ ॥ बान जातुधानपति भूप दीप सातहू के लोकप बिलोकत पिनाक भूमि लई है। जोतिलिंग कथा सुनी जाको अंत पाये बिनु आये बिधि हरि हारि सोई हाल भई है ॥ २ ॥ आपुही बिचारिऐ निहारिये सभा की गति बैदमरजाद मानो हेतुवाद धई है। दूरद के लिखीहै मन

सो जितौंहैं मन आदि आप के भरोसा के बल सोंहै, कैधौं कोऊ देवता हैं छलते मनुष्य घने हैं, कैधों अपने कुल के प्रभाव से अर्थात् सूर्यवंशी हैं तेहिते तेजयुक्त हैं, कैधौं लरिकाई अर्थात् कुछ आगे पीछे को विचार नहीं है कन्या सुंदर, कीर्ति औ विश्व की विजय बटोरिवे कों, कैधौं विधाता ने इनही को निर्मान कियो है ॥ ४ ॥ हे नाथ हम को अपने प्रतिज्ञा करने को मोह नहीं है और को को कहै सीता हू की विशेष चिंता नहीं है। कदापि विश्वामित्र जू पूछैं कि क्यों नहीं है तापर कहत हैं सोई सोई काटिहैं जोई जोई जेहि ने बोया है। भाव जीव कर्मवस दुख सुख भागी है पर नीकी नीकी जो रघुनाथ की निकाई है सो बनी रहै। यह बात की विशेष चिन्ता है, सो आप के हाथ है, आप कैसे हैं कि करनी नई है। भाव आजु लो ब्रह्मा छोडि सृष्टि कोऊ न करि सके सो आप किए तो यह कौन बड़ी बात है वा आप अनहोनी करनिहार हैं ॥ ५ ॥ विश्वामित्र जू ने आप की बात साधु है साधु है अस कहि के राजा को सराहे फिर कहे कि हे महाराज आप के जिय को जानी आप ने भला ठहराय राखा है। भाव रघुनाथ की निकाईए में सब की भलाई है। यह श्री जनक श्री विश्वामित्र को सम्वाद सुनि लषन हर्षे औ बिलखाने भए जो लोग रहे सो हर्षाने। गोसाईं जी कहत हैं कि यह आश्चर्य नहीं है जाको जई राजा राम हैं सोई मुदित होत हैं, भाव और के रोअतै रोअत जन्म बीतत है ॥ ६॥८६ ॥

सुजन सराही जो जनक बात कही है। रामही सुहानी जानि सुनि मन मानी सुनि नीच महीपावली दहन बिनु दही है ॥ १ ॥ कहैं गाधिनंदन मुदित रघुनंदन सों नृप गति अगहु गिरा न जाति गही है। देखे सुने भूपति अनेक झूठे झूठे नाम साचे तिरहुति नाथ साथो देत सही है ॥ २ ॥ रागउ बिराग भोग जोग जोगवत मनु जोगी जागबलिक प्रसाद सिद्धि लही है। ताते न तरनि तें न सीरे सुधाकरहू तें सहज समाधि निरुपाधि निरवही है ॥ ३ ॥ ऐसेउ अगाध

सोभा अधिकानी तन सुषन की सुषमा सुपद सरसई है ॥३॥ रावरो भरोसो बलु कैहै कोऊ किये छल कैधौं कुल के प्रभाव कैधौ लरिकई है। कन्या.कल कीरति विजय विश्व की बटोरि कैधौं करतार इन्ह ही को निरमई है ॥४॥ पन की न मोर न विसेष चिंता सीता हू की लुनि है पै सोई सोई जोई जेहि बई है । रहै रघुनाथ की निकाई नीकी नीकी नाथ हाथ सो तिहारे करतूति जाकी नई है ॥ ५ ॥ कहि साधु साधु गाधिसुअन सराहे राउ महाराज जानि जिय ठीक भली दई है। हरषे लषन हरषाने बिलषाने लोग तुलसी मुदित जाको राजाराम जई है ॥ ६ ॥ ८६ ॥

सोचत इ०। जनक जू सोचत हैं कि कठिन पेच परि गई है। भात यह प्रतिज्ञा जो किया सो भला नहीं किया। जनक महाराज हस्तकमल जोरि कै निहोरा करि विश्वामित्र जू सो कहत हैं कि आप ने जो रघुनाथ को आज्ञा दिया तामें हम को दुचिताई है, अब दुचिताई को हो कहत हैं ॥१॥ बाणासुर रावण औ सातो दीप के राजा औ लोकपाल के देखत ही पिनाक ने भूमि को लई है अर्थात् भूमि को पकड़ि ल है। जोतिलिङ्ग को अंत नहीं है। यह कथा सुनि के अंत लेइवे को ब्रह्मा ऊपर को गये औ विष्णु जू पाताल को गये पर तेहि लिंग को अंत पाये। ब्रह्मा विष्णु हारि फिरि आए सोई हाल इहां भई है, भाव पिनाक केतना भारी है याको अंत कोऊ नहीं पावत है। ब्रह्मा विष्णु हारि गए लिंग का अंत न मिला यह काशीखंड में लिखा है ॥ २ ॥ हमा ही कहने पर नहीं आप भी विचारिए और सभा की दसा देखिए कि कैसी है रही है जैसे वेद के मर्याद को नास्तिक वाद नासत है। भात तस पिनाक ने धीरज करि दिया है। अब श्रीराम का वर्णन करत हैं कि श्रीराम के मन निर्मोहें है औ तन में शोभा अधिकाय रही है औ मुख की सुन्दर शोभा सरसाय रही है। इहां इन के औ सुरा नए औ बहु बचन शब्द हैं सो आदर में हैं या दोऊ भाव में लगाय लेना ॥३॥

पधीन निरवान को। विनु गुन की कठिन गांठ जड चेतन की छोरी अनायास साधु सोधक अपान को ॥ ३ ॥ सुनि रघुबीर को वचन रचना की रीति भए मिथिलेस मानो दीपक विहान को। मिट्यो महामोह जी को छूट्यो पोच सोच सी को जान्यो अवतार भयो पुरुष पुरान को ॥ ४ ॥ सभा नृप गुर नर नारि पुर नभ सुर सब चितवत मुख करुनानिधान को। एकहि एक कहत प्रगट एक प्रेमवस तुलसीस तोरिए सरासन ईसान को ॥ ५ ॥ ८८ ॥

श्रीरघुनाथ की उक्ति ऋषि इ०। हे रिपिराज आजु श्रीजनक समान राजा को है, काहे ते कि आप एहि भांति ते प्रीति सहित सराहियत हैं तो रागी औ विरागिन के मध्य में बड़भागी ऐसो आन को है ॥ १ ॥ भूमि भोग करत अर्थात् राज भोग तो करत हैं पर वाही में जोग सुख को अनुभवत हैं। इन की गति मननशील जे मुनि तिन हूं के अगम है और को जाने। गुरु औ हर के पद में नेह है, जाको घर में रहि के विदेह है रहे हैं। निर्गुन औ सगुन रूप प्रभु के भजन में अस आन कौन सयान है ॥ २ ॥ कहनि रहनि सब एक भांति की है वैराग्य ज्ञान औ राजनीति सब वेद बुध संमत है इन को, औ मोक्ष के पथिक हैं अर्थात् स्वर्गादि के नहीं जो विनु गुन की कठिन गांठि जड़ चेतन की है ताको वेपरिश्रम छोरि डारी है औ अपने स्वरूप को साधु कहैं भली भांति सोधक हैं ॥ ३ ॥ दीपक विहान को कहिवे को यह भाव कि अपनी बड़ाई सुनि सकुचे ॥ ४ ॥ नृप जनक महाराज गुरु विश्वामित्र जू औ पुर के नर नारि ॥ ५ ॥ ८८ ॥

राग मारू—सुनो भैया भूप सकल दै कान। वज्ररेष गजदसन जनकपन वेदविदित जग जान ॥१॥ घोर कठोर पुरारिसरासन नाम प्रसिद्ध पिनाकु। जो दसकंठ दियो बावों जेहि हरगिरि कियो मनाकु ॥ २ ॥ भूमि भाल भाजत

बोध राघरे सनेह बस बिकल बिलोकियत दुचितई सही है। कामधेनु कृपा कुलसानी तुलसीस उर पन सिसु हेरि मर्जादा बांधी रही है ॥ ४॥ ८७ ॥

जो श्री जनक जू की कही बात है ताको सुजनों ने सराही औ मुनि की मन मानी भई बात है अस जानि श्रीराम को सोहात भई पर सो बात सुनिं के नीच जो महिपावली है सो बिनु अग्नि के जरि जात भई ॥ १ ॥ गाधिनंदन रघुनंदन सों हर्षित कहत हैं कि मिथिलेश की गति गहिबे जोग नहीं है तातें बातहू नहीं गही जात है। नाम मात्र के झूठे झूठे अनेक भूपति देखे पर सांचे भूपति तिरहुतिनाथ ही हैं या बात की साक्षी पृथ्वी देति है, भाव कन्या उपजाय कै ॥ २ ॥ प्रीति औ वैराग्य भोग औ जोग सब महाराज के मन को जोगवत हैं भाव जेहि के ओर तनिक दृष्टि करत सो शीघ्र हाजिर है जात है। जोगी जाबलिक के प्रसाद ते यह सिद्धता को लही है। तातें सूर्य ते तप्त नहीं होत हैं औ और को को कहै चन्द्रमो ते शीतल नहीं होत हैं, उपाधि रहित स्वाभाविक समाधि को निर्वाह करत हैं। वायु आदि बस करि जो समाधि सो उपाधि सहित ॥ ३ ॥ हे श्रीराम जू आप के सनेह के बस ऐसेऊ अगाध बोध वाले जनक महाराज कों बिकल बिलोकियत है तातें अस जानि परत है कि इन के मन में निश्चै दुचितई है, यह मुनि के प्रतिज्ञारूपी बछरा को देखि कै कृपारूपी कामधेनु रघुनाथ के उर में हुलसानी पर विश्वामित्र जू की आज्ञा रूप मर्जादा में बांधी है तातें ठहर गई ॥ ४॥८७ ॥

रिपिराज राजा आजु जनकसमान को । आपु एहि भांति प्रीति सहित सराहियत रागी औ बिरागी बडभागी ऐसो आन को ॥ १ ॥ भूमि भोग करत अनुभवत जोग सुख मुनिमन अगम अलख गति जान को। गुर हर पद नेह गेह बसि भो बिदेह अगुन सगुन प्रभु भजन सयान को ॥२॥ कहनि रहनि एक बिरति बिवेक नीति बेद बुध संमत

रंक होय ॥ ३ ॥ महा महा बल बीर जो रहे सो अपनो सो किए अर्थात् जेतना पाक्रम रहा तेतना किए पर चांप न टरेउ। महा महा बल बीरन को चांप अपनो सो कियो अर्थात् जड ॥४॥५॥ जहँ तहँ महीप मुरे कहँ जहां ते उठे रहे तहँ फेरि आइ बैठे ॥ ६ ॥ फुरे फरके ॥७।८॥ क्यों कहँ कैसे मृनाल कमलदण्ड, अनुग सेवक ॥ ९ ॥ १० ॥ अयन गृह, मृगपति सिंह ॥ ११ ॥ ८९ ॥

जबहि सब नृपति निरास भए। गुरुपद कमल वंदि रघुपति तब चांप समीप गये ॥ १ ॥ स्याम तामरस दाम वरन वपु उर भुज नयन विसाल। पीत बसन कटि कलित कंठ मुंदर सिंधुरमनिमाल ॥ २ ॥ कल कुंडल पल्लव प्रसून सिर चारु चौतनो लाल। कोटि मदन छबि सदन बदन विधु तिलक मनोहर भाल ॥ ३ ॥ रूप अनूप बिलोकत सादर पुरजन राजसमाजु। लषन कह्यो थिर होहिं धरनि-धरु धरनि धरनिधर आजु ॥ ४ ॥ कमठ कोल दिगदंति सकल अँग सजग करहु प्रभु काजु। चहत चपरि सिवचांप चढावन दसरथ को जुवराजु ॥ ५ ॥ गहि करतल मुनि पुलक सहित कौतुकहि उठाइ लियो। नृपगन मुपनि समेत नमित करि सजि मुष सबहि दियो ॥ ६ ॥ आकरष्यो सिय मन समेत हरि हरष्यो जनक हियो। भंज्यो भृगुपति गर्व सहित तिहुलोक विमोह कियो ॥ ७ ॥ भयो कठिन कोदंड कोलाहल प्रलय पयोद समान। चौकें शिव विरंचि दिसिनायक रहे मूदि कर कान ॥ सावधान ह्वै चढे विमानन चले बजाइ निसान। उमगि चल्यो आनंद नगर नभ जय धुनि मंगलगान ॥८॥ विप्रवचन सुनि सपी मुआसिनि चली जानकिहि ल्याइ। कुअँर निरपि जयमाल मेलि उर

न चलत सो ज्यों विरंचि को अंकु । धनु तोरै सोइ वरै जानकी राउ होइ की रांकु ॥३॥ सुनि अमर्षि उठे अवनी-पति लगे वचन जनु तीर । टरै न चांप करैं अपनो सो महा महा बल बीर ॥ ४ ॥ नमित सीस सोचहि सलज्ज सब शोइत भए सरीर । बोले जनक विलोकि सीय तन दूषित सरोष अधीर ॥ ५ ॥ सप्त दीप नव षंड भूमि के भूपति वृंद जुरे । बडो लाभु कन्या कीरति को जहँ तहँ महिप मुरे ॥६॥ डग्यो न धनु जनु वीर विगत महि किधौं कहुं सुभट दुरे । रोषे लषन बिकट भृकुटी करि भुज अरु अधर फुरे ॥ ७ ॥ सुनहु भानु कुलकमल भानु जो अब अनुसासन पावौं । को बापुरो पिनाकु मेलि गुन मंदर मेरु नवावौं ॥ ८ ॥ देखौ निज किंकर को कौतुक क्यौं कोदंड चढावौं । लै धावौं भंजौं मृनाल ज्यौं तौ प्रभु अनुग कहावौं ॥ ९ ॥ हरषे पुर नर नारि सचिव नृप कुअर कहे वर बैन । मृदु मुसुकाइ राम बरज्यो प्रिय बंधु नयन दै सैन ॥ १० ॥ कौसिक कह्यौ उठहु रघुनंदन जगवंदन बल चैन । तुलसि दास प्रभु चले मृगपति ज्यौं निज भगतनि सुपदैन ॥ ११ ॥ ८९ ॥

बंदी की उक्ति सुनो इ० । बज्र पर की रेखा जैसे नहीं मिटति है औ हाथी के दांत जैसे फेर भीतर नहीं जात तस जनक महाराज की प्रतिज्ञा है बेद में विदित है औ सब जग जानत है कि पुरारि को सरासन अति कठोर है, जाको पिनाक अस नाम प्रसिद्ध है। जो पिनाक को रावण पावै दियो अर्थात् सनमुख न भयो, जेहि रावन ने कैलास को लघु कियो अर्थात् देव्या सप उठाय लियो ॥ १ ॥ २ ॥ भाल पर भ्रानत जो विरंचि को अंक है सो जगे नहीं चलत तेरे भूमि ते नहीं चलत है तेरि धनु को जो तोरै सो राजदुमारी को पति, पाई राना होय पाई

ए, उठे राम रघुकुल कल केहरि गुरु अनुसासन पाए
३ ॥ कौतुकही कोदंड षंडि प्रभु जय अरु जानकि पाई।
लसिदास कीरति रघुपति की मुनिन्ह तिहुँ पुर गाई ॥४॥९१॥

जब इ० जब दोऊ चक्रवर्ती कुमार कों देखे तब देखि करि जनक-
र के नर नारि अपने निमेष (पलक) कों रोके औ मुदितमन भए १ ते
ऊ राजकुमार कैसे हैं किशोर अवस्था औ मेघ औ तडित सम तन
। वरण हैं औ नप ते सिप लौं सब अंग लोभावनिहारे हैं कै हितु कहँ
ति करि सब जगत के छवि रूप धन लै कै चित्त दै कै ब्रह्मा ने
पने हाथ ते संवारे हैं जिन को ॥२॥ देखि कै श्रीजनक महाराज कों
स भयो अर्थात् काहू को अस प्रण किया औ श्रीजानकी जी को
तिसोच भयो औ राजा सब सकुचाय के सिर नवाये भाव ए दोऊ
ाई तेजस्वी देखि परत हैं कदापि इन से धनु उठा तो हम लोगों के
ह में मसि लगी। तब गुरु अनुमामन पाए तें सुंदर जो रघुकुल हैं
तन में श्रेष्ठ जो श्रीराम सो उठे ॥ ३॥४॥ ९१ ॥

राग टोडी। मुनि पद रेनु रघुनाथ माथे धरो है। राम-
रूप निरषि लषन की रजाइ पाइ धराधर धरनि सुमायधान
करो है ॥ १ ॥ सुमिरि गनेस गुर गौरि हर भूमिसुर मोचत
सकोचत सकोचो बान परो है। दीनबंधु कृपासिंधु साह-
सिक सीलसिंधु सभा को सकोच कुलकृ को लाज परी है
॥ २ ॥ पेषि पुरुषारथ परषि पन प्रेम नेम मीय हीय को
विशेषि बडो परभरो है। दाहिनो दियो पिनाकु महमि
भयो मनाकु महाव्याल बिकल विलोकि जनु जरो है ॥ ३ ॥
सुर हरषत बरषत फूल बार बार सिद्ध मुनि कहत सगुन
शुभ घरो है। रामबाहु बिटप बिसाल बोडो देषियत
जनकमनोरथ कलपबेलि फली है ॥ ४ ॥ लष्यो न चढ़ावत
न तानत न तोरतहूँ घोर धुनि मुनि सब को समाधि टरी

कुवरि रही सकुचाइ ॥ १० ॥ बरषहि सुमन असीसहि सुर मुनि प्रेम न हृदय समाइ । सोय राम की सुंदरता पर तुलसिदास बलि जाइ ॥ ११॥९०॥

जबहिं इ० सु० ॥१॥ तामरस कमल दाम समूह कटि कलित कटि में धारन किए सिंधुरमनि गजमुक्ता ॥ २ ॥ कल सुंदर चाँतनी दीपी, कोटि मदन छवि सदन कोटि काम के छवि के गृह ॥ ३ ॥ धरनिधर शेष, धरनी पृथ्वी धरनिधर पर्वत ॥ ४ ॥ कच्छप शूकर भगवान दिग्गज सकल अंग ते सजग होय के प्रभु के काज करहु भाव कोई अंग ते ढीला होहुगे तो न सम्हारि सकोगे चपरि उत्साह करि ॥ ५ ॥ गहि इ० आकर्षेउ इ० यह दूनो तुकन को भाव नाटक के अनुसार है। "उत्क्षिप्तं सह कौशिकस्य पुलकैः सार्द्धं मुखैर्नामितं भूपानां जनकस्य संशयधिया साकं समास्फालितम् । वैदेहीमनसा समं च सहसाकृष्टं ततो भार्गवमौढ्याहंकृतिदुर्मदेन सहितं तद्भग्नमंशं धनुः" अस्यार्थः अथ धनुर्भंगे नानारसानुभावात् चित्ररसं दर्शयितुं पद्यमवतारयति उत्क्षिप्तमिति कौशिके वत्सलरसोजातः अत्र हर्षः संचारी हर्षात्पुलकाः सात्विका इति ज्ञानम् । भूपे भयानकरसः अत्र दैन्यं संचारी दैन्यादेवमुखनमनम् अत्र भीषणा त्रिविधा तत्प्रभावेनैव रामे भीषणत्वं जनके करुणारसोजातः अत्र ग्लानिः संचारी सा चापे जाता आध्यनुभावः संशयइति ज्ञानं वैदेह्यां मधुररसोजातः मनआकर्षणमेवात्रानुभावः रामे वीररसः अत्र स्पर्द्धोद्दीपनं सा परशुरामागतीतिज्ञानम् अत्र सर्वरसानामुद्दीपनविभावोरामएव ॥६॥७॥ कोलाहल महाशब्द, पयोद मेघ दिसिनायक दिक्पाल ॥ ८ ॥ निसान नगारा ॥ ९ ॥ बिप्र सतानंद ॥ १० ॥ ११ ॥ ९० ॥

राग मलार—जय दोउ दशरथकुंअर त्रिलोके । जनकनगर नर नारि मुदित मन निरखि नयन पल रोके ॥ १ ॥ घन दामिनि घन सहित बरन तन नप मिथ अंग सुभारे । दे पितु कें हितु लै सब कवि पितु विधि निज हाथ सवारे ॥ २ ॥ संकट नृपहि सोच अति मीतहि भूप सकुचि सिर

करपरसत टूट्यो जनुहुतो पुरारि पठायो ॥ २ ॥ पहि-
जयमाल जानकी युवतिन्ह मंगल गायो। तुलसी सुमन
पि हरषे सुर सुजस तिहु पुर छायो ॥ ३ ॥ ९३ ॥

राम इ० सु० ॥१॥ हुतो पुरारि पढ़ायो भाव श्रीशिव जी पढ़ाय
रहे कि श्रीराम के छुअँत टूटि जाना ॥ २ ॥ ३ ॥ ९३ ॥

राग टोड़ी—जनक मुदितमन टूटत पिनाक के। बाजे
वधावने सुहावने मंगल गान भयो सुप एकरस रानी
जा रांक के ॥ १ ॥ दुंदुभी बजाइ गाइ हरषि बरषि फूल
गन नाचे नाचे नायकन्ह नाक के। तुलसी महीस देखि
न रजनीस जैसे सूने परे सून से मनो मिटाये
क के ॥ २ ॥ ९४ ॥

जनक इ० रांक दरिद्र ॥ १ ॥ नाक के नायक इन्द्र, दिन में जैसे
मा देखि परत हैं तैसे राजा सब देखि परे अब दूसरी उपमा कहत
जैसे अंक के मिटाए सुन्न सूना परत है अर्थात् वे हिसाब है जात है
भए ॥ २ ॥ ९४ ॥

लाज तो न साजि साज राजा राउ रोपे हैं। कहा
चाप चढाए ब्याकुल है है बडे पाये बोले पोले सेल असि
मकत चोपे हैं ॥ १ ॥ जानि पुरजन जसे धीर दै लपन
से बल इन्ह के पिनाक नीके नापे जोंपे हैं। कुलहि लजावे
ाल बालिस बजावे गाल कैधौं क्रूर काल वस तमकि
वदोपे हैं ॥ २ ॥ कुअर चढाई भौंहैं सब को बिलोके सोहैं
हां तहां मे अचेत पेंत कैसे धोपे हैं। देपे नर नारि कहैं
राग पाइ जाए माय बाकु पीन पावरनि पीना पाय पोपे हैं
३ ॥ प्रमुदित मन लोक कोकनद कोकगन राम के प्रताप

है। प्रभु के चरित चारु तुलसी सुनत मुप एक ही [illegible] सब ही की हानि हरो है ॥ ५॥९२ ॥

विश्वामित्र जू के चरण की धूरी रघुनाथ ने माथे पर धरी है। ए नाथ की रुप देखि कै श्री लछिमन जू आज्ञा दिए। "दिसि इंस कमठ अहि कोला। धरहु धरनि धरि धीर न डोला" ॥ सो आज्ञा कै धराधर जो कच्छपादि सो भूमि को थिर करी है भाव लघु ल सी डगमगाय उलटि न जाय ॥ १ ॥ अब जानकी जू की सखा कहत हैं कि गणेश गुरु गौरी हर भूमिसुर को सुमिरि कै सोचत "कहं धनु कुलिसहु चाहि कठोरा। कहँ स्यामल मृदु गात किसोरा विधि केहि भांति धरौं उर धीरा। सिरस सुमन कन वेधिअ हीरा"। औ देवतन को संकोच देत हैं कि आप लोगन की सुद्ध संकोची व है भाव संकोच में परि के जे न होनिहार ताहू के करनिहार हैं हे कृपि बंधु कृपासिंधु हे साहसिक अर्थात् शीघ्र कार्य सिद्ध करैया औ हे ज्ञा के समुद्र हम को सभा को संकोच औ कुल हू की लाज परी है म चित्त तो चाहत है कि बिनु धनु तोरे जयमाल डार देउं पर आजु ह अस हमारे कुल में काहू कन्या ने नहीं किया है, यह जो सिय हिय विशेष खरभरी है ताको औ राजन को पुरुषारथ देखि के औ जनक जू को प्रेम को नेम औ प्रतिज्ञा की परीक्षा करि के श्रीराम पिनाक को दहिना दियो अर्थात् प्रदक्षिण कियो डरि कै पिनाक ह्वै जात भयो जैसे जरी को देखि कै सर्प विकल होय सिकुर जात। देव हर्षत संत बार बार फूल बर्षत हैं औ सिद्ध सगुन औ मुनि सुभ क कहत हैं पुनि सिद्धादि कहत हैं कि श्रीरामबाहु रूप विशाल हस श्रीजनक जू की मनोरथ रूपी कल्पलता जो फैली रही ताको फ देखिअत है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ एक ही सुंदर लाभ ने सब ही की हा को हरन करी है ॥ ५ ॥ ९२ ॥

रागसारंग—राम कामरिपुचाप चढ़ायो। सुनि पुलक आनंद नगर नभ निरखि निसान बजायो ॥ १ ॥ जो पिनाक बिनु नाक किये नृप सबहि विषाद बढायो। सो

जयमाल इ०। जलजकर करकमल जयमाला महुआ औ दूब की है। "एवं तयोक्ते तमवेक्ष्य किंचिद्विस्रंसिदूर्वाकमधूकमाला। ऋजुप्रणामक्रिययैव तन्वी प्रत्यादिदेशैनमभाषमाणा" इति रघुवंशे ॥ १ ॥ लह लहे आनंदयुक्त ॥ २ ॥ ३ ॥ इहां श्रीरघुनाथ तमाल हैं मरालपांति जयमाल है ॥ ४ ॥ खुनुस खांसी खई है क्रोध रूप छईवाली खांसी रोग है ॥ ५ ॥ निज निज वेद के आशीर्वाद के मंत्र से आशीर्वाद दिए ॥ ६ ॥ ९६ ॥

राग केदारा। लेहु री लोचननि को लाहु। कुंअरु सुंदरु सँवरो सपि सुमुपि सादर चाहु ॥ १ ॥ पंडि हरकोदंड ठाढे जानु लंबित बाहु। रुचिर उर जयमाल राजति देत सुप सब काहु ॥ २ ॥ चितै चित हित सहित नप सिप अंग अंग निवाहु। सुकृत निज सियरामरूप विरंचि मतिहि सराहु ॥ ३ ॥ मुदित मन वर वदन सोभा उदित अधिक उछाहु। मनहुँ दूरि कलंक करि ससि समर सूद्यो राहु ॥४॥ नयन सुपमा अयन हरत सरोज सुंदर ताहु। वसत तुलसीदास उर पुर जानकी को नाहु ॥ ५॥९७ ॥

लेहु इ०। हे सखि हे सुमुखि आदर सहित चाहु कहँ देखु ॥१॥ जानु लंबित बाहू आजानु बाहु ॥ २ ॥ नख ते सिख लौं जो सब अगं अगं का निबाह है अर्थात् सब अँग जस चाही तस है तिन को मीत सहित चित दै चितै के अपना सुकृत औ सियराम को रूप औ ब्रह्मा की बुद्धि की सराहना करु ॥ ३ ॥ हर्षित मन है औ उछाह करि श्रेष्ठ वदन की शोभा अधिक प्रकाशित है मानो शशि ने कलंक को दूरि करि समर में राहु को मारयो है इहां राहु पिनाक है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ९७ ॥

राग सारंग। भूप के भाग की अधिकाई। टूट्यो धनुष मनोरथ पूज्यो विधि सब बात बनाई ॥१॥ तब ते दिन दिन उदो जनक को जब ते जानकि जाई। अब यह ब्याह सुफल

रवि सोच सर सोपे हैं। तव के देपैआ तोपे तवके लोग
भले अब के सुनैआ साधु तुलसीहू तोपे हैं ॥ ४ ॥ ८५ ॥

लाज इ० । लाज तो नहीं है पर राजा जे राड हैं ते युद्ध के
साजि के क्रोधयुक्त भए हैं। आपुस में कहत हैं चांप चढ़ाय तें
भयो यह विवाह बड़े खाए ते होइगो अस बोले मिआन से
तरवार खींचि लिए औ सांग लिए चमकि रहे हैं अर्थात् राजा सब
बाल बालिस मूर्खों ते मूर्ख तमकि त्रिदोखे हैं त्रिदोष के बस अक
करि रहे हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ रघुनाथ के प्रताप रूपी सूर्य ने सोच
सर को सोखि लिए ताते लोक रूप कमल औ चक्रवाक गन हर्षे ॥

जयमाल जानकी जलजकर लई है। सुमन सुमं
सगुन की बनाई मंजु मानहु मदन माली आपु निरमई
॥ १ ॥ राज रूप लपि गुर भृगुर मुआसिनिन्हि समय जस
की ठवनि भली ठई है। चली गान करत निसान
गहगहे लहलहे लोयन सनेह सरसई है ॥ २ ॥ इनो
दुंदुभी हरषि बरषत फूल सुफल मनोरथ भो सुप सुचितई
परजन परिजन रानी राउ प्रमुदित मनसा अनूप राम
रंग रई है ॥ ३ ॥ सतानंद सिय सुनि पाय परि पछिराई
सिय पियहिय सोहत सो भई है। मानस ते निकसि बिसा
सुतमाल पर मानहु मराल पांति बैठी बनि गई है ॥ ४
छितन को लाह को उछाह को विनोद मोद सोभा
अवधि नहीं अब अधिकई है। याते विपरीति अनहित
को जानि लीबो गति कहे प्रगट पुनस सोधी पई है ॥ ५
निज निज बेद की सप्रेम लोग छेम मई मुदित असीस
बिटपनिदई है। छवि तेरि काल की कृपाल सीता दूलह
तुलसत हिए तुलसी के नित नई है ॥ ६ ॥ ८६ ॥

राम लषन घर करि मुनिमषरषवारी। सो तुलसी प्रिय मोहि लागि है ज्यौं सुभाय सुत चारी ॥ ४ ॥ १०० ॥

ऋषि इ० । वशिष्ट जू औ मंत्री सब विचार में विचच्छन रहे पर अवरेव को काहू ने समुझि के न सुधारी ॥ १ ॥ सुरारी राक्षस ॥२॥ कातरि विह्वल ॥ ३ ॥ ४ ॥ १०० ॥

जब ते लै मुनि संग सिधाये। राम लषन के समाचार सपि तब ते कछु अनपाये ॥१॥ बिनु पानही गवन फल-भोजन भूमि सयन तरुछाहीं। सर सरिता जल पान सिसुन के साथ सुसेवक नाहीं ॥ २ ॥ कौसिक परमकृपाल परमहित समरथ सुपट सुचाली। बालक सुठि सुकुमार सकोची समुझि सोच मोहि आली ॥ ३ ॥ बचन सप्रेम सुमित्रा के सुनि सब सनेह बस रानी। तुलसी आइ भरत तेहि औसर कही सुमंगल बानी ॥ ४॥१ ॥

जयते इ० सु० ॥१॥२॥सकोची कहिबे को यह भाव कि संकोच ते कछु न कहैंगे ॥ ३॥४॥१०१ ॥

सानुज भरत भवन उठि धाए । पितुसमीप सब समाचार सुनि मुदित मातु पहि आए ॥ १ ॥ सजल नयन तन पुलक अधर फरकत लपि प्रीति सुहाई। कौसल्या लिए लाइ हृदय बलि कही कछु है सुधि पाई ॥ २ ॥ सतानंद उपरोहित अपने तिरहुतिनाथ पठाए। प्रेम कुसल रघुबीर लषन की ललित पत्रिका ल्याए ॥ दलि ताडका मारि निसिचर सप रापि विप्रतिय तारी। दै विद्या लै गए जनकपुर हैं गुरु संग सुपारी ॥ ४ ॥ करि पिनाकुपन सुता स्वयंवर सजि नृप कटक बटोरयो। राजसभा रघुवर भुनाल

भयो जीवन विभुवन विदित वडाई ॥ २ ॥ वार वार ऐहै पहुनाई राम लषन दोउ भाई। एहि आनंद मगन पुरवासिन्ह देहदसा विसराई ॥ ३ ॥ सादर सकल विलोकत, रामहिं काम कोटि छवि छाई। एह सुष समउ समाज एक सुष क्यों तुलसी कहै गाई ॥ ४ ॥ ९८ ॥

भूप इ० । सुगम ॥ ९८ ॥ टिप्पणी—उदो कहैं उदय वृद्धि, जाई कहैं जन्मी ॥२॥ पुरवासी श्रीरघुनाथ वार२ पहुनाई में जनकपुर आवेंगे और हम लोग दर्शन करेंगे इस आनंद में देह की सुधि भूले हैं ॥ ३ ॥

राग सोरठ—मेरे बालक कैसे धौं मग निबहिहिंगे। भूष पियास सीत स्रम सकुचनि क्यों कौसिकहिं कहिहिंगे ॥ १ ॥ को भोरही उबटि अन्हवैहैं काढि कलेऊ दैहै। को भूषन पहिरावै निछावरि करि लोचनसुष लैहै ॥२॥ नयन निमेषनि ज्यौं जोगवै नित पितु परिजन महतारी। ते पठए रिपिसाथ निसाचर मारन मषरषवारी ॥३॥ सुंदर सुठि सुकुमार मुकोमल काकपक्षधर दोऊ। तुलसी निरषि हरषि उर लैहौं विधि ह्वै है दिन सोऊ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

माता की उक्ति मेरे इ० । सकुचनि संकोच ते ॥१॥ २॥३॥ काकपक्ष जुल्फ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

रिषि नृप सीस ठगौरी सो डारी। कुलगुरु सचिव निपुन नेवनि अवरेव न समुझि सुधारी ॥ १ ॥ सिरिसुमन सुकुमार कुअर दोउ सूर सरोष सुरारी। पठए विनहि सहाय पयादेहि कोलियान धनु धारी ॥ २ ॥ अति सनेह कातरि माता कहै लषि सषि वचन दुषारो। वादि वीर जननी जीवन जग छत्रजाति गति भारी ॥ ३ ॥ जो कहिहै फिरे

भयो जीवन विभुषन विदित बडाई ॥ २ ॥ बार बार ऐहै पहुनाई राम लषन दोउ भाई । एहि आनंद मगन पुरबासिन्ह देहदसा बिसराई ॥ ३ ॥ सादर सकल बिलोकत रामहिं काम कोटि छबि छाई । एह सुष समउ समाज एक सुष क्यों तुलसी कहै गाई ॥ ४ ॥ ९८ ॥

भूप इ० । सुगम ॥ ९८ ॥ टिप्पणी—उदो कहँ उदय हृदि, जाँ कहँ जन्मी ॥२॥ पुरवासी श्रीरघुनाथ बार२ पहुनाई में जनकपुर आवेंगे और हम लोग दर्शन करेंगे इस आनंद में देह की सुधि भूले हैं ॥ ३ ॥

राग सोरठ—मेरे बालक कैसे धौं मग निबहिहिंगे । भूष पियास सीत सम सकुचनि क्यौं कौसिकहिँ कहिहिँगे ॥ १ ॥ को भोरही उबटि अन्हवैहैं काढि कलेऊ दैहै । को भूषन पटिराइ निछावरि करि लोचनसुष लैहै ॥२॥ नयन निमेषनि ज्यौं जोगवै नित पितु परिजन महतारी । ते पठए रिपिसाप निसाचर मारन मषरषवारी ॥३॥ सुंदर सुठि सुकुमार सुकोमल काकपच्छधर दोऊ । तुलसी निरषि हरषि उर लैहौं विधि ह्वै है दिन सोऊ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

माता की उक्ति मेरे इ० । सकुचनि संकोच ते ॥१॥ २॥३॥ काकपक्ष जुल्फ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

रिपि नृप सीस ठगौरी सो डारी । कुलगुरु सचिव निपुन नेवनि अवरेव न समुझि सुधारी ॥ १ ॥ सिरिसुमन सुकुमार कुअर दोउ सूर सरोष सुरारी । पठए बिनहि सहाय मषादेहि कौसिकमान धनु धारी ॥ २ ॥ अति सनेह कातरि माता कहै सपि सपि बचन दुपारो । बादि बीर जननी जीवन जग छत्रजाति गति भारी ॥ ३ ॥ जो कहिहै फिरे

राग केदारा। मन में मंजु मनोरथ होरी। सो हर गौरि साद एक ते कौसिक कृपा चौगुनो भो री ॥ १ ॥ पन परि-ाप चापचिंता निसि सोच सकोच तिमिर नहिं थोरी। वि कुल रवि अवलोकि सभा सर हितचित वारिज बन वकसो री ॥ २ ॥ कुंवर कुंअरि सब मंगल मूरति नृप दोउ रम धुरंधर भोरी। राज समाज भूरिभागी जिन्ह लोचन ाहु लह्यौ इक ठोरी ॥ ३ ॥ व्याह उछाह राम सीता को ुकृत सकेलि विरंचि रचोरी। तुलसिदास जानै सोई यह ुप जाके उर वसति मनोहर जोरी ॥ ४॥१०४ ॥

मन इ० । मिथिला के सखिन की उक्ति है। री सखी जो न में एक मनोरथ रह्यो अर्थात् श्री जानकी जी को विवाह को सो र गौरी के प्रसाद औ कौसिक की कृपा ते चौंगुनो भयो। भाव चारो ाज कुमारिन को व्याह देखिवे में आयो ॥ १ ॥ प्रतिज्ञा करिवे को ो परिताप औ चाप की गरुआई की जो चिंता सोई रात्रि रही औ तेहि करि जो सोच औ संकोच सोई तेहि राति की घनी अंधिआरी रही तेहि करि हितनि के चितरूपी कमल सभारूपी तड़ाग में संपुटित भए रहे ते रविकुल रवि जो श्रीराम तिन को देखि कै प्रफुल्लित भए ॥ २॥३॥४॥१०४ ॥

राजत राम जानकी जोरी। स्याम सरोज जलद सुंदर वर दुलहिनि तडित बरन तन गोरी ॥१॥ व्याह समय सोहति वितानतर उपमा कहुं न लहति मति मोरी । मनहु मदन मंजुल मंडप महं छवि सिंगार सोभा सोउ थोरी ॥२॥ मंगल-मय दोउ अंग मनोहर रचित चूनरी पीत पिछोरी । जानक कलस कहुं देत भांवरी निरखि रूप सारद भइ भोरी ॥ ३ ॥ मुदित जनक रनिवास रहसवस चतुर नारि चितवहि तन

ज्यौं सम्भुसरासन तोर्‌यौ ॥ ५ ॥ यों कहि सिथिल सनेह बंधु दोउ अंबु अंक भरि लीन्हे। बार बार मुख चूंबि चाह मनि बसन निछावरि कीन्हे ॥ ६ ॥ सुनत सुहावनि चाह अवध घर घर आनंद बधाई। तुलसिदास रनिवास रहस बस सखी सुमंगल गाई ॥ ७॥१०२ ॥

सानुज ई० पद सुगम ॥ १०२ ॥

राग कान्हरा। राम लषन सुधि आई बाजै अवध बधाई। लखित लगन लिपि पत्रिका उपरोहित के कर जनक जनेस पठाई ॥ १ ॥ कन्या भूप बिदेह की रूप की अधिकाई। तासु स्वयंबर सुनि सबै आए देस देस के नृप चतुरंग बनाई ॥ २ ॥ पन पिनाक पबि मेरु ते गरुता कठिनाई। लोकपाल महिपाल बान बान इत दसमुख सकै न चांप चढाई ॥ ३ ॥ तेहि समाज रघुराज के मृगराज जगाई। भंजि सरासन संभु जग जय कल कीरति तिय तियमनि सिय पाई ॥ ४ ॥ पुर घर घर आनंद महा सुनि चाह सुहाई। मातु मुदित मंगल सजै कहै मुनिप्रसाद भए सकल सुमंगल माई ॥ ५ ॥ गुरुमायसु मंडप रच्यौ सब साज सजाई। तुलसिदास दसरथ बरात सजि पूजि गनेसहि चले निसान बजाई ॥ ६॥१०३ ॥

राग ई० । जनेस राजा ॥ १ ॥ २ ॥ प्रतिज्ञा किया भया जो पिनाक है सो मेरु ते अधिक गुरु है औ बज्र ते अधिक कठिन है बान पाषाण ॥ ३ ॥ तेहि समाज में रघुराज के मृगराज जो श्रीराम तिन को जगावत भए अर्थात् उठाइ खड़ा कर भए "धीर बिहीन मही दै जानी" इत्यादि बचन ते जिन्हों ने संभु को सरासन तोरि के जगत में जय आदि पाई ॥ ४ ॥ इहां चार को अर्थ बांछित है ॥ ५ ॥ इहां गनेस के पूजने हेतु मंडप बनाए ॥ ६॥१०३ ॥

की जो विनिआ सो रति काम ने पाई। शिला जो वालि तेहि कै रति काम पाई "उञ्छः कणश आदानं कशाद्यर्जनंशीलम्" इति कोशे। ४।१०६॥

जैसे ललित लषन लाल लोने। तैसिअै ललित उर्मिला अर लषत सुलोचन कोने॥ १॥ सुषमा सारु सिंगारु करि बानक रचे है तेहि सोने। रूप प्रेम परमिति न कहि विथकिरही है मतिमौने॥ २॥ सोभासील सनेह बनो समउ केलि गृह गोने। देषि तियन के नयन सुफल तुलसिदास हुं के होने॥ ३॥ १०७॥

जैसे इ०॥ १॥ परम सोभा को सारांश औ शृंगार को सोना कै तेहि सोना ते लषनलाल औ उर्म्मिला जू को बनाए। भाव ॥ के सारांश ते लषनलाल को औ शृंगार के सारांश ते उर्म्मिला ो रूप औ प्रेम के अवधि हैं ताते कही नहीं परति है। विशेष थकि ति मौन है रही है श्री उर्म्मिला जू को श्याम वरण है ताते शृंगार सारांश कहे "हिरण्यवर्णा सीता स्यान्मण्डवी पाटलप्रभा उर्म्मिला विर्णाभा श्रुतिकीर्तिः समप्रभा" इति नारदपञ्चरात्रे "पाटलः श्वेतरक्त-तोवर्णः" ॥२॥ केलिगृह कोहवर जावे को समै को शोभा शील सुंदर सनेह जो है ताको देखि कै तियन के नैन सुफल भए तुल-सि को अब होनिहार है॥ ३॥१०७॥

राग विलावल—जानकीवर सुंदर माई। इंद्र नीलमनि म सुभग अंग अंग मनोजनि बहु छवि छाई॥ १॥ अरुन न अंगुली मनोहर नष दुतिवंत कछुक अरुनाई। खंज नि पर मनहु भौम दम बैठे अचल सुसदसि बनाई॥ २॥ न जानु उर चारु जडित मनि नूपुर पद कल सुपर छाई। पीत पराग भरे अलिगन जनु जुगल जलज लषि लोभाई॥ ३॥ किंकिनि कनक कंज अवली मृदु मरकत

तोरी। गान निसान वेद धुनि मुनि सुर बरषत सुम
फूले फोरी॥८॥ नयनन को फल पाइ प्रेमबस सबल
ईस निहोरी। तुलसी जेहि आनंद मगन मन कौं।
बरनै सुप सोरी ॥ ५ ॥ १०५ ॥

राज ई० ॥ १ ॥ ब्याह के समै में दूलह दुलहिन मंडप में
हैं तिन की उपमा हमारी मति कतहू नहीं पावति है। मानो
सुंदर मंडप के तरे छवि रूप दुलहिन औ शृंगार रूप दूलह हैं
कहते नहीं बनत है क्योंकि इन की शोभा थोड़ी है अर्थात् जानें
सम नहीं ॥ २ ॥ दुलहिन दूलह को सब अंग मंगल मै औ
पीत पट को चूनरी के संग ग्रंथिबंधन भयो है ॥ ३ ॥ राम
॥ ४ ॥ री सखी जेहि आनंद में मन छवि गयो ताको जिहा
॥ ५॥१०५ ॥

दूलह राम सिया दुलही री । घन दामिनि वा
हरन मन सुंदरता नप सिप निवही री ॥ १ ॥ ब्याह
वसन विभूपित सपि अवलो लपि ठगि सि रहीरी।
जनम लाहु लोचनफल है इतनोइ लह्यो आजु मइयो
सुपमा सुरभि सिंगार छीर दुहि मयन अमियमय
दहीरी। मथि मापन सियराम संवारे सकल भुवन छवि
महीरी ॥२॥ तुलसिदास जोरी देपत सुप सोभा
जाति कहीरी। रूपरासि विरची बिरंचि म
रति काम लहीरी ॥ ४ ॥ १०६ ॥

यान॥५८ ॥ दूलह ई० ॥ १ ॥ २ ॥ छलमा
को जगावन मैं काम रूप अहीर ने भपूत
जानी" इत्यादि में काढ्यो ताको श्री
जय आदि गाई ॥ जो माता है अर्थात्
गनेस के पूजने इंदु पंदरी राशि मानो

[redacted] डर ते ऊपर न गई। नीचे मुख
सुंदरताई चहुं दिशि छाय रही
नेऊ औ मोतिन की माला जो
मेघ बिजुरी के बीचि इन्द्र धनुष है
[redacted] नली आई है। इहां मेघ श्रीराम हैं औ
नु यज्ञोपवीत है, मोती की माला बक-
, ठोढ़ी औ ओठ सुंदर है औ दांतन
न् कहिबे योग्य नहीं है। मानो कमल के
ग में बिजुरी औ सूर्य की सुंदराई लिए
नडिता को लिए बसे हैं। लाल रंग की
सुंदर नासा सुंदर लोचन टेढ़ी भौंह औ
र पाई है, मानों नेत्र नहीं है युग कमल हैं,
न के समूह हैं, ते भ्रमरगण कछु हृदय में
मल फों घेरि रहे हैं। भाव नाचे बैठत नहीं
क रूप पंखा है ॥८॥ लोल चंचल हाँ दरि-
मिकुल की मरजादा मिटाई अर्थात् पुरइन के

८८ ।

। मुंजनि पर जलनी बारि बेरि डारी।
न कर कमलनि संभुसरासन मारी। ।
कु सहा बल प्रथम ताडका मारी। मुनि-
मखन की विधि बढि करहर टारी। ॥
नयननि लाजति सरी मुनिहृदु उघारी। करी
जीति सकल नृप सरी रे विदेहकुमारी ॥३॥
ुरति मुरुचति अति नृपति निकर सहकारी।
मारंग टारि दिय करिहैं हमुत मनुहारी॥ ॥
गि आनंद दिलोकति हृदय सराहत हुलकारी।
म आरती उतारति उमगत भरहारी ॥१०॥

सिखरि मध्य जनु जाई। गई न उपर सभीत नमित मुख विकसि चहूं दिसि रही लोनाई ॥ ४ ॥ नाभि गभीर उदा रेपा वर उर भृगु चरनचिन्ह सुपदाई। भुज प्रलंब भूषन अनेक जुत वसन पीत सोभा अधिकाई ॥ ५ ॥ जज्ञोपवीत विचित्र हेममय मुक्ता माल उरसि सोहि भाई। कंठु तड़ित विच जनु सुर पति धनु निकट बलाक पांति चलि आई ॥ कंबु कंठ चिबुकाधर सुंदर क्यों कहौं दसनन को रुचिरार्ई। पदुम कोस मधं वसे वज्र मानो निज संग तडित अरुन लाई ॥ ७ ॥ नासिका चारु ललित लोचनभ्रू कुटिल कचनि अनुपम छवि पाई। रहे घेरि राजीव उभय मानो चंचरीक कछु हृदय डेराई ॥ ८ ॥ भाल तिलक कंचन किरीट सिर कुंडल लोल कपोलनि झाई। निरखहिं नारि निकर विरहपुर निमि नृप की मरजाद मिटाई ॥ ९ ॥ सारद सेस संभु निसि वासर चिंतत रूप न हृदय समाई। तुलसिदास सठ क्यों करि बरने यह छवि निगम नेति कहि गाई ॥१०॥१०८॥

जानकी इ०। सखी प्रति सखी की उक्ति अरी माई जानकी ना सुंदर हैं, मरकत मणि सम स्याम है औ सुंदर सब अंग अंगानि अनेक कामन की छवि छाय रही है ॥ १ ॥ लाल चरण है अंगुरी मन हरनिहारी है, नख द्युतिवंत जे है ते कछुक अरुनाई लिए हैं। मानों कमल दलनि के ऊपर सुंदर अचल सभा बनाइके दश मंगल के ताल बैठे हैं ॥ २ ॥ जानु पुष्ट हैं औ सुंदर जंघा हैं औ चरण में मनिन जटित सुंदर सोने के नूपुर हैं सो सुंदर शब्द करत हैं सो नूपुर नहीं हैं पुष्पन के पीत धूरी तें भरे भंवर के समूह हैं मानो युगल चरण ह युगल कमल को देखि के लोभाय के रहि गए हैं ॥ ३ ॥ सोनन की किंकिनी नहीं है कमल कलिन की पांति है। सो मरकत सिखर के मध्य में मानों उत्पन्न भई है। इहां मरकत सिखर श्री रघुनाथ हैं, मध्यभाग

कटिदेश है ते किंकिनी रूप कली सब डर ते ऊपर न गई। नीचे मुख करि विकसी तिन के विकसने की सुंदरताई चहुं दिशि छाय रही ॥४॥५॥ उर में विचित्र सुवर्ण मय जनेऊ औ मोतिन की माला जो है सो हम को भाई, मानो स्याम मेघ बिजुरी के बीचि इन्द्र धनुष है तेहि के निकट बकुलन की पांति चली आई है। इहां मेघ श्रीराम हैं औ पीत बसन बिजुरी है, सुरपति धनु यज्ञोपवीत है, मोती की माला बक-पांति है ॥ ६ ॥ शंखसम कंठ है, ठोड़ी औ ओठ सुंदर है औ दांतन की रुचिराई कैसे कै कहौं अर्थात् कहिबे योग्य नहीं है। मानो कमल के कोश में हीरागण अपने संग में बिजुरी औ सूर्य की सुंदराई लिए बसे हैं वा सुंदर ललाई रूप तडिता को लिए बसे हैं। लाल रंग की बिजुरी भी लिखी है ॥ ७ । सुंदर नासा सुंदर लोचन टेढी भौंह औ जुल्फन ने उपमा रहित छवि पाई है, मानों नेत्र नहीं हैं युग कमल हैं, भौंह औ जुल्फ नहीं हैं भौंरन के समूह हैं, ते भ्रमरगण कछु हृदय में डेराइके युगल नेत्र रूप कमल कों घेरि रहे हैं। भाव ताते बैठत नहीं हैं। इहां डरावनिहारी पलक रूप पंखा है ॥८॥ लोल चंचल झांई परि-छाही,-निकर समूह, निमिकुल की मरजादा मिटाई अर्थात् एकटक ते निरखहिं ॥ ९॥१०॥१०८ ।

राग कान्हरा। भुजनि पर जननी वारि फेरि डारी। क्यों तोर्‌यो कोमल कर कमलनि संभुसरासन भारी ॥ १ ॥ क्यों मारीच सुबाहु महा बल प्रबल ताडका मारी। मुनि-प्रसाद मेरे राम लषन की विधि बडि करवर टारी ॥ २ ॥ चरन रेनु लै नयननि लावति क्यों मुनिबधू उधारी। कहो धौं तात क्यों जीति सकल नृप वरी है विदेहकुमारी ॥३॥ दुसह रोष मूरति भृगुपति अति नृपति निकर पयकारो। क्यों सौंप्यो सारंग हारि हिय करिहै बहुत मनुहारी ॥ ४ ॥ उमगि उमगि आनंद विलोकति वधुन सहित सुतचारी। तुलसिदास [illegible]मगन महतारी ॥५॥ १०९॥

भुजन इ० हाथ चहुं ओर भुजन पर फिरायके जननी ने ने
छावरि करी ॥ १ ॥ जब रघुनाथ सकोच बस उत्तर न दिए तब अ
ही समाधान करति हैं कि मुनि के प्रसाद तें मेरे राम लखन
विधाता ने अनेक अल्पायु टारी ॥ २ ॥ चरणरेणु को नयनन
लगाइबे को यह भाव कि विरह करि नेत्र संतप्त रहे तिन को शी
करति हैं। अब फेरि अधिक प्रेम करि पूछति हैं कि कैसे अहल्या
तारी ॥ ३ ॥ खयकारी क्षयकारी, मनुहारी मनावन ॥ ४ ॥

मुदित मन आरती करै माता। कनक बसन मनि वा
वारि बर पुलक प्रफुल्लित गाता ॥ १ ॥ बालागन दुलहिनि
सिखावति सरिस सासु सत साता। देहिं असीस ते बलि
कोटि लगि अचल होउ अहिवाता ॥ २ ॥ राम सीय छ
देखि जुवति जन करहिं परस्पर बाता। अब जान्यो साचि
सुनो सखि कोविद बडो विधाता ॥ ३ ॥ मंगल गान निस
नगर नभ आनंद कह्यो न जाता। चिरजीवहु अवधेस सु
सब तुलसिदास सुखदाता ॥ ४॥११० ॥

इति श्री रामगीतावल्यां बालकाण्डः सम्पूर्णः ॥

मुदित इ०मु० ॥१॥ श्री कौशल्या जू दुलहिनिन को अपने सं
सातौ सै सासुन को पैलगी करिबे को सिखावति हैं ॥ २ ॥ विध
बड़ा पण्डित है कहिबे को यह भाव कि समान जोड़ी मिलाय दि
॥ ३ ॥ नगर औ आकाश में मंगल गान होत है औ नगारे बाजत
दोऊ ठौर को आनन्द कहा नहीं जात है, सब असीस देत हैं कि अ
धेस के सब सुअन तुलसीदास के सुखदाता चिरंजीवहु ॥४॥११०॥

दो० । मंगल श्री सरजू सरित, मंगल बिपिन प्रमोद । मंगल सं
राम जू, जो मोदहु को मोद ॥ १ ॥ युगल चन्द परिकर युगल, च
रेनु सिर नाय । हरिहर सम मतिमंदहूं, टीका लई बनाय ॥ २ ॥

श्रीरामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्री सीतारामकृपापात्र श्रीसी
रामीय हरिहरप्रसाद कृतौ बालकाण्डः समाप्तः। श्रीसीतारामाभ्यां नम

श्री सीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली--अयोध्या काण्ड ।

मङ्गलाचरण—दोहा ।

जिन के अंगप्रसंग ते , भूषित भूषन होत ।
होत सुगंध सुगंधयुत , पोतो मोती होत ॥
सोभाङ्ग सोभा लहत , जिन के अंग प्रसंग ।
विधि हरिहर बानी रमा , उमा होहिं लखि दंग ॥
तिन्हसियसियवल्लभचरन , बार बार सिर नाय ।
चरनरेनु परि कर जुगल , नयनन माझ लगाय ॥
अवध कांड टीका रचत , हरिहर मति अनुहारि ।
बिगरी सुमति सुधारि हैं , बालक अज्ञ बिचारि ॥

—०—

मूल ।

राग सोरठ—नृप कर जोरि कह्यो गुरु पाहीं । तुम्हरी कृपा असीस नाथ मेरी सबै महेस निबाहीं ॥१॥ राम होहिं जुवराज जिअत मेरे यह लालच मनमाहीं । बहुरि मोहि जियबे मरिबे की चित चिंता कछु नाहीं ॥ २ ॥ महाराज भलो काज बिचार्यो बेगि बिलंब न कीजै । बिधि दाहि

होइ तो सब मिलि जनमलाहु लुटि लीजै ॥ १ ॥
नगर आनंद बधावन कैकेइँ बिलपानी । तुलसी दास
माया बस कठिन कुटिलता ठानी ॥ ४ ॥ १ ॥

टीका ।

नृप इ० । निबाही कहैं पूर्ण किए ॥ १ ॥ २ ॥ विधि दाहिनो
तो या कथन ते मनोरथ के लाभ में संदेह जनाए ॥ ३ ॥ ४ ॥१॥
राग गौरी—सुनहु राम मेरे प्रान पियारे । वारो स
वचन श्रुतिसम्मत जाते हौं बिछुरत चरन तिहारे ॥१॥ बि
प्रयास सब साधन को फल प्रभु पाये सो तौ नहीं सभारे।
हरि तजि धर्मसील भयो चाहत नृपति नारि बस सरबस
मनि डारे । मुनि लोचन चकोर ससि राघव सिव जीवनधन
सोउ न विचारे ॥ ३ ॥ जद्यपि नाथ तात मायाबस मुख
निधान सुत तुम्हहि बिसारे । तदपि हमहिं त्यागहु अति
रघुपति दीनबंधु दयाल मेरे बारे ॥४॥ अतिसय प्रीति बिनीत
बचन सुनि प्रभु कोमल चित चलन न पारे । तुलसिदास श्री
रहौं मातु हित को सुर भूमि बिप्र भय टारे ॥ ५ ॥ २ ॥

श्री कौशल्या जी की उक्ति है पुनः इ० । श्रुतिसम्मत जो सत्य
बचन हैं ताको यागे करि पूछि देखें कोई ने कि जेहि सत्य बचन की
तुम्हारे चरण ते हम बिछुरत हैं ॥ १ ॥ सब साधन को फल रूप जो
यह भाग ताको पाए पर नहीं सम्हारि सकै ॥ २ ॥ ३ ॥ तात माया
बस तुम्हारी मायावस ॥ ४ ॥ बचन न पारे पर्यो कै इच्छा नहिं
पर हेरि बिचारो जो अतिशय दुख में ग्रस्त हैं ॥ ५ ॥ २ ॥
रहि चलिये सुंदर रघुनायक । औ मृत तात बचन पा-

रन रत इननेउ तात मानिबे सायक ॥ १ ॥ वेद विदित यह बानि तुम्हारी रघुपति सदा सना सुखदायक । रापहु निज मरजाद निगम की हौं बलिजाउं धरहु धनु सायक ॥२॥ सोक कूप पुर परिहि मरिहि नृप मुनि मंदम रघुनाथ सिधायक । यह दूषन विधि तोहि होत अब राम चरन वियोग उपजायक ॥३॥ मातु वचन मुनि स्रवत नयन जल कछु सुभाउ जनु नरतन पायक । तुलसिदास मुरझाज न माध्यौ तौ तो दोष छोड़ महि आयक ॥ ४ ॥ ३ ॥

रहि १० । गहि चलिए कहँ गहि जाए ॥ १ ॥ रघुपति सदा संतन के सुखदाता हैं यह बानि तुम्हारी वेद में प्रसिद्ध है वेद सिद्ध जो अपनी मर्जाद है ताको राखहु भाव अजोध्या वासी सब संत हैं तिन को दुख मति देहु । मैं बलिजाउं धनुष बान को धरि देहु । भाव चलन के साज सब उतारि डारहु ॥ २ ॥ अब व्याकुलता ते विधाता मति कहति हैं कि रघुनाथ के जाइबे वाला संदेस मुनि के सोक रूपी कूप में अयोध्या वासी परैंगे औ महाराज मरैंगे श्री रामचरण वियोग उपजावनि हारा जो यह दूषन से तुम्ह कहं होत है ॥ ३ ॥ पायक कहँ पाए कै, आयक कहँ आए कै ॥ ३ ॥ ४ ॥ टि०—पाठांतर होइ के स्थान मोहि ।

सोरठ—राम हौं कौन जतन घर रहिहौं । बार बार भरि अंक गोद लै लखन कौन सो कहिहौं ॥ १ ॥ इहि आंगन बिहरत मेरे बारे तुम जो सङ्ग सिसु लीन्हे । वैसे प्रान रहत सुमिरत सुत बहु बिनोद तुम कीन्हे ॥ २ ॥ जिन्ह श्रवननि कल बचन तिहारे सुनि सुनि हौं अनुरागी । तिन्ह श्रवननि बनगवन सुनति हौं मोते कवन अभागी ॥ ३ ॥ जुग सम निमिष जाहि रघुनंदन बदन कमल बिनु देखे । जौं तन रहे बरष बीते बलि कहा प्रीति इहि लेखे ॥ ४ ॥ तुलसीदास

वम थौ हरि देषि विकल महतारी । गद्गद कंठ नयन
फिरि फिरि आवन कहेउ मुरारी ॥ ५ ॥ ४ ॥

राम इ० । हे राम मैं कवने जतन ते घर में रहौंगी ॥ १ ॥ २
इहां बरष पद ते चौदह बरष लेना ॥४॥ फिरि कहैं पारंपार ॥५॥४

राग बिलावल—रहहु भवन हमरे कहे कामिनि । सा
सासु चरन सेवहु नित जो तुम्हरे पति हित गृह स्वामिनि
॥ १ ॥ राजकुमारि कठिन कंटक मग क्यौं चलिहौ मृदु
गजगामिनि । तुमह बात बरषा हिम आतप कैसे सहिहौं
बगनित दिन जामिनि ॥ २ ॥ हौं पुनि पितु आज्ञा प्रमा
करि ऐहौं बेगि सुनहु दुतिदामिनि । तुलसिदास प्रभु सिर
बचन सुनि सकि न सकी मुरछित भइ भामिनि ॥३॥५॥

श्री जानकी जू प्रति रघुनाथ जी की उक्ति है । रहहु इ० । पुनः
स्वामिनी हैं यह कहिबे को यह भाव कि तुम को अन्यत्र जाना
चाहिये ॥१॥ जामिनि यामि ॥२॥३॥५॥

कृपानिधान सुजान ज्ञानपति सङ्ग बिपिन हौं पावौंगी।
गृह ते कोटि गुनित नृपमारग चलत माय मन पावौंगी॥१॥
याके चरन कमल पायौंगी यम भय बात छोलावौंगी । म
गजोरनि मृग मयंक छवि सादर पास करावौंगी ॥२॥
बठि साथ राखिहौं मा कहं तौ सङ्ग प्रान पठावौंगी । तुलसि
दास प्रभु बिनु सोवत रहि कौं बिरह दहन देखावौंगी ॥३॥

श्री जानकी जू की उक्ति है कृपा इ० । मन गुन ॥ १ ॥ मां
मैं कहौं करौंगी को दूसरो मुख कहं है यहि कर विरह
अरहौं तुम्ह बिनु मरब बिरह कौन कालु । बिपिन कोटि
मृदु सहस्र सो है बिष सरिसो बालु ॥ १ ॥ ४ ॥

कल्प विमल दुकूल मनोहर कंद मूल फल अमिय नाजु। प्रभुपद कमल बिलोकिहौं छिनु छिनु इहि ते अधिक कहा सुप समाजु ॥२॥ हौं रहौं भवन भोग लोलुप ह्वै पति कानन कियो मुनि को साजु। तुलसिदास ऐसे बिरहबचन सुनि कठिन हियो बिहखो न आजु ॥ ३ ॥ ७ ॥

कहो इ० ॥ १ ॥ अमिय नाजु अमृत सम अन्न ॥ २ ॥ ऐसे बिरह बचन अर्थात् तुमे सुकुमारि हौ बन योग्य नहीं यह बचन सुनि के मेरो हृदय कठिन है सो न फट्यो ॥ ३ ॥ ७ ॥

प्रिय निठुर बचन कहे कारन कवन । जानत हो सब के मन की गति मृदुचित परम कृपालु रवन ॥१॥ प्राननाथ सुंदर सुजान मनि दीनबंधु जन आरति दवन। तुलसिदास प्रभु पद सरोज तजि रहि हौं कहा करौंगी भवन ॥१॥८॥

प्रिय इ० । रवन स्वामी ॥१॥ सुजान मनि सुजानन में श्रेष्ठ ॥२ ८। टि०—आरति दवन दुख हरनेवाले।

मैं तुम सों सतिभाय कही है। बूझति और भांति कत भामिनि कानन कठिन कलेस सही है ॥ १ ॥ जौं चलि हौं तौ चलौ चलिए बन सुनि सिय मन अवलंब लही है। बूड़त बिरह बारि निधि मानहु नाह बचन मिसि बांह गही है ।२। प्राननाथ के साथ चली उठि अवध सोक सरि उमगि बही है। तुलसी मुनि न कबहु काहू कहुं तनु परिहरि परिछांह रही है ॥ ३ ॥ ९ ॥

श्री रघुनाथ की उक्ति है, मैं इ० । हे भामिनी हम तुम से जस है बस करी है, ताको तुम औ भांति काहे बूझति हौ, बन में सांचो कठिन कलेस है ॥ १ ॥ मानो बिरह रूप समुद्र में बूड़त में ने बचन के बहाने ते बांह गहि लई है

पृथक् परिछांही को रहते काहू ने नहीं सुनी है। भाव तब जानकी कैसे रहैं ॥ ३।९ ॥

जबहिं रघुपति सङ्ग सीय चली। विकल वियोग लो पुरतिय कहै अति अन्याउ अली ॥ १ ॥ कोउ कहै मनिग तजत कांच लगि करत न भूप भली। कोउ कहै कु कुवेलि वैकेई दुप विषफलनि फली ॥ २ ॥ एक कहै ज जोग जानकी विधि वड विषम वली। तुलसी कुलिसहु की कठोरता तेहि दिन दलकि दली ॥ ३। १० ॥

जब इ० । हे सखी अति अन्याव है ॥ १ । इहां कांच स्यानी सत्य वचन हैं; कुवेलि विषलता ॥ २ ॥ क्या जानकी जू बन जाने जोग्य हैं अर्थात् नहीं पर विधाता अति कठिन वलवान है। गोसाईं जी कहत हैं कि तेहि दिन और को को कहै कुलिसहु की कठोरता दलकि के फटि गई ॥ ३ ॥१० ॥

ठाढे हैं लषन कमल कर जोरे। उर धकधकी न कछु सकुचनि प्रभु परिहरत सवन चित तोरे ॥ १ ॥ कृपा सिन्धु अवलोकि वंधु तन प्रान कृपान वीर सी छोरे। तात विदा मागिऐ मातु सो वनिहै वात उवाइ न थोरे ॥ २ ॥ जाइ चरन गहि आयसु लीन्हो जननि कहत वहु भांति निहोरे। सिय रघुवर सेवा सुचि ह्वैहौ तौ जानिहौ मांई सुत मोरे ॥ कोजहु कहै विचार निरंतर राम समीप मुकुत महिं थोरे। तुलसी मुनि सिय चले चकित चित उठे मानो विहग वधिक मधु भोरे ॥ ४ ॥११ ॥

ठाढे ह० । संकोच से कछु कहत नाहीं है हृदय में धकधकी है कारे से कि वन का काज में मन को तोरे तुम सब त्याग करत हैं ॥१॥ कृपा रूप तो सरदार है मांगो बार के समान छोरे अर्थात् हटाओ

बोले बंधु के तन को देखि के कृपा सिंधु बोले कि हे तात ! माता सो विदा मागिए और उपाय से न बनिहै अर्थात् वे माता के कहे हम न ले चलब ॥ २ ॥ सुचि छलरहित ॥३॥ एही विचार निरंतर करेहु कि थोरे सुकृत से रघुनाथ के निकट प्राप्ति नहीं होत है। यह सिखावन सुनि के चकित चित ते चलत भए। मानो वधिक के गाफिल भए से पच्छी उड़ेउ ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग सोरठ—मोको विधु वदन विलोकन दीजै। राम लषन मेरो यहै भेट वलिजाउं मोहि मिलि लीजै ॥ १ ॥ सुनि पितु वचन चरन गहे रघुपति भूप अंक भरि लीन्हे। अजहुं अवनि विहरति दरार मिस सो अवसर सुधि कीन्हे। पुनि सिरनाइ गवन कियो प्रभु सुरक्षित भयो भूप न जाग्यौ। करमचोर नृप पथिक मारि मानो रामरतन लै भाग्यौ ॥ ३ ॥ तुलसी रविकुल रवि रथ चढि चले तकि दिसि दखिन सुहाई। लोग नलिन भए मलिन अवधसर विरह विषम हिम आई ॥ ४ ॥ ११ ॥

श्री राम प्रति श्री चक्रवर्ती महाराज की उक्ति है मोको इ० ॥१।२ कर्म रूप चोर ने महाराज रूप पथिक को मारि कै मानो राम रूप रत्न को लूटि कै लै भाग्यो ॥ ३ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि सूर्य कुल के सूर्य जो श्रीराम सो रथ पर चढ़ि के सुंदर दक्षिण दिसा के ओर चलत भए। सूर्य दक्षिणायन में हिम रितु आवति है सो इहां कठिन विरह रूप हिम रितु आई। ताते अजोध्या रूप सर में, लोग रूप कमल मलीन होत भए ॥ ४ ॥ १२ ॥

राग बिलावल—कहो सो विपिन है धौं केतिक दूरि। जहां गवन कियो कुंवर कोसलपति बूझति सिय पिय पतिहि विसूरि ॥ १ ॥ प्रान नाथ परदेस पयादेहि तजे हय तूरि । करीं

पृथक् परिछांही को रहते काहू ने नहीं सुनी है। भाव तब जानकी
कैसे रहैं ॥ ३।९ ॥

अवहिं रघुपति सङ्ग सीय चली। विकल वियोग लोग
पुरतिय कहै अति अन्याउ अली ॥ १ ॥ कोउ कहै मनिगन
तजत कांच लगि करत न भूप भली। कोउ कहै कुल
कुवेलि वैकेई दुख विषफलनि फली ॥ २ ॥ एक कहै बन
जोग जानकी विधि वड विषम वली। तुलसी कुलिसहु
कठोरता तेहि दिन दलकि दली ॥ ३। १० ॥

जब इ०। हे सखी अति अन्याव है ॥ १। इहां कांच स्यानं
सत्य वचन है; कुवेलि विपलता ॥ २ ॥ क्या जानकी जू बन जानं
जोग्य हैं अर्थात् नहीं पर विधाता अति कठिन बलवान है। गोसाईं जी
कहत हैं कि तेहि दिन और को को कहै कुलिसहु की कठोरता दलकि
के फटि गई ॥ ३ ॥१० ॥

ठाढ़े हैं लषन कमल कर जोरे। उर धकधकी न काहू
काहु सकुचनि प्रभु परिहरत सवन चिन तोरे ॥ १ ॥ कृपा
सिन्धु अवलोकि बंधु तन प्रान कृपान बीर सी छोरे। तात
विदा मागिऐ मातु सो बनिहै बात उपाइ न औरे ॥ २ ॥
जाइ चरन गहि आयसु जाच्यो जननि कहत बहु भांति
निछोरे। सिय रघुवर सेवा सुचि ह्वैहौ तौ जानिहौ सांति
नहिं थोरे। कोजहु इहै विचार निरंतर राम समीप सुकृत
मुत मोरे ॥ तुलसी मुनि सिय चले चकित चित उठी
मानो विहग बधिक बधि बोरे ॥ ४ ॥११ ॥

टीं इ०। संदोष ते कछु फल नाहीं है दरव में बहवो
कारे ते कि नहु या काल में सब को मोरे
काम रूप सो सरकार है सारो बीर

मरकत कनक वरन मृदुगात ॥ १ ॥ अंसनि चाप
ट मुनिपट जटामुकुट बिच नूतन पात । फेरत
रोजनि सायक चोरत चितहि सहज मुसकात ॥२॥
र सुकुमारि सुभग सुठि राजति बिनु भूषन नवसात।
नरपि ग्राम बनितनि के नलिन नयन बिगसित मानो
॥ अंग अंग अगनित अनंग छवि उपमा कहत
कुचात । सिय समेत नित तुलसिदास चित बसत
थिक दोउ भ्रात ॥ ४ ॥ १५ ॥

मुख औ कमल सम नेत्र औ कोमल अंग हैं । मरकत वरण
ी कनक वरण श्रीलछिमन जी हैं ॥१॥ अंसनि चांप, कान्हन
नेपट वल्कलादि ॥२॥ सुभगसुठि अति सुंदरि भूषन नवसात
ार परम शोभा देखि कै ग्रामयुवतिन के नेत्र कमल विकसे
ाल में कमल विकसत । इहां सुखमा सूर्य है ॥३॥४॥१५॥

पि देखि री पथिक परम सुन्दर दोऊ । मरकत
वरन काम कोटि कांति हरन चरन कमल कोमल
कुंअर कोऊ ॥१॥ कर सर धनु कटि निषंग मुनि-
सुभग अंग संग चंद्रवदनि वधू सुंदरि सुठि सोऊ ।
वेष किए सोभा सब लूटि लिए चित के चोर वय
ोचन भरि जोऊ ॥ २ ॥ दिनकर कुल मनि निहारि
ग्राम नारि परसपर कहैं सपि अनुराग ताग पोऊ ।
ध्यान सुधन जानि मानि लाभ सघन कृपिन ज्यों
हिय सुगेह गोऊ ॥ ३ ॥ १६ ॥

धुन की उक्ति है देखि इ० । कलधौत स्वर्ण ॥ १ ॥ जोऊ
रस्पर कहति हैं कि हे सखी इन दोऊ कुँअर रूप मणिन
रूप ताग में पोहु यह ध्यान को सुंदर धन जानि कै अति

चरन सरोरुह धूरि ॥ २ ॥ तुलसिदास प्रभु प्रिया वचन सुनि नीरज नयननीर आए पूरि । कानन कहां अवहि सुनु सुंदरि रघुपति फिरि चितये हितभूरि ॥ ३ ॥ १३ ॥

श्रीराम प्रति श्रीजानकी जी की उक्ति है कहो इ० । श्रीजानकी जू प्रिय पति जो श्रीराम तिन सो विसूरि कहैं विलखाय के बूझति हैं हे कोशलपतिकुंवर जहां को गमन कियो हौ सो वन धौं केतिक दूरि है हम ते कहो ॥ १ ॥ हे प्राणनाथ सब सुख को तृनवत तोरि के तुमं औ परदेस को पयादे चले श्रमित भए होहुगे ताते तरुतर विलम कीजिए मैं बयारि करौं औ चरण कमल की धूरि झारौं। भ्रम जाते श्रम उतरि जाय ॥ २ । प्रिया के यह वचन सुनि के प्रभु के नैन कमल में जल भरि आए। कहत भए कि हे सुंदरि सुनो अबही बन कहां है अस काहि के अति हित से फेर देखत भए ॥ ३ ॥ १३ ॥

फिरि फिरि राम सीयतन हेरत । तृषित जानि जल लैन लषन गए भुज उठाय ऊंचे चढि टेरत ॥ १ ॥ अवनि कुरंग विहग द्रुम डारनि रूप निहारत पलक न प्रेरत । मगन न डरत निरषि कर कमलनि सुभग सरासन सायक फेरत ॥ २ ॥ अवलोकत मग लोग चहूं दिसि मनहुं चकोर चंद्रमहिं घेरत । ते जन भूरिभाग भूतल पर तुलसी राम अधिकपद जे रत ॥ ३ ॥ १४ ॥

फिरि इ० । श्रीराम जू ऊंचे पर चढ़ि के भुजा उठाय लषन लाल को टेरत हैं औ श्रीजानकी जू के ओर फिरि फिरि देखत हैं ॥ १ ॥ भूमि ते हरिन औ द्रुमन के डारन ते पक्षी रूप को एक टक देखत हैं। यद्यपि श्रीराम जू कर कमलनि मे सुंदर धनुष बान फेरत हैं तथापि ऐसे मगन हैं कि देखि डरत नहीं हैं ॥ २ ॥ जैसे चन्द्रमा को चकोर घेरत हैं तैसे मग लोग चहूं ओर ते देखत हैं अर्थात् पलक रोकि ॥ ३ ॥

नृपतिकुंवर राजत मग जात । सुंदर वदन सरोरु

लोचन मरकत कनक वरन मृदुगात ॥ १ ॥ अंसनि चाप तून कटि मुनिपट जटामुकुट बिच नूतन पात । फेरत पानि सरोजनि सायक चोरत चितहि सहज मुसकात ॥२॥ संग नारि सुकुमारि सुभग सुठि राजति बिनु भूषन नवसात। सुषमा निरखि ग्राम बनितनि के नलिन नयन बिगसित मानो प्रात ॥ ३ ॥ अंग अंग अगनित अनंग छवि उपमा कहत सुकवि सकुचात । सिय समेत नित तुलसिदास चित बसत किसोर पथिक दोउ भ्रात ॥ ४ ॥ १५ ॥

सुंदर मुख औ कमल सम नेत्र औ कोमल अंग हैं । मरकत वरण श्रीराम औ कनक वरण श्रीलछिमन जी हैं ॥१॥ अंसनि चांप, कान्हन पर धनु मुनिपट वल्कलादि ॥२॥ सुभगसुठि अति सुंदरि भूषन नवसात सोरह शृंगार परम शोभा देखि कै ग्रामयुवतिन के नेत्र कमल बिकसे जैसे प्रातःकाल में कमल बिकसत । इहां सुखमा सूर्य है ॥३॥४॥ १५॥

तूं देखि देखि री पथिक परम सुन्दर दोऊ । मरकत कलधौत बरन काम कोटि कांति हरन चरन कमल कोमल अति राजकुंअर कोऊ ॥१॥ कर सर धनु कटि निषंग मुनिपट सोहैं सुभग अंग संग चंद्रवदनि बधू सुंदरि सुठि सोऊ। तापस बर बेष किए सोभा सब लूटि लिए चित के चोर बय किसोर लोचन भरि जोऊ ॥ २ ॥ दिनकर कुल मनि निहारि प्रेम मगन ग्राम नारि परसपर कहैं सपि अनुराग ताग पोऊ। तुलसी यह ध्यान सुधन जानि मानि लाभ सघन कृपिन ज्यों सनेह सो हिय सुगेह गोऊ ॥ ३ ॥ १६ ॥

ग्राम वधुन की उक्ति है देखि इ० । कलधौत स्वर्ण ॥ १ ॥ जोऊ देखु ॥२॥ परस्पर कहति हैं कि हे सखी इन दोऊ कुँअर रूप मणिन को अनुराग रूप ताग मे पोहु यह ध्यान को सुंदर धन जानि कै अति

लाभ मानि कै हृदय रूप सुंदर गृह में सनेह पूर्वक छपाउ जैसे कृपिन धन छपावत है ॥ ३ ॥ १६ ॥

कुंअर सांवरो री सजनी सुंदर सब अंग। रोम रोम हरी निहारि आलिवारि फेरि डारि कोटि भानुसुखन सरदकेर कोटिअनंग ॥ १ ॥ वामअंस लसतचाप मौलि मंजु जटकलाप सुचिसर कर मुनिपट कटितट कसे निषंग। आयत उर बाहु नैन मुख सुषमा को लहै न उपमा अवलोकि लोक गिरा मति गति भंग ॥२॥ यौं कहि भई मगन बाल विथकी सुनि जुवति जाल चितवत चलि जात संग मधुप मृग विहंग। बरनो किमि तिन्ह की दसहि निगम अगम प्रेमरसहि तुलसो मन बसन रंगे रुचिर रूप रंग ॥ ३॥१७ ॥

कुंअर इ० । री सजनी यह सांवरो कुंवर सब अंग ते सुंदर है।। आली इन की रोम रोम की छवि देखि कै कोटिन अमनी कुमार औ सरद पूनों के चंद्र औ कोटिन काम कों फेरि कै नेवछावरि करि डार ॥ १ ॥ वाम कांधे में धनु औ माथे में पवित्र जटन कै समूह औ हाथ में बाण सोभत है । बलकल पहिरे हैं औ कटिदेश में तरकस कसे छाती बाहु औ नयन विसाल हैं औ मुख की परम शोभा को कोउ नहीं पावत है । लोक में उपमा खोजि कै सारदा की मति औ गति गई है "मति भारती पंगु भई जो निहारि विचारि फिरी उपमा न पाई ॥ वह कहनिहारी बाला अस कहि प्रेम में डूबि जात भई औ कहनि और सब युवती सुनि थकित होत भई औ भ्रमर इव चितवत संग में चले जात हैं। मन रूप बसन कों सुंदर रूप रंग दे । तिन्ह की दसा कैसे बरनों कहे ते कि वेदन को भी अगम प्रेम ॥ ३॥१७ ॥

राग कल्यान । देषु कोउ परम सुंदर सषि बटोही।
बरन बरन बारिज बरन भूपसुत रूपनिधि

रूपि हौं मोही ॥ १ ॥ श्यमल मरकत स्याम सील सुषमा धाम गौर तन सुभग सोभा मुनुखि लोही। जुगल बिच नारि सुकुमारि मुठि सुंदरी इंदिरा इन्दु हरि मध्य जनु सोही ॥२॥ तरनि वरधनु तीर रुचिर कटि तूनीर धीर उर सुपद मर्दन अवनिद्रोही। अंबुजायत नैन वदन छवि वहु मयन चारु चितवनि चतुर लेत चित पोही ॥ ३ ॥ वचन प्रिय सुनि स्रवन राम करुनाभवन चिते सब अधिक हितसहित कछु मोही। दास तुलसी नेहविवस विसरी देह जान नहिं आपु तेहि काल धौं कोही ॥ ४॥१८ ॥

देखु इ० लाल कमल के रंग कोमल चरण तें जे भूमि में चलत हैं ते रूपनिधि भूपसुतन्ह को देखि मैं मोहि गई । १॥ हे सुमुखि निर्मल मरकत सम स्याम औ शील परम शोभा के धाम एक कुवर औ गौर तन सुंदर शोभा वाली दूसरी कुंवर कों देखु औ दूनों कुंवरन के बीच अति सुंदर सुकुमारि नारि है मानों चंद्रमा औ विष्णु के मध्य में लक्ष्मी शोभी ॥ २ ॥ तूनीर तरकस अवनिद्रोही राक्षसादि अंबुजायत नयन कमलवत् विस्तृत नेत्र, लेत पोही गूथि लेत ॥ ३ ॥ सब कों चितए पर अधिक हित सहित ओहि कहनिहारि कों कोही कहैं कवन हौं ॥ ४।१८ ॥

राग केदारा। सपि नीकि कै निरपि कोउ सुठि सुंदर वटोही। मधुर मूरति मन मोहन जोहन जोग वदन सोभासदन देपि हौं मोही ॥ १ ॥ सांवरे गोरे किशोर सुर मुनि चितचोर उभय अंतर एक नारि सोही । मनहु वारिद विधु वीच ललित अति राजति तडित निज सहज विछोही ॥ २ ॥ उर धीरज धरि जनम सुफल करि सुनहि सुमुपि जिनि विकल होही। को जानै कौने सुकृत लह्यौ है लोयन

लाइ ताही तें वारहि वार कहतिहौं तोही ॥ ३ ॥ सखी
सुसीप दई प्रेम मगनभई सुरति विसरि गई आपनी ओही।
तुलसी रही है ठाढी पाहन गढीसी काढी न जाने कहां
आई कौन को कोही ॥४॥१८॥

सखी इ० । हे सखी भली भांति करि देखु कोऊ अति सुंदर वटोही हैं । इन मनमोहन पथिकन की सोहावनि मूरति देखिवे योग्य हैं । शोभा के सदन इन के मुख हैं जाके देखि के मैं मोहि गई हौं ॥१॥ दोउन के बीच एक नारि सोहि रही है मानों मेघ औ चन्द्रमा के बीच में अपनो चंचल सुभाव त्यागि कै अति सुंदर बिजुरी सोहि रही है॥२॥ हे सुमुखि सुनु विकल मति होंहि धीरज धरि के अपना जन्म सुफल करु जो कौने सुकृतन से नेत्रन ने यह लाभ पायो है । ताते मैं बारहि बार तोसो कहति हौं ॥ ३ । पाहन सी गढ़ि काढ़ी गढ़ी भई पाषान की मूरति सी कौन की कोही केहि की हौ औ कौन हौ । ४॥१९॥

माई मन के मोहन जोहन जोग जोही । थोरिहि वयस गोरे सांवरे सलोने लोने लोयन ललित विधु वदन वटोही ॥१॥ सिरनि जटा मुकुट मंजुल सुमनजुत तैसियै लसति नव पल्लव पोही । किये मुनिवेष बीर धरे धनु तून तोर सोहैं मग कोहैं लपि परे न मोही ॥ २ ॥ सोभा कों सांचो संवारि रूप जातरूप ढारि नारि विरची विरंचि संग सो सोही। राजत रुचिर तन सुंदर सम के कन चाहे चकचौंधी लागै का कहौं तोही ॥ ३ ॥ सनेह सिथिल सुनि वचन सकल सिय चितई अधिकहित सहित ओही । तुलसी मानहु प्रभु छपा को मूरति फिरि हेरि कै हरषि हिय लियो है पोही ॥ ४॥२०॥

माई इ० । हेमाई देखिवे जोग्य मन के मोहन वटोही को मैं देखी।

ते बटोही कैसे हैं कि जिन्ह की अवस्था थोड़ी है, एक सलोने गोरे हैं, एक लोने सांवरे हैं, सुंदर आंखें हैं, चन्द्रसम मुखें हैं ॥१॥ नव पल्लव खोही नए पत्रनयुत डोंगी, को हैं कौन हैं ॥ २ ॥ ब्रह्मा ने शोभा को सांचा बनाइकै तामे रूप रूपी सोना को ढारि कै नारि बनाई सो नारि संग में सोहि रही है, चाहै कहैं देखे ॥ ३ ॥ वह जो सनेह ते शिथिल है ताकी सब बातैं श्रीजानकीजू सुनि कै अधिक प्रीति-सहित वाको देखत भईं । मानो जानकीजू न देखीं प्रभु की कृपा की मूरति ने फिरि के देखि हरषि के चित्त को गूंथि लई । ४ ॥ २० ॥

सपि सरद बिमल बिधु बदन बधूटी । ऐसी ललना सलोनी न भई न है न होनी रते रची विधि जो छोलत छवि छूटी ॥१॥ सांवरे गोरे पथिक बीच सोहति अधिक तिहुं तिभुवन सोभा मानहु लूटी । तुलसी निरपि सिय प्रेमवस कहैं तिय लोचन सिसुन्ह देहु अमिय घूटी ॥२॥२१ ॥

सखी इ० । हे सखी निर्मल सरद के चन्द सम या बधूटी को मुख है ऐसी सलोनी ललना न भई है न कहूं है न होनिहार है, विधाता ने याके सुधारत में जो छवि छूटि परी ताते रति को बनाई ॥ १ ॥ तिहुं कहैं तीनों जने लोचन सिसुन्ह देहु अमिय घूटी, लोचन रूप बालकन के पथिक रूप रूपी अमृत को घोंटी देहु ॥ २ ॥ २१ ॥

सोहैं सांवरो पथिक पाछे ललना लोनी । दामिनि बरन गोरी लपि सपि तिन तोरी बोतो है वय किसोरो लोवन होनी ॥ १ ॥ नीके कै निकाई देपि जनम सुफल लेपि दृग सी भूरि भागिनि नभ न छोनो । तुलसो स्वामो स्वामिनि जोहि मोही है भामिनि सोभा सुधा पियें करि अंपियां दोनी ॥ १॥२२ ॥

सोहैं इ० सु० ॥१॥ नभ न छोनी न आकाश न पृथ्वी में, अंखिआं दोनी आंखिन को दोना बनाय ॥ २ ॥ २२ ॥

पथिक गोरे सांवरे मुठि लोने । संग सुतिय जाके तन
ते लही हैं दुति स्वर्न सरोरुह सोने ॥ १ ॥ वय किसोर
सरि पार मनोहर वयस सिरोमनि होने । सोभा सुधा भरि
अंचवहु करि नयन मंजु मृदु दोने ॥ २ ॥ हेरत हृदय हरत
नहिं फेरत चारु विलोचन कोने । तुलसी प्रभु किधौं प्रभु
प्रेम पटे प्रगट कपट विनु टोने ॥ ३॥२३ ॥

पथिक इ० ॥ १ ॥ किशोर अवस्था रूप नदी से पार है के मनो-
हर युवा अवस्था होनिहार है ॥ २ ॥ सुंदर नयनन सो तिरछे देखतीं
मन को हरिलेत हैं फेर फेरत नाहीं । गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभु कैसों
प्रभु के प्रेम ने विना कपट के टोना प्रगट पढ़े हैं । भाव टोना कपट की
छिपाय के किया जात है । इहां सासुहे मनहरे ताते प्रगट कहे ॥३॥२३॥

मनोहरता को मानो ऐन । स्यामल गौर किसोर पथिक
दोउ सुसुपि निरषि भरि नैन ॥ १ ॥ बीच वधू विधुवदनि
विराजति उपमा कहुं कोउ हैन । मानहुं रति रितुनाथ
सहित सुनिवेष बनायौ है मैन ॥ २ ॥ किधौं सिंगार सुषमा
सुप्रेम मिलि चले जग चित वित लैन । अद्भुत चई किधौं
पठई है विधि मग लोगनि सुष दैन ॥ ३ ॥ सुनि सुचि सरल
सनेह सुहावने ग्राम वधुन कै वैन । तुलसी प्रभु तरु तर
विलंब किये प्रेम कनौडे कैन ॥ ४॥२४ ॥

मनो इ० सु०॥१॥ हैन नहीं है ॥ २ ॥ कैधौं शृंगार रस औ पर
शोभा औ प्रेम मिले के जगत के चित्त रूपी धन को लेइवे को चले हैं।
शृंगार श्रीराम जू सुखमा श्रीजानकी जू प्रेम श्रीलछिमन जू हैं । कैधौं
विधाता ने मगलोगन के सुख देइवे हेतु अद्भुत इन्ह तीनों मूर्ति
एकत्र करि पठए हैं वा चित्रित वेदमई ॥ ३ ॥ प्रेम करि के कनौड़ा कौं
नहीं भए भाव सप के भए ॥ ४ ॥ २४ ॥

वय किसोर गोरे सांवरे धनु बान धरे हैं । सब अंग सहज सुहावने राजिव जीते नैयननि बदननि बिधु निदरे हैं ॥ १ ॥ तून मुमुनिपट कटि कसे जटा मुकुट करे हैं । मंजु मधुर मृदु मूरति पानह्यौ न पायन कैसे धौं पथ बिचरे हैं ॥ २ ॥ उभय बीच बनिता बनी लखि मोहि परे हैं । मदन सप्रिया सप्रिय सपा सुनि बेपु बनाए लिये मन जात हरे हैं ॥ ३ ॥ सुनि जहं तहं देपन चले अनुराग भरे हैं । राम पधिक छवि निरपि कै तुलसी मगलोगनि धामकाम बिसरे हैं ॥ ४ ॥ २५ ॥

वय इ० । राजीव कमल, निदरे हैं निरादर किए हैं ॥ १ ॥ सुंदर मनोहरमूर्ति कोमल ताहू में पनही पगन में नहीं ॥ २ ॥ दोउन के बीच में बनिता बनी है अस हमें को लखि परत हैं कि रतिसहित बसंत सहित काम मुनिबेप बनाये सब के मन हरे लिए जात हैं ॥३॥४॥२५॥

कैसे पितु मातु कैसे ते प्रिय परिजन हैं । जगजलधि ललाम लोने लोने गोरे श्याम जिन्ह पठये ऐसे बालकन बन हैं ॥ १ ॥ रूप के न पारावार भूप के कुमार मुनिबेप देपत लोनाई लघु लागत मदन हैं । सुपमा की मूरति सी साथ निसिनाथमुपी नप सिप अंग सब सोभा के सदन हैं ॥ २ ॥ पंकज करनि चांप तीर तरकस कटि सरदसरोजहू ते सुंदर चरन हैं । सीता राम लपन निहारि ग्राम नारि कहै हेरि हेरि हेरि हेली हिय के हरन हैं ॥ ३ ॥ प्रानहु के प्रान से सुजीवन के जीवन से प्रेमहू के प्रेम रंक कृपिन के धन हैं । तुलसी के लोचन चकोरनि के चंद्रमा से आछे मन मोर चित चातक के घन हैं ॥ ४ ॥ २६ ॥

कैसे इ० । जगत रूप समुद्र के रत्न ॥ १ ॥ इहां पारावार अवधि

के अर्थ में है अर्थात् रूप की सीमा नहीं है। निसिनाथमुखी चन्द्रमुखी ॥ २ ॥ सरदसरोज सरद के कमल, हेरि हेरि हेली कहैं हे सखी देखु देखु देखु इहाँ अति हर्ष में बीप्सा ।३। रंक छपिन के दरिद्र हरौं फ, मन रूप मोर औ चित्त रूप चातक के आछे कहैं नवीन सजल मेघ हैं ॥ ४।२६ ॥

राग भैरव । टेपि हैं पथिक गोरे सांवरे सुभग हैं। मुकुत सलोनी संग सोहत सुमग हैं ॥ १ ॥ सोभा सिन्धु सम्भव। नीके नीके नग हैं। मातु पितु भागवस गए परी फग हैं ॥ २ ॥ पायन पनच्यौ न सृदु पंकज से मग हैं। रूप की मोहनी मेलि मोहे जग जग हैं ॥ ३ ॥ मुनिवेष धरे धनु सायक सुलग हैं। तुलसी हिये लसत लोने लोने डग हैं ॥ ४॥२७ ॥

देखि इ० सु० ॥१॥ शोभा समुद्र से उत्पन्न आछे आछे मणि हैं। माता पिता के भागवस फांदा में परि गए हैं ॥ २ ॥ पायन चरन में मेलि डारि, अग जग स्थावर जंगम ॥ ३ ॥ सुलग हैं सुंदर लागत हैं। डग फाल जाको कोऊ देश में डेग कहत हैं ॥४॥२७ ॥

पथिक पयादे जात पंकज से पाय हैं। मारग कठिन कुस कंटक निकाय हैं ॥ १ ॥ सपि भूखे प्यासे पै चलत चित चाय हैं। इन्ह के सुकृत सुर संकर सहाय हैं ॥ २ ॥ रूप सोभा प्रेम कैसे कमनीय काय हैं। सुनिवेष किये किधौं ब्रह्म जीव माय हैं ॥३॥ वीर बरिआर धीर धनुधर राय हैं। दसचारि पुरपाल आलि उरगाय हैं ॥ ४ ॥ मग लोग देपत करत हाय हाय हैं। बन इन को तो बाम विधि के कपन हैं ॥ ५ ॥ धन्य ते जे मीन से अवधि अंबु आय हैं। प्रभु सो जिन्हहूं के भले भाय हैं ॥ ६॥२८ ॥

पथिक इ० निकाय समूह ॥ १ ॥ चाय आनन्द ॥ २ ॥ रूप श्रीराम जी शोभा श्रीजानकी जू प्रेम श्रीलछिमन जू माय माय ॥ ३ ॥ राय राजा है, सखी चौदहो भुअन के पालक उरगाय हैं परमेश्वर हैं। ॥ ४ ॥ इन को जो बन तो विधाता बनाय के वास है ॥ ५ ॥ आय है यह जो अवधि रूपी जल है नेहि में जे मीन से हैं रहे हैं ते धन्य हैं औ जिन्ह के भले भाव इन से हैं तेऊ धन्य ॥ ६ ॥ २८ ॥

राग असावरी। सजनी हैं कोउ राजकुमार। पंथ चलत मृदु पद कमलन दोउ सील रूप आगार ॥१॥ आगे राजिव नैन स्याम तन सोभा अमित अपार। डारौं वारि अंग अंगनि पर कोटि कोटि सत मार ॥ २ ॥ पाछे गोर किसोर मनोहर लोचन वदन उदार। कटि तूनीर कसे कर सर धनु चले हरन छितिभार ॥ ३ ॥ जुगल बीच सुकुमारि नारि एक राजति बिनहिं सिंगार। इंद्रनील हाटक मुकुतामनि जनु पहिरे महि हार ॥ ४ ॥ अवलोकहु भरि नयन बिकल जिनि होहु करहु सुविचार। पुनि कह यह सोभा कहँ लोचन देह गेह संसार ॥ ५ ॥ सुनि प्रिय बचन चितै हित कै रघुनाथ कृपा सुख सार। तुलसिदास प्रभु हरे सबन्हि के मन तन रहि न संभार ॥ ६॥२९ ॥

सजनी इ० सु० ॥ १ ॥ २ ॥ उदार कहँ सुंदर ॥३॥ इहां मरकत मनि श्रीराम, सोना श्रीलछिमन जी, मोती श्रीजानकी जी हैं ॥४॥ ५ ॥ ६॥२९॥ टि०—इंद्रनील=मरकत मनि, हाटक=सोना। मुकुतामनि मोती।

राग टोडी। देखु री सखी पथिक नप सिप नीके हैं। नीले पीने कमल से कोमल कलेवरनि तापसहूं वेष किये काम कोटि फीके हैं ॥ १ ॥ सुकृत सनेह सील सुषमा सुख सकेलि बिरचे विरंचि किधौं अमिय अमीके हैं। रूप की सी

दामिनी सुभामिनी सोहति संग उमहुं रमा ते बाढ़ि
अंग तोके हैं ॥ २ ॥ बनपट कसे कटि तूनं तीर धनु
धीर वीर पालक कृपाल सब ही के हैं । पानह्यौ न
सरोजनि चलत मग कानन पठाए पितु मातु कैसे
हैं ॥ ३ ॥ आली अवलोकि लेहु नयननि को फल एह
की सुलाभ सुप जीवन से जीके हैं । धन्य नर नारि
निहारि विनु गाहकहूं आपने २ मन मोल विनु दीजै
॥ ४ ॥ विबुध बरषि फूल हरषि हिये कहत
मगन सनेह सियपीके हैं । जोगी जन अगम दरस
पावंरनि मुदित बचन सुनि सुरप सचो के हैं ॥ ५ ॥
की सुबालक से लालत सुजन सुनि मग चारु चरित
राम सी के हैं । जोग न विराग जाग तप न तीरथ त्याग
अनुराग भाग घुले तुलसी के हैं ॥ ६॥३० ॥

देखि इ० सु० । रूप की सी दामिन दामिन की ऐसो रूप है
बनपट वल्कलादि ॥ ३ ॥ बीके हैं बिकाए हैं ॥ ४ ॥ सियपीके सनेह
ग्रामलोग मगन हैं औ देवता हिय में हरषि फूल बरषि कहत हैं
जन को जो दरस अगम सो पावँरन पायो। यह देवतन के
नि के इन्द्र औ इन्द्रानी मुदित भए ॥ ५ ॥ मग के सुन्दर
पन श्रीराम श्रीजानकी जी के हैं तेई प्रीति के सुन्दर
हैं । बालक को जैसे पिता माता दुलारत तैसे इहां सुंदर जन
औ इनहीं चरित्रन के अनुराग ते जोगादि बिना तुलसी
खुले हैं ॥ ६ ॥ ३० ॥

रीति चलिबे को चाहि प्रीति पहिचानि कै । आ
आपनी कहै प्रेम परवस भई मंजु मृदु बचन सनेह
॥ १ ॥ सांवरे कुंअर के चरन की पराइ चिह्न

मग धरति कहाधौं जिय जानि कै। जुगल कमल पद अंक जोगवत जात गोरे गात कुंअर महिमा महा मानि कै॥ २॥ उन की कहनि नीकी रहनि लषन सीकी तिन की गहनि जे पथिक उर आनि कै। लोचन सजल तन पुलक मगन मन होत भूरि भागी जसु तुलसी बषानि कै॥ ३॥ ३१॥

रीति इ०। श्री जानकी राम लषन की चलिबे की रीति चाहि कहै देखि कै औ प्रीति पहिचानि कै जे नर नारि प्रेम ते परवस हैं ते सुंदर कोमल बचनन को स्नेह रूपी अमृत में सानि कै आपनी आपनी उक्ति कहत हैं॥ १॥ २॥ उन की कहनि नीकी है औ लषन सी की रहनि नीकी है औ जे पथिक श्रीराम आदि के उर में आनि कै लोचन सजल तन पुलक मगन मन होत तिन्ह की गहनि नीकी है औ तुलसीउ यस बखानि कै बड़ भागी है॥ ३॥ ३१॥

राग केदारा—जेहि जेहि मग सिय राम लषनु गए तहँ तहँ नर नारि बिनु छर छरिगे। निरषि निकाई अधिकाई बिथकित भई बच बपु नैन सर सोभा सुधा भरिगे॥ १॥ जोते बिनु बए बिनु निफल निगाये बिनु मुकुत सुपेत सुप सालि फूलि फरिगे। मुनिहुं मनोरथ को अगम अलभ्य लाभु सुगम सो राम लघु लोगनि को करिगे॥ २॥ लालची कौडी के कूर पारस परे हैं पालि जानत न को हैं कहा कोचो सो बिसरिगे। बुधि न बिचार न बिगार न सुधार सुधि देह गेह नेह नाते मन ते निसरिगे॥ ३॥ बरषि सुमन सुर हरषि हरषि कहैं अनायास भवनिधि नीच नीके तरिगे। सो मनेह समउ सुमिरि तुलसिहु के से भलोभांति भले पैत भले पामे परिगे॥ ४॥ ३२॥

जेहि इ०। जेहि जेहि राह से श्रीजानकी राम लषन गये तहां

तहां नर नारि पेटोंने छरि गये, अधिक सुंदराई देखि कै। वचन सारी
विशेष थकित भए औ नैन रूपी तड़ाग में सोभा रूपी मिष्ट जल भरि
गए वा सुधा अमृत ॥ १ ॥ विना जोते विना बोए निफल कहै अंकुर
निराए विना अर्थात् सोहे विना छुठत रूप सुंदर खेत में सुख रूप
धान फूलि के फरि गयो इहां जोतना आदि कर्म्म उपासना ज्ञान है
जो लाभ मुनिंदु के मनोरथ को अगम औ अलभ्य है सो लाभ श्रीराम
छोटे लोगन को भी सुगम करि गए ॥ २ ॥ जे कूर कौड़ी के लालची
रहे तिन के पारस सम श्रीरामादि पथिक पाले परे हैं ताते अध्यास-
रहित भए नहीं जानत हैं कि हम कौन हैं औ कहा करनो है सो
बिसरि गए न बुद्धि है न विचार है न विगार सुधार की सुधि है देह
गेह नेह नाता सब मन ते निकल गये ॥ ३ ॥ समउ समय पैत दाव
॥ ४ ॥ २२ ॥

बोले राज देन को रजायसु भो कानन कों आनन प्रसन्न
मन मोद बड़ो काजु भो। मातु पितु बंधु हित आपनो पर
हित मोकों बीसहू के ईस अनकूल काजु भो ॥ १ ॥ असनु
अजीरन को समुझि तिलक तज्यो विपिन गवनु भले भूपे को
सुनाजु भो। धरमधुरीन धीर बीर रघुबीर जू को कोटि
राज सरिस भरत जू को राजु भो ॥ २ ॥ ऐसी बातें कहत
सुनत मग लोगन की चले जात भात दोउ मुनि को सो साजु
भो। ध्याइबे कों गाइबे कों सेइबे सुमिरिबे कों तुलसी को
सुपद समाजु भो ॥ ३ ॥ २३ ॥

१०। राज देइबे के लिए तो बोलाए औ आज्ञा दिए कानन
को सुख प्रसन्न औ मन में आनन्द बड़ो काज बन जावो
होत भयो औ अस सुनत भए कि माता कैकेई को औ पिता को
को हमारे बन जावे में हित है औ अपना तो परमहित है।
बीसो विश्वे आजु ईश्वर अनुकूल भो। [illegible] हिबे को यह
कि पितु वचन पालिबे ते [illegible] भयो वा

ां माता आदि को दिन भौ वन में मुनि आदि के दर्शन ते आपन
न नाने वा जोहि हेतु अवतार लिए सो कार्य बन जावे ते होयगो
न परमहिन ॥ १ ॥ अर्जारन पर को भोजन सम राजनिलक को
ृद्धि के त्याग दियो भौ निपट भूखे को अनाज प्राप्ति होनो सम वन-
सन भयो भाव जैसे अन्न मिलिवे ते भूखा प्रसन्न होत तस प्रसन्न भए।
र्म मर्या बोझा को धरानिहार धीर धीर जो रघुवीर जू तिन को
पने एक राजको को कई कोटि राज सम भरत जू को राज पाइवो
यो ॥ २ ॥ मुनि के समान साजु भयो है जेहि दोऊ भाइन को ते
गलोगन की ऐसी बातें जेते कहत सुनत चले जात हैं ध्याइवे आदि
ा तुलसी को सब भांति ते सुखदाता यह पथ को समाज
यो ॥ ३ ॥ ३३ ॥

सिरिस सुमन सुकुमारि सुषमा की सींव सीय राम बडे
ी सकोच संग लई है। भाई के प्रान समान प्रिया के प्रान के
ान जानि बानि प्रीति रीति कृपा सीलमई है ॥१॥ आलबाल
पवध सुकाम तरु काम बेलि दूरि करि के कई बिपति बेलि
वई है। आपु पति पूत गुरजन प्रिय परिजन प्रजाहू को
कुटिल दुसह दसा दई है ॥ २ ॥ पंकज से पगनि पानह्यौ
न परुष पंथ कैसे निबहे हैं निबहैंगे गति नई है। एही
सोच संकट मगन मग नर नारि सब को सुमति राम राग
रंग रई है ॥ ३ ॥ एक कहै बाम बिधि दाहिनो हम को
भयौ उत कीन्हो पीठि इत को सुडीठि भई है। तुलसी
सहित बन बासो मुनि हमरियो अनायास अधिक अघाइ
बनि गई है ॥ ४॥३४ ॥

सिरस इ०। भाई जो श्रीलषनलाल तिन के प्रान समान औ
प्रिया जो श्रीजानकी जू तिन के प्रान के प्रान औ कृपा सील मई जो
श्रीराम सो सिरिस के फूल सम सुकुमारि औ परम सोभा की मर्यादा

जो श्री जानकी जू तिन की बानि करैं सुभाव औ प्रीति रीति जानि
कै बड़े ही संकोच से संग में लई है ॥ १ ॥ थाल्हा रूप श्री अवध
तेहि में सुंदर कल्पवृक्ष औ कल्पलता के समान श्रीराम जानकी हैं तिन
कों कैकेई ने दूरि करि कै विपति की बंवरि बोई है। तेहि विपति बीज की
कुटिल कैकेई ने अपने को औ महाराज आदि को दुसह दसा देति भई ॥२॥
एक तो कमल से कोमल चरन हैं ताहू पर जूतो नहीं औ राह कठो
है तेहि में कैसे निबहे हैं औ कैसे निबहैंगे यह नई गति है। भाव आज
लों अस नहीं देखा एही सोच औ संकट में मग के नर नारि हरे
औ सब की सुंदर मति श्री राम की प्रीति रूपी रंग में रंगी है ॥ ३ ॥
पुर नर नारि कहत हैं कि बनवासी मुनि सहित हम सब कै अनु
यास अधिक अघाय कै बनि गई है ॥ ४॥३४ ॥

राग गौरी । नीके कै मैं न बिलोकन पाए। सपि एहि
मग जुग पथिक मनोहर बधु विधुवदनि समेत सिधाए ॥१॥
नयन सरोज किसोर बयस बर सीस जटा रचि मुकुट बनाए।
कटि मुनिबसन तून धनुसर कर स्यामल गौर सुभाय सुहाए
॥ २ ॥ सुंदर बदन बिसाल बाहु उर तनु छबि कोटि मनोज
लजाए। चितवत मोहि लगी चौंधी सी जानो न कौन कहां
ते धौं आए ॥ ३ ॥ मनु गयो संग सोचबस लोचन मोचत
बारि कितो समुझाए। तुलसिदास लालसा दरस की सो
दै जेहि आनि देखाए ॥ ४॥३५ ॥

नीके इ० ॥ ३५॥ टि०—विधुवदनी चन्द्रमुखी। सिधाए गये ॥१॥
जुग कमल। जटा से रचि के मुकुट बनाए हैं। मुनिबसन बल्कलादि
मनोज कामदेव ॥ २ ॥ ३ ॥

पुनि न फिरे दोउ बीर बटाऊ। स्यामल गौर सब
सुंदर सपि बारक बहुरि बिलोकिबे काऊ ॥ कर कमल
सर सुभग सरासन कटि मुनि बसन निषंग सुहाए। मु

लंब सब अंग मनोहर धन्य सो जनक जननि जेहि जाए १ ॥ सरद विमल विधु वदन जटा सिर मंजुल अरुन सरोरुह लोचन। तुलसिदास मारग में राजत कोटि मदन मदमोचन ॥ २॥३६ ॥

पुनि इ० मु० ॥ ३६ ॥

राग केदारा। आली काहू सो बूझे न पथिक कहां धौं सधैहैं। कहां ते आए हैं कोहैं कहा नाम स्याम गोरे काज कै कुसल फिरि एहि मग ऐहैं ॥ १ ॥ उठत वयस मसिभोजत सलोने मुठि सोभा दिपवैया विनु वितहि बिकैहैं। हये हेरि हरि लेत लोनी ललना समेत लोयननि लाहू देत जहां जहं जैहैं ॥२॥ राम लषन सिय पथिक को कथा पृथुल प्रेम विधको कहति सुमुपि सबै हैं। तुलसी तिन्ह सरिस ओउ भूरि भाग जीउ सुनि के सुचित तेहि समै समै हैं ॥३॥३७ ॥

आली इ० मु० ॥१॥ उठत वैस चढ़ती अवस्था, मसिभोजत रेखदान ॥ २ ॥ पृथुल विस्तृत, तेहि समै समै हैं वनवास के समै की क्या में समाहिंगे ॥ ३ ॥ ३७ ॥

बहुत दिन बीते सुधि कछु न लही। गए जे पथिक गोरे सांवरे सलोने सखि संग नारि सुकुमारि रही ॥ १ ॥ जानि पहिचानि बिनु आपु ते आपनेहु ते प्रानहु ते प्यारे प्रियतम उपही। सुधा के सनेहहू के सार से संवारे बिधि जैसे भावते हैं भांति जात न कही ॥ २ ॥ बहुरि विलोकिबे कबहुं कहत तन पुलक नयन जलधार बही। तुलसी प्रभु सुमिरि बानजुवती सिथिल बिनु प्रदाम पगी प्रेम सही ॥ ३॥३८ ॥

बहुत इ० सु० ॥ १ ॥ बिना जान पहिचान के उपही कहँ पठे
हैं पर अपने शरीर ते औ पुत्रादिहु ते औ मान हुं ते प्रियतम
हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ ३८ ॥

राग गौरी । आली री पथिक जे एहि मग परौं सिधाए।
ते तो राम लषन अवध ते आए ॥ १ ॥ संग सिय सब अंग
सहज सुहाए । रति काम रिपुपति कोटिक लजाए ॥ २ ।
राजा दसरथ रानी कोसिला जाए । कैकेई कुचालि करि
कानन पठाए ॥ ३ ॥ वचन कुभामिनि के भूपहि क्यौं भाए।
हाय हाय राय बाम विधि भरमाए ॥ ४ ॥ कुलगुरु सचिव
काहु न समुझाए । कांचमनि लै अमोल मानिक गंवाए
॥ ५ ॥ भाग सगलोगनि के देषन जिन पाए। तुलसी
सहित जिन्ह गुनगन गाए ॥ ६॥३९ ॥

आली इ० । इहां कांच मणि सत्य है ॥ ६ ॥ ३९ ॥

सषि जब ते सीतासमेत देषे दोउ भाई । तब ते परै न
कल काहु न सुहाई १ नष सिष नीकै नीकै निरषि निकाई।
तनसुधि गई मन अनत न जाई ॥ २ ॥ हेरनि बिहसनि
हिये लिये हैं चुराई । पावन प्रेमबिबस भई हौं पराई ॥३॥
कैसे पितु मातु प्रिय परिजन भाई । जीवत जीव के जीवन
बनहि पठाई ॥ ४ ॥ समउ सुचित करि हित अधिकाई।
प्रीति गामबधुन्ह की तुलसीहूं गाई ॥ ५॥४० ॥

सखी इ० । सभी सुचित करि हित अधिकाई । अधिक हित ते सो
सभै सुंदर चित्त में करि के ग्रामवधुन की प्रीति तुलसिउ ने
गाई ॥ ५ ॥ ४० ॥

राग केदारा । जब ते सिधाए एहि मारग लषन राम
जानकीसहित तब ते न सुधि लही है । अवध गए हौं

फिरि कैधौं चढ़े विंध्य गिरि कैधौं कहूं रहे सो कछु न काहु कही है ॥१॥ एक कहैं चित्रकूट निकट नदी के तीर परन-कुटीर करि वसे बात सही है। सुनियत भरत मनाइबे को आवत हैं छोड़गी पै सोइ जो विधाता चित चही है ॥ २ ॥ सत्यसंध धरमधुरीन रघुनाथ जू को आपनी निबाहिबे नृप की निरबही है। इसचारि बरष विहार बन पदचार करिबे पुनीत सैल सर सरि मही है ॥ ३ ॥ मुनि सुर सुजन समाज के सुधारि काज बिगरि बिगरि जहां जहां जाकी रही है। पुर पांउ धारिहैं उधारिहैं तुलसीहू से जन जिन्ह जानि कै गरीबी गाठे गही है ॥ ४॥४१ ॥

जयते ई० मु० ॥ १ ॥२॥ महाराज की तो निबाहि गई है पर श्री-रघुनाथ जू को आपनी निबाहिबे को है, सर तलाव, सरि नदी ॥३।४।४१

राग सारंग। ए उपही कोउ कुंअर अहेरी। स्याम गौर धनु बान तून धर चित्रकूट अब आइ रहेरी ॥ १ ॥ इन्हहि बहुत आदरत महामुनि समाचार मेरे नाइ कहेरी। बनिता बंधु समेत बसत बन पितुहित कठिन कलेस सहेरी ॥ २ ॥ बचन परसपर कहति किरातिनि पुलक गात जल नयन बहेरी। तुलसी प्रभुहि बिलोकति एकटक लोचन जनु बिनु पलक लहेरी ॥ ३॥४२ ॥

ए उपही ई०। महामुनि अत्रि बाल्मीक आदि।३।४२। टि. उपही परदेशी।

चित्रकूट अति बिचित्र सुंदर बन महि पबित्र पावनपय सरित सकल मल निकंदिनी। सानुज जहं बसत राम लोक लोचनाभिराम बाम अंग बामा वर बिस्ववंदिनी ॥ १ ॥ रिषि-वर तहं छंद बास गावत कल कोकिलहास कीर्तन उनमाय

काय क्रोध कांदिनी । वर विधान करत गान वारत धन मान
मान झरना झरत झिंग झिंग झिंग जल तरंगिनी ॥ १ ॥
वर विहारु चरन चारु पांडर चंपक चनार कारनहार बा
पार-पुर पुरंदिनी । जो वन नवढारत ढार दुस्त मत्त स
मराल मंजु मंजु गुंजत हैं चलि चलिंगिनी ॥ २ ॥ चितव
मुनिगन चकोर बैठे निज ठौर ठौर अक्षय अकलंक स
चंद चंदिनी । उदित सदा वन अकास मुदित वदत तुलसि
दास जय जय रघुनंदन जय जनकनंदिनी ॥ ३॥४३ ॥

कलंक रहित चंद श्रीरघुनाथ हैं औ चंदनी श्री जानकी हैं
औ इहां आकाश वन है ॥३॥ ४३ ॥

फटिकसिला मृदु बिसाल संकुल सुरतरु तमाल लवि
लताजाल हरति छवि बितान की । मंदाकिनि तटनि तीर
मंजुल मृग विहंग भीर धीर मुनिगिरा गंभीर सामगान
की ॥ १ ॥ मधुकर पिक बरहि मुपर सुंदर गिरि निरझ
झर जलकन घन छांह छन प्रभा भान की । सब रितु
रितुपति प्रभाउ संतत बहै विविध वाउ जनु बिधा
वाटिका नृप पंचवान की ॥ २ ॥ बिरचित तहं परनसा
अतिविचित्र लषनलाल निवसत जहं नित कृपाल रा
जानकी । निज कर राजीवनयन पल्लव दल रचित सय
प्यास परसपर पियूष प्रेम पान की ॥ ३ ॥ सिय अंग लिं
धातुराग सुमननि भूषन विभाग तिलक करनि क्यों कों
कला निधान की । माधुरी विलास हास गावत जस तु
सिदास बसत हृदय मोरी प्रिय परन प्रान की ॥ ४॥४४ ॥

कोमल औ विसाल फटिक सिला है। इहां सीता राम के बैठवे ते सिला कोमल ह्वै गई है। ताते मृदु कहें अवहीं ताईं चिन्ह बना है औ तहां सयन कल्पवृक्ष औ तमाल हैं औ सुंदर तिन्ह वृक्षन पर लतन के समूह हैं ते चंदवा आदि की छवि को हराते हैं। सो सिला मंदाकिनी नामा नदी के तीर में है। तहां सुंदर मृग औ पक्षिन की भीर है औ धीर जो मुनि हैं तिन की गम्भीर बानी सामवेद के गान की है। वा मृग विहंग धीर जो हैं सोई धीर मुनि हैं औ तिन की गिरा जो है सोई गम्भीरता साम गान की है ॥ १ ॥ भ्रमर औ कोइल औ मयूर शब्दायमान हैं औ सुंदर पर्वतन ते झरना झरत हैं सोई जल के बूंद हैं औ वृक्षादि के छांह हैं सो मेघ हैं औ तिन्ह झरनन पर सूर्य की प्रभा जो पड़ै है सो छनप्रभा कहैं बिजुली है। इहां प्रभा शब्द को देहली-दीपक न्याय करि दूनो ओर लगावना औ सब ऋतु में वसंत ऋतु को प्रभाव है ताते निरंतर सीतल मंद सुगंध वायु बहत है मानो महाराज कामदेव के बिहार करने की वाटिका है ॥ २॥३ ॥ धातुराग जो मन-सिला आदि तिन्ह ते श्रीजानकी जी के अंग में लिखे औ फूलनि करि विशेष भाग भूषनन को किए अर्थात् अनेक भूषन बनाए औ कला कारीगरी ताके निधान जो रघुनाथ तिन की तिलक करानि क्यों कहों भाव कहा नहीं जात है ॥ ४ ॥ ४४ ॥

राग केदारा—लोने लाल लषन सलोने राम लोनी सिय चारु चित्रकूटवैठे सुरतरु तर हैं । गोरे सांवरे सरीर पीत नील नीरज से प्रेम रूप सुषमा के मनसिजसर हैं ॥ १ ॥ लोने नष सिष निरुपम निरषिवे जोग वडे उर कंधर विसाल भुज वर हैं। लोने लोने लोचन जटनि के मुकुट लोने लोने बदननि जीते कोटि सुधाकर हैं ॥ २ ॥ लोने लोने धनुष विसिष कर कमलनि लोने मुनिपट कटि लोने सरधर हैं। प्रिया प्रिय बंधु को देषावत बिटप बेलि मंजु कुंज सिलातल दल फूल फर हैं ॥ ३ ॥ रिपिन्ह के आश्रम सराहैं मृगनाम

कहैं लागी मधु सरित झरत निरझर हैं। नाचत बाही नीके गावत मधुप पिक बोलत बिहंग नभ जल थलचर हैं ॥ ४ ॥ प्रभुहिं विलोकि मुनिगन पुलकै कहत भूरिभाग भए सब नीच नारि नर हैं। तुलसी सो सुख लाहु लूटत किरात कोल जाको सिसिकत सुर विधि हरिहर हैं ॥५॥४५॥

मेघ औ रूप औ सुखमा के शरीर जे गोरे सांवरे ते कामदेव के तड़ाग के पीत नील कमल सम हैं ॥ १ ॥ कंधर कांधा सुधाकर चंद्रमा ॥ २ ॥ विशिष कहैं बाण, सरधर कहैं तरकस पहिले तुक में तीनों मूर्त्ति को वरनन किए फिर दोऊ भाइन के अब केवल रघुनाथ को मिया बंधु को देखाउब लिखत हैं। ३ ॥ ऋषिन के आश्रमन को बखानत हैं औ मृगन के नाम कहत हैं अर्थात् यह सांवर है यह चीतर है औ इहां मधु लगी है यह नदी है ए झरना झरि रहे हैं अच्छी भांति ते मोर नाचत हैं भ्रमर गान करत है कोइल और नभचर जलचर थलचर विहंग बोलत हैं अस श्रीरघुनाथ मिया औ अनुज सन कहत हैं ॥ ४ ॥ सिसिकत कहैं ललचत ॥ ५ ॥ ४५ ॥

राग सारंग। आइ रहे जब ते दोउ भाई। तब ते चित्रकूट कानन छवि दिन दिन अधिक अधिक अधिकाई ॥१॥ सीतारमन चपन पद अंकित अवनि सोहावनि वरनि न जाई। मंदाकिनि मज्जत अवलोकत विविध पाप त्रयताप नसाई ॥२ उकठेउ हरित भये जल थल रुख नित नूतन राजीव सोहाई। फूलत फलत पल्लवत मधुइत विटप बेलि अभिमत सुखदाई ॥ ३ ॥ सरित सरनि सरसीरुह संकुल सदन संवारि रमा जनु छाई। कूजत विहंग मंजु गुंजत अलि जात पथिक जनु लेत बोलाई ॥४॥ विविध समीर नीर झर झरननि जहं तहं रहे रिपि कुटी बनाई। सीतल सुभग सिलनि परतापस करत

जोग जप तप मनु लाई ॥५॥ भए सब साधु किरात किरातिनि रामदरस मिटि गई कलुषाई । पग नृग मुदित एक संग बिहरत सहज बिषम बड बैर बिहाई ॥ ६ ॥ काम केलि बाटिका बिबुध बन लघु उपमा कबि कहत लजाई । सकल भुवन सोभा सकेलि मानो राम बिपिनि बिधि आनि बसाई ॥ ७ ॥ बन मिसु मुनितिय मुनिबालक बरनत रघुबर बिमल बडाई । पुलकि सिथिल तनु सजल बिलोचन प्रमुदित मन जीवनफल पाई ॥ ८ ॥ क्यों कहौं चित्रकूट गिरि संपति महिमा मोद मनोहरताई । तुलसी जहं बसि लषन राम सिय आनंद अवधि अवध बिसराई ॥ ९॥४६ ॥

त्रिविध पाप कायिक वाचिक मानसिक त्रयताप दैहिक दैविक भौतिक नसात हैं । महाभारते वनपर्वणि । ततोगिरिवरश्रेष्ठं चित्रकूटं विशांपते । मंदाकिनीं समासाद्य सर्वपापमनाशिनीम् ॥ तत्राभिषेकं कुर्वाणः पितृदेवार्चने रतः । अश्वमेधमवाप्नोति गतिश्च परमां व्रजेत्" ॥२॥ जल थल रुह, जल के वृक्ष थल के वृक्ष, राजीव कमल अभिमत सुखदाई वांछित सुख देनिहारे भाव कल्पवृक्ष समान ॥ ३ ॥ नदिन औ तलावन में सघन कमल हैं मानो कमल नहीं हैं घर बनाइ के लक्ष्मी छाई हैं । पक्षी बोलत हैं भंवर गुंजार करत हैं सो बोलत गुंजार नहीं करत हैं मानो चले जात पथिक को बोलाय लेत हैं ॥४॥५॥ कलुषाई मलीनता ॥ ६ ॥ काम की बिहार बाटिका औ बिबुध बन नंदन चैत्ररथादि ए सब हैं ताते उपमा कहत में कवि लजात हैं । बनमिसु बन के बरनन के ब्यान से ॥ ८ ॥ ९ ॥ ४६ ॥

राग गौरी । देखत चित्रकूट बन मन अति होत हुलास । सीताराम लषन प्रियतापस बृंद निवास ॥१॥ सरित सुहावनि पावनि पाप हरनि पय नाम । सिद्ध साधु सुरनेवित देति सकल मन काम ॥ २ ॥ बिटप बेलि नव किसलय कुसुमित

सघन सुजाति। कंद मूल जल थल रुह अगनित बन बन भांति ॥ ३ ॥ इंगुद अंजु बकुल कुल सुरतरु ताल तमाल। कदलिकदंब सुचंपक पाटल पनस रसाल ॥ ४ ॥ भूरुह भूरि भरे जनु छवि अनुराग सुभाग। बन बिलोकि लघु लागहिं बिपुल बिबुध बन बाग ॥ ५ ॥ जाइ न बरनि राम बन चितवत चित हरि लेत। लखित लता द्रुम संकुल मनहुं मनोज निकेत ॥६॥ सरित सरनि सरसीरुह फूले नाना रंग। गुंजत मंजु मधुप गन कूजत बिबिध बिहंग ॥ ७ ॥ लषन कहेउ रघुनंदन देखिय बिपिन समाज। मानहुं चयन मयन-पुर आयउ प्रिय रितुराज ॥ ८ ॥ चित्रकूट पर राउर जानि अधिक अनुरागु। सपासहित जनु रतिपति आयेउ खेलन फागु ॥ ९ ॥ झिल्लि झांझ झरना डफ पनव मृदंग निसान। भेरि उपंग भृंग रव ताल कीर कल गान ॥१०॥ हंस कपोत कबूतर बोलत चक्र चकोर। गावत मनहुं नारि नर मुदित नगर चहुं ओर ॥ ११ ॥ चित्र बिचित्र बिबिधि मृग डोलत डोगर डांग। जनु पुर बीथिन्ह बिहरत छैल संवारे स्वांग ॥ १२ ॥ नटहि मोर पिक गावहिं सुखर राग बंधान। त्रिबिध तरुन तरुनी जनु खेलहिं समय समान ॥ १३ ॥ भरि करनि कहुं जहं तहं डारहिं वारि। भरत परस-कनि मनहुं मुदित नर नारि ॥ १४ ॥ पीठ चढाइ कपि कूदत डारहिं डार। जनु सुभ लाइ गेरु मसि परनि असवार ॥ १५ ॥ लिए पराग सुमन रस डोलत समीर। मनहुं अरगजा छिरकत भरत गुलाल अबीर ॥ १६ ॥ काम कौतुकी एहि बिधि प्रभुहित कौतुक कीन्ह।

भि राम रतिनाथ हि जगविजई बरु दीन्ह ॥ १७ ॥ दुष
दाम मोर सुनि मानेहु मोरि रजाइ । भलेहि नाथ माथेहि
रि चायमु चलिउ बजाइ ॥ १८ ॥ मुदित किरात किरा-
तनि रघुवरूप निहारि । प्रभुगुन गावत नाचत चले
हारि जोहारि ॥ १८ ॥ देहिं असीस प्रसंसहि मुनि सुर
रषहिं फूल । गवने भवन रापि उर मूरति मंगलमूल॥२०॥
चित्रकूट कानन छवि को कवि बरनै पार । जहं सिय लषन
सहित नित रघुवर करहिं विहार ॥ २१ ॥ तुलसिदास
वांचरि मिसि कहि रामगुनग्राम । गावहिं सुनहिं नारि
र पावहिं सब अभिराम ॥ २२॥४७ ॥

पय कहैं पयस्विनी ॥ २ ॥ नव किसलै नवीन पल्लव, अन वन
नांनि अनेक भांनि ॥ ३ ॥ बंजुल बेंत, बकुलकुल मौलसरिन के
समूह, पाटल कहैं पांडर, पनस कटहर, रसाल आम ॥ ४ ॥ भूरुह वृक्ष
। ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ लषन कहत भए कि रघुनंदन विपिन को समाज
देखिए मानो आनन्दयुक्त कामदेव के पुर में प्रिय ऋतुराज आयो।
अब दूसर उत्प्रेक्षा कहत हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥ झिल्ली झींगुर, पनव ढोल, भेरी
नगारा उपंग मुरचंग ॥ १० ॥ कपोत यद्यपि कबूतर का नाम है पर
इहां कुमरी जानना काहे ते कि कबूतर पृथक लिखा है चक्र चकवा ॥११
डोंगर डांग पर्वत के राह ॥ १२ ॥ नटहिं नाचहिं समै समान फागुन
मास के अनुकूल ॥१३॥ करिनिकर हंथिनी हाथी, वारि जल ॥ १४ ॥
इहां खर के स्थान में बांदर हैं औ बच्चा जो पीठ पर चढे हैं सो सवार
के स्थान, में हैं लाल मुंह वाले बच्चा मानो गेरू लगाए हैं काले
मुख वाले बच्चा मानो मसी लगाए हैं ॥ १५ ॥ मलयाचल को जो
दक्षिण वायु है सो फूलन को पराग औ रस लिए डोलत है मानो रस
नहीं है घोरा भया अरगजा है ताको छिरकत है औ पराग नहीं है
गुलाल अबीर है तामें भरत है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

सघन सुजाति । कंद मूल जल थल रुह अगनित अन बन भांति ॥ ३ ॥ कंजुल मंजु बकुल कुल सुरतरु ताल तमाल । कदलिकदंब सुचंपक पाटल पनस रसाल ॥ ४ ॥ भूरुह भूरि भरे जनु छवि अनुराग सुभाग । बन बिलोकि लघु लागहिं बिपुल बिबुध बन बाग ॥ ५ ॥ जाइ न बरनि राम बन चितवत चित हरि लेत । लखित लता द्रुम संकुल मनहुं मनोज निकेत ॥ ६ ॥ सरित सरनि सरसीरुह फूले नाना रंग । गुंजत मंजु मधुप गन कूजत बिबिध बिहंग ॥ ७ ॥ लपन कहेउ रघुनंदन देखिय बिपिन समाज । मानहुं चयन मयन-पुर आयउ प्रिय रितुराज ॥ ८ ॥ चित्रकूट पर राउर जानि अधिक अनुराग । सपासहित जनु रतिपति आयेउ खेलन फाग ॥ ९ ॥ झिल्लि झांझ झरना डफ पनव मृदंग निसान । भेरि उपंग भृंग रव ताल कीर कल गान ॥ १० ॥ हंस कपोत कबूतर बोलत चक्क चकोर । गावत मनहुं नारि नर मुदित नगर चहुं ओर ॥ ११ ॥ चित्र बिचित्र बिबिधि मृग डोलत डोगर डांग । जनु पुर बीथिन्ह बिहरत छैल संवारे स्वांग ॥ १२ ॥ नटहि मोर पिक गावहिं सुखर राग बंधान । निलज तरुन तरुनी जनु खेलहिं समय समान ॥ १३ ॥ भरि भरि सूंड करनि कहं जहं तहं डारहिं बारि । भरत परस-पर पिचकनि मनहुं मुदित नर नारि ॥ १४ ॥ पीठ चढाइ सिसुन्ह कपि कूदत डारहिं डार । जनु सुख लाइ गेरु मसि भए परनि असवार ॥ १५ ॥ लिए पराग सुमन रस डोलत मलय समीर । मनहुं अरगजा छिरकत भरत गुलाल अबीर ॥ १६ ॥ काम कौतुकी एहि बिधि प्रमुदित कौतुक कीन्ह ।

मानो मधु माधव दोउ अनिप धीर। बर बिपुल बिटप बानैत बीर ॥ मधुकर मुख कोकिल बंदि बृंद । बरनहिं बिसुद्ध जस बिबिधि छंद ॥ ४ ॥ महि परत सुमन रस फल पराग । जनु देत इतर नृप कर बिभाग ॥ कलि सचिव सहित नय-निपुन मारि । कियो बिस्व बिवस चारिहूं प्रकार ॥ ५ ॥ बिरहिन पर नित नइ परइ मारि । डांटिअहि सिद्धि साधक प्रचारि ॥ तिन्ह को न काम सकै चापि छांह । तुलसी जे बसहिं रघुबीर बांह ॥ ६॥४९ ॥

बसंत ऋतु के आए से बनसमाज भलो बन्यो मानो कामदेव महाराज आन भए हैं मानो फाग के बहाना ते प्रथम अनीत करि के होरी के बहाने शत्रुपुर को जारि करि जीति करि वायु के बहाने पत्र रूपी प्रजा को उजारिके फिरि सकल बन में नया नगर बसाए॥१॥२। सुंदर रंगवाली पर्वत की शिला सिंहासन है औ कानन की जो छवि सो काम की पत्नी रति है औ कुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत सुमन श्वेत छत्र है, लता मंडप हैं, चमर वायु है, झरना नगारा है ॥३॥ मानो चैत औ बैसाख दोऊ धीर सेनापति हैं श्रेष्ठ जे अनेक बिटपै ते तेहि सेना बानेबंद धीर हैं। भ्रमर सुआ कोइल ए भाट गन हैं। अनेक छन्द में बिशुद्ध यस को बरनत हैं ॥ ४ ॥ महि में फूल रस फल धूरि परत हैं सो मानो आन राजा बिभाग पूर्वक कर देत हैं। कलिकाल रूप सचिवसहित नीत में निपुन जो काम है सो बिश्व को चारिउ प्रकार ते अर्थात् साम दाम भेद दंड करि बिशेष बश किए ॥ ५ ॥ बिरहिन के ऊपर नीति नई मारि परति है औ सिद्ध औ साधक प्रचारि करि बिशेष डांटे जात हैं। काम तिन्ह की छांह को नहीं दबाय सकत है जे रघुबीर के बांह ते बसत हैं ॥ ६ ॥ ४९ ॥

राग मलार। सब दिन चित्रकूट नीको लागत। बरषा रितु प्रबेस बिशेष गिरि देखत मन अनुरागत ॥१॥ चहु दिसि बन संपन्न बिहंग मृग बोलत सोभा पावत। जनु मुनरेस देस

॥ २१ ॥ चांचरि मिसु कहे होरी में चार गायो जात है तेहि के बहाना से ॥ २२ ॥ ४७ ॥

राग बसंत । आजु बन्यो है विपिनि देषो राम धीर। मानो षेलत फाग मुद मदन बीर ॥१॥ बट बकुल कदंब पनस रसाल । कुसुमित तरुनिकर कुरबक तमाल ॥ मनो विविध बेष धरे छैल जूथ । बिच बीच लता ललना बरूथ ॥ २ ॥ पनवानक निरझर अलि उपंग । बोलत पारावत मानो डफ मृदंग ॥ गायक सुक कोकिल झिल्लि ताल । नाचत बहु भांति बरहि मराल ॥ ३ ॥ मलयानिल सीतल सुरभि मंद। बह सहित सुमन रस रेनु बृंद ॥ मानो छिरकत फिरत सबनि सुरंग । भ्राजत उदार लीला अनंग ॥ ४ ॥ क्रीडत जीते सुर नर असुर नाग । हठि सिद्ध मुनिन्ह के ग्रंथ लाग। कह तुलसिदास तेहि छाडु मैन । जेहि राष राम राजीव नैन ॥ ५॥४८ ॥

निकर समूह, कुरबक कोरैया ॥२॥ आनक कहैं नगारा। "आनक: पटहोभेर्यां मृदंगे ध्वनदम्बुदे" इत्यभिधानात्। ढोल झरना ढोल औ नगारा है भ्रमर उपंग है ॥ ३ ॥ रेनु पराग ॥ ४ ॥ क्रीड़त जिते खेलवाड़ में जीत लिए ॥ ५ ॥ ४८ ॥

रितुपतिआयो भलोवन्यो बनसमाजु । मानो भए हैं मदन महाराज आजु ॥ १ ॥ मानो प्रथम फाग मिस करि अनीति। होरी मिस अरिपुर जारि जीति ॥ मारुत मिस यत्र तत्र उजारि । नए नगर बसाए विपिनि झारि ॥ २ ॥ सैलसिखा सुरंग । कानन छवि रति परिजन कुरंग ॥ छत्र सुमन मयी बितान। चामर समीर निरझर निसान॥३

मानो मधु माधव दोउ अनिप धीर। बर बिपुल बिटप बानैत बीर ॥ मधुकर मुख कोकिल बंदि बृंद । बरनहिं बिसुद्ध जस बिबिधि छंद ॥ ४ ॥ महि परत सुमन रस फल पराग । जनु देत इतर नृप कर बिभाग ॥ कलि सचिव सहित नय-निपुन मारि । कियो बिस्व बिवस चारिहूं प्रकार ॥ ५ ॥ बिरहिन पर नित नइ परद्रु मारि । डांटियहि सिद्धि साधक प्रचारि ॥ तिन्ह को न काम सकै चापि छांह । तुलसी जे बसहिं रघुबीर बांह ॥ ६॥४९ ॥

बसंत ऋतु के आए से बनसमाज भलो बन्यो मानो कामदेव महाराज आज भए हैं मानो फाग के बहाना ते प्रथम अनीत करि के होरी के बहाने शत्रुपुर को जारि करि जीति करि वायु के बहाने पत्र रूपी प्रजा को उजारिके फिरि सकल बन में नया नगर बसाए॥१॥२। सुंदर रंगवाली पर्वत की शिला सिंहासन है औ कानन की जो छवि सो काम की पत्नी रति है औ कुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत सुमन श्वेत छत्र है, लता मंडप हैं, चमर वायु है, झरना नगारा है ॥३॥ मानो चैत औ बैसाख दोऊ धीर सेनापति हैं श्रेष्ठ जे अनेक बिटपैं ते तेहि सेना बानेबंद धीर हैं। भ्रमर सुआ कोइल ए भाट गन हैं। अनेक छन्द में विशुद्ध यस को बरनत हैं ॥ ४ ॥ महि में फूल रस फल धूरि परत हैं सो मानो आन राजा विभाग पूर्वक कर देत हैं। कालिकाल रूप सचिवसहित नीत में निपुन जो काम है सो विश्व को चारिउ प्रकार ते अर्थात् साम दाम भेद दंड करि विशेष वश किए ॥ ५ ॥ बिरहिन के ऊपर नीति नई मारि परति है औ सिद्ध औ साधक प्रचारि करि विशेष डांटे जात हैं। काम तिन्ह की छांह को नहीं दबाय सकत है जे रघुबीर के बांह ते बसत हैं ॥ ६ ॥ ४९ ॥

राग मलार। सब दिन चित्रकूट नीको लागत। बरषा-रितु प्रबेस बिशेष गिरि देखत मन अनुरागत ॥१॥ चहु दिसि बन संपन्न बिहंग मृग बोलत सोभा पावत। जनु सुनरेस देस

॥ २१ ॥ चांचरि मिसु कहे होरी में चार गायो जात है तेहि के बखान से ॥ २२ ॥ ४७ ॥

राग वसंत । आजु बन्यो है विपिनि देखो राम धीर। मानो खेलत फाग मुद मदन बीर ॥१॥ बट बकुल कदंब पनस रसाल । कुसुमित तरुनिकर कुरवक तमाल ॥ मनो विविध वेष धरे खेल जूथ । बिच बीच लता ललना बरूथ ॥ २ । पनवानक निरझर अलि उपंग । बोलत पारावत मानो डफ मृदंग ॥ गायक सुक कोकिल झिल्लि तांल । नाचत बहु भांति बरहि मराल ॥३॥ मलयानिल सीतल सुरभि मंद यह सहित सुमन रस रेनु वृंद ॥ मानो छिरकत छिरा सबनि सुरंग । भ्राजत उदार लीला अनंग ॥४॥ क्रीडत जीते सुर नर असुर नाग । हठि सिद्ध मुनिन्ह के मंथ लाग। कह तुलसिदास तेहि छाडु मैन । जेहि राय राम राजीव नैन ॥ ५॥४८ ॥

निकर समूह, कुरबक कोरैया ॥२॥ आनक कहैं नगारा। "आनक पटहेभेर्यौ मृदंगे ध्वनदम्बुदे" इत्यभिधानात्। ढोल झरना ढोल औ नगारा है भ्रमर उपंग है ॥ ३ ॥ रेनु पराग ॥ ४ ॥ क्रीड़त जिते खेलवाड़ जीत लिए ॥ ५ ॥ ४८ ॥

रितुपतिआयो भलोवन्यो वनसमाजु । मानो भए हैं मदन महाराज आजु ॥ १ ॥ मानो प्रथम फाग मिस करि अनीति। होरी मिस पुरिपुर जारि जीति ॥ मारुत मिस पत्र झरु उजारि। नए नगर बसाए विपिनि झारि ॥ २ ॥ सिंहासन केसरसिला सुरंग । कानन कवि रति परिजन कुरंग ॥ सित छत्र सुमन मधु वितान। चामर समीर निरझर निसान ॥

[illegible] बिटप बानैत बने। बर बिपुल बिटप बानैत बने। लवनिहि बिमुख लख दिनहिं दंड। ३। महि परत सुमन रस फल पराग। जनु देत सकल नृप कर बिभाग॥ कलि मलिन सहित नय-निपुन सोइ। बिधो बिस्व बिजय चारिहूं प्रकार॥ ५॥ बिरहिन पर नित नई मारि। डांटिपटि सिद्ध साधक प्रचारि॥ तिन्ह को न काम सकै चापि छांह। तुलसी जे बसहिं रघुबीर बांह॥ ६।४९॥

बसंत ऋतु के आए से बनसमान भरो बन्यो मानो कामदेव महाराज आन भए हैं मानो फाग के बहाना से सबय अनीत करि के रोगों के बहाने शत्रुपुर को जारि करि नीति करि बायु के बहाने पत्र मनो को पठाय के फिरि सकल बन में नया नगर बसाए॥१॥२। सुंदर रंगवाली पर्वत की शिला सिंहासन है औ कानन की जो छवि सो काम की पत्नी रति है औ कुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत सुमन श्वेत छत्र है, लता मंडप है, मलय बायु है, झरना नगारा है॥३॥ मानो मंत्र औ गंधाम्ब दोऊ धीर सेनापति हैं श्रेष्ठ जे अनेक बिरुद तें तेहि सेना बानैत बीर हैं। भ्रमर शुभा कोइल ए भाट बन हैं। अनेक छन्द में बिशुद्ध यश को बरनत हैं॥ ४॥ महि में फूल रस फल धूरि परत हैं सो मानो आन राजा बिभाग पूर्वक कर देत हैं। कलिकाल रूप सचिवसहित नीत में निपुन जो काम है सो बिश्व को चारिउ प्रकार से अर्थात् साम दाम भेद दंड करि बिशेष बश किए॥ ५॥ बिरहीन के ऊपर नीति नई मारि परति है औ सिद्ध औ साधक प्रचारि करि बिशेष डांटे जात हैं। काम निन्ह की छांह को नहीं दबाय सकत है जे रघुबीर के बांह ते बसत हैं॥ ६॥ ४९॥

राग मलार। सब दिन चित्रकूट नीको लागत। बरषा-रितु प्रबेस बिशेष गिरि देखत मन अनुरागत॥१॥ चहु दिसि बन संपन्न बिहंग मृग बोलत सोभा पावत। जनु सुनरेस देस

पुर प्रमुदित प्रजा सकल सुख छावत ॥२॥ सोहत स्याम जलद मृदु घोरत धातु रँगमगे सृंगनि । मनहुं आदि अंभोज विराजत सेवित सुर मुनि भृंगनि ॥ ३ ॥ सिखर परसि घन घटहिं मिलत बगपांति सो छवि कवि बरनी । आदिवराह विहरि बारिधि मानो उठ्यो है दसनि धरि धरनी ॥ ४ ॥ जलजुत विमल सिलनि झलकत नभ बन प्रतिबिंब तरंग। मानहुं जगरचना विचित्र विलसति विराट अंग अंग ॥ ५ ॥ मंदाकिनिहि मिलत झरना झरि झरि भरि भरि जल आछे। तुलसी सकल सुकृत सुख लागे मानो राम भगति के माछे ॥ ६॥५० ॥

चहुं ओर वन पुष्पफलादि करि सम्पन्न है औ पक्षी मृग बोलन में सोभा पावत हैं, मानो सुंदर नरेश ते देश औ पुर के प्रजा प्रमुदित है सकल सुख छावत हैं ॥ २ ॥ पर्वत के ऊपर श्याम मेघ शोभत हैं औ मृदु घोरत कहैं मधुर धुनि ते गरजत हैं औ सिखरानि से धातु गेरू मनसिलादि रँगमगे कहैं धाहि चले हैं, मानो परवत नहीं है आदि कमल है अर्थात् जाते ब्रह्मा उत्पन्न भए। इहां अत्यंत दीर्घ करि आदि कमल की उपमा दिए सो सुर मुनि रूप भृंगनि करि सेवित हैं। इहां भृंग ही श्याम जलद जानना ॥ ३ ॥ शृंगनि को छुइ के बकुलनि की पांति सयन जो घटा तिन को मिलत है। सो छवि कवि बरनी है, मानो आदि वराह समुद्र में विहार करि के दांत पर धरनी धरि के उठ्यो है। इहां आदिवराह पर्वत है वर्षा को जल को नीचे लगा है सो समुद्र है, बग पांति दसन है, घटा धरनी है वा जो मेघ पर्वत ते मिले रह्यो है सो आदिवाराह है ताके ऊपर से बगपांति जो ऊपर निकली है सो दसन है। दूसरी घटा जो ऊपर है सो भूमि है ॥ ४ ॥ निर्मल सिलानि में जलयुक्त आकाश बन औ तरंग को प्रतिबिंब झलकत है मानो विराट के अंग अंगानि में जग की रचना विचित्र विशेष लसति है ॥ ५ ॥ ६ ॥ ५० ॥

राग सोरठ। आजु को भोर और सो माई। सुन्यो न द्वार वेद घंटी धुनि गुनिगन गिरा सोहाई ॥१॥ निज निज पति मंदिर सदननि ते रूप सील छवि छाई। लेन असीस सीय आगे करि सो पैं सुतबधू न आई ॥ २ ॥ बूझी हौं न विहंसि मेरे रघुवर कहा सुमित्रा माता। तुलसी मनहुं महासुप मेरे देखि न सक्यो विधाता ॥ ३॥५१ ॥

अवध में श्री कौशल्या जी की उक्ति कहत हैं। निज निज पति अपने अपने पति के मंदिर सदनि ते रूप शील छवि ते छाई जे सुतबधू हैं ते सीता के आगे करि असीस लेइवे हेतु हमारे पास न आई ॥ ३ ॥ ५१ ॥

जननी निरपति बाल धनुहिंया। बार बार उर नयननि लावति प्रभु जु कि लखित पनहिंया ॥१॥ कबहुं प्रथम ज्यों जाइ जगावति कहि प्रिय वचन सकारे। उठहु तात बलि मातु बदन पर अनुज सखा सब द्वारे ॥ २ ॥ कबहुं कहति बड बार भई ज्यों जानहु भूप पैं भैया। बंधु बोलि जेंइयै जो भावै गई निछावरि मैया ॥ ३ ॥ कबहुं समुझि बनगमन राम को रहि चकि चित्र लिपी सी। तुलसिदास यह समय कहे ते लागति प्रीति सिपी सी ॥ ४॥५१ ॥

प्रीति सिखी सी कहिबे को यह भाव कि जो स्नेह सत्य हो तो कहत ही में शरीर छूटि जाना ॥ ४ ॥ ५२ ॥

माई री मोहि न कोउ समुझावै। राम गमन सांचो किधौं सपनो मन परतीत न आवै ॥१॥ लगे रहत मेरे नयननि आगे राम लषन अरु सीता। तदपि न मिटत दाह या उर को विधि जो भयो विपरीता ॥ २ ॥ टुप न रहै रघुपतिहिं विलोकत तनु न रहै बिनु देखे। न

प्रान-पयान सुनहु सखि चकृति परी एहि लेखे ॥ ३ ॥ कौसल्या के बिरह बचन सुनि रोइ उठी सब रानी । तुलसिदास रघुबीरबिरह की पीर न जाति बखानी ॥ ४॥५३॥

छ० ॥ ४ ॥ ५३ ॥

जब जब भवन बिलोकति सूनो । तब तब बिकल होति कौसल्या दिन दिन प्रति दुख दूनो ॥१॥ सुमिरत बाल बिनोद राम के सुंदर मुनिमनहारी । होति हृदय अतिसूल सकुचि पदपंकज अजिरबिहारी ॥ २ ॥ को अब प्रात कलेऊ मागत रूठि चलैगो माई । स्याम तामरस नयन अवत जल काहि लिउं उर लाई ॥३॥ जिऔं तौ बिपति सहौं निसिबासर मरौं तौ मन पछितायों । चलत बिपिनि भरि नयन राम को बदन न देपन पायों ॥ ४ ॥ तुलसिदास यह बिरह दसा अति दारुन बिपति घनेरो । दूरि करै को भूरिकृपा बिनु सोकजनित रुज मेरो ॥ ५॥५४ ॥

पदपंकज अजिरबिहारी कहिबे को यह भाव कि चरण कमल सम कोमल हैं औ आंगन से बाहर न निकले सो बन में कैसे निबहि हैं ॥ ५॥५४ ॥ टि० यह शोक से उत्पन्न मेरे रोग को बिना भूरिकृपा (रघुनाथ) के कौन दूर करैगा ?

मेरो यह अभिलाष बिधाता । कब पुरवै सखि सानुकूल ह्वै हरि सेवक सुखदाता ॥१॥ सीतासहित कुसल कोसलपुर आवत हैं सुत दोऊ । अवन सुधासम बचन सखी कब आइ कहैगो कोऊ ॥ २ ॥ सुनि संदेस प्रेमपरिपूरन संभ्रम उठि धावोंगी । बदन बिलोकि रोकि लोचनजल हरषि हिये लावोंगी ॥ ३ ॥ जनकसुता कब सासु कहै मोहि राम

लपन कहैं मैया। बांह जोरि कब अजिर चलैंगे स्याम गौर दोउ भैया ॥ ४ ॥ तुलसिदास एहि भांति मनोरथ करत प्रीति अति बाढी। थकित भई उर आनि रामछवि मनहुं चित्र लिखि काढी ॥ ५॥५५ ॥

सुगम ॥ ५ ॥ ५५ ॥

सुन्यौ जब फिरि सुमंत पुर आयो। कहिहै कहा प्रानपति की गति नृपति विकल उठि धायो॥१॥ पायँ परत मंत्री अति व्याकुल नृप उठाय उर लायो। दसरथ दसा देखि न कह्यो कछु जो संदेस पठायो ॥ २ ॥ बूझि न सकत कुसल प्रीतम को हृदय यहै पछितायौ। साचेहु सुतवियोग सुनिबे कहुं धिग विधि मोहिं जिआयौ ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु जानि निठुर हौं न्याय नाथ बिसरायो। हा रघुपति कहि पर्यौ अवनि जनु जल ते मीन बिलगायो ॥ ४॥५६ ॥

सुगम ।४।५६।

सुएहु न मिटैगो मेरो मानसिक पछिताउ। नारि बस न बिचार कीन्हो काज सोचत राउ॥१॥ तिलक को बोले दियो बन चौगुनो चित चाउ। हृदौ दारिम ज्यों न बिहस्यो समुझि सील सुभाउ ॥२॥ सीय रघुबर लपन बिनु भय भभरि भग्यो न आउ। मोहि बूझि परत न याते कवन कठिन कुघाउ ॥ ३ ॥ सुनि सुमंत को आनि सुंदर सुवन सहित जिआउ। दास तुलसी न तरु मो कहं मरन अमिय पिआउ ॥ ४।५७ ॥

सुएहु इति० सु० ॥१॥ दाडिम अनार ॥२॥ भाग्यो न आउ आदाय न भाग्यो ॥३॥ हे सुमंत सुनो कि सुंदर पुत्र आनि कर तिनसहित जिआउ भाव पुत्र बिना जिआवना अतिसहित है। इहां महाराज अति पीड़ित हैं ताते सुनु के स्थान में सुनि कहे ॥ ४ ॥ ५७ ॥

अवध विलोकिहौं जीवत रामभद्रविहीन। कहा करिहै आइ सानुज भरत धरमधुरीन ॥१॥ राम सोक सनेह संकुल तनु विकल मन लीन। टूटि तारागनन मग ज्यों होत छिन छिन छीन ॥ २ ॥ हृदय समुझि सनेह सादर प्रेम पावन मीन। करी तुलसीदास दसरथ प्रीति परिमिति पीन ॥३॥५७

राम भद्र के विना अवध देखि करि के हम जीवत हैं। अनुज सहित धर्म्मधुरीन जो भरत सो आय करि के कहा करि है। भाव यदपि आए होते तो अस शोक न भोगिवे को परत अर्थात् कैकई को वर देते क्योंकि धर्म्मधुरीन हैं। वा भरत धर्म्मधुरीन हैं यह अन्याय-जनित दुख को न सहि सकिहैं ताते आइके कहा करिहैं अर्थात् जिन आवैं ॥ १ ॥ श्रीराम के शोक से तन विकल है औ सनेह ते पूर्ण हैं ताते मनलीन भयो जात है। तारा टूट के आकाश के मग में जैसे छिन छिन छीन होत जात है तस होत है ॥ २ ॥ नेह सहित आदर सहित मीन के मेम को हृदय में पवित्र समुझि के गोसाईंजी कहत हैं कि दशरथ महाराज प्रीति की मर्यादा को पुष्ट करत भए। भाव जैसे जल विना मछरी शरीर त्यागत तस त्यागे ॥ ३॥५८ ॥

राग गौरी। करत राय मन मो अनुमान ॥१॥ सोक विकल मुप वचन न आवै विछुरे कृपानिधान॥ राज देन कहं बोलि नारिवस मैं जो कह्यो बन जान। आयसु सिर धरि चलि हरषि हिय कानन भवन समान ॥ २ ॥ ऐसे सुत के विरह अवधि लौं जो राखौ यह प्रान। तो मिटि जाइ प्रीति की परिमिति अजस सुनौ निज कान ॥ ३ ॥ राम गए अजहूं हौं जीवत समुझत हौं अकुलान। तुलसिदास तन तजि रघुपति हित कियौ प्रेम परवान ॥ ४॥५९ ॥

करत इति सुगप ॥ ४॥ ५९ ॥

सोरठ। ऐसो तें क्यों कटुवचन कह्योरो। राम जाइ

ानन कठोर तेरो कैसे धौं हृदउ रह्योरी ॥१॥ दिनकर वंस पिता दसरथ सो राम लषन से भाई। जननी तू जननी तो कहा कहौं विधि केहि पोरि न लाई ॥ २ ॥ हौं लहिहौं नृप राजमातु है सुत सिर छत्र धरैगो। कुल कलंक मल-मूल मनोरथ तो बिनु कौन करैगो ॥ ३ ॥ ऐहैं राम सुषी सब ह्वैहैं इम अजस तेरो हरिहैं। तुलसीदास मोको बडो सोच तू जनम कवन विधि भरिहैं ॥ ४॥६० ॥

वशिष्ट जू को काश्मीर दूत भेजव औ भरत जू को आउव आदि क्या छोड़ दिए अब भरतजी की उक्ति कैकेई प्रति लिखत हैं ॥ १ ॥ दिनकर ऐसो वंश भयो औ दसरथ महाराज सम पिता औ श्रीराम लषन से भाई भए तहां हे जननी तू जननी भई तो कहा कहौं विधाता ने कोहि को खोटाई नहीं लगाई है। वा हे जननी तूं अपने जननी सम भई यह कथा वाल्मीकी रामायण में स्पष्ट है ॥ २ ॥ कुल को कलंक मल को मूल अस मनोरथ तो विना कौन करैगो कि पुत्र सिर पर छत्र धारण करैगो, हम राजा की माता है कै सुख पावेंगी ॥ ३ ॥ भरिहै बितइहै ॥ ४॥६० ॥

ताते हौं देत न दूषन तोहू। रामविरोधी उर कठोर ते प्रगट कियौ विधि मोहू ॥ १ ॥ सुंदरसुपद सुसील सुधानिधि जरनि जाय जेहि जोए। विष वारुनी बंधु कहितय बिधु नातो मिटत न धोए ॥ २ ॥ होते जौ न सुजानसिरोमनि राम सब के मन माहीं। तौ तेरो करतूति मातु सुनि प्रीति प्रतीति कहाहीं ॥ ३ ॥ मृदु मंजुल सांचो सनेह सुचि सुनत भरत बरबानी। तुलसी साधुसाधु सुर नर मुनि कहत प्रेम पहिचानी ॥ ४॥६१ ॥

राम विरोधी जे कठोर उर तातें विधाता ने हमहूं को प्रगट कियो भाव तब दोषी हमहूं ठहरे ताते तोहू को दोष नहीं देत हौं ॥ १ ॥ सुंदर

सुखदाता सुशील अमृत की राह जोहि की देखिवे ते तपनि जात है ऐसे विधु को भी विष और वारुणी को भी बंधु कहियत है, तो निश्चै भयो कि नाता धोयवे तें नहीं मिटत है ॥ २ ॥ सुजाननि में शिरोमणि और सब के मन माहीं श्रीराम जो न होते तो हे माता तेरी करतूति सुनि के हमारी प्रीति प्रतीति कहां रही अर्थात् कहीं नहीं रही ॥ ३ ॥ कोमल सुंदर सांची नेह सहित औ शुद्ध ऐसी जो भरत की श्रेष्ठ बानी ताको सुनत मात्र सुर नर मुनि प्रेम पहिचानिकै ठीक है ठीक है कहत हैं ॥ ४ ॥ ६१ ॥

जौं पै हौं मातुमते महुं ह्वैहौं । तौ जननी जग में मुख की कहां कालिमा ध्वैहौं ॥१॥ क्यौं हौं आजु होत सुचि सपथनि कौन मानिहैं सांची । महिमा मृगी कौन सुकृती की खल बचन बिसिष ते बांची ॥ २ ॥ गहि न जाति रसना काहू की कहौं जाहि जोउ सूझै । दीनबंधु करुनायतनि बिनु कौन हिये की बूझै ॥ ३ ॥ तुलसी रामबियोग बिषम बिष बिकल नारि नर भारी । भरत सनेह सुधा सींचे सब भये ते समय सुखारी ॥ ४॥६२ ॥

कौसल्याजी के प्रति भरतजी की उक्ति ॥ १ ॥ आजु सपथनि हम कैसे शुद्ध है सकत हैं। हमारी बात को कौन साचो मानैगो। करनी सुकृती की महिमा रूप मृगी खल के बचन रूप बान ते बची है। भाग नहीं बची है ॥ २॥३॥४॥६२ ॥ टि० महुं में, रसना जीभ।

काहे को पोरि कौकड़हि लावौं । धरहु धीर बलि जाउं तात मोको आजु बिधाता बावों ॥ १ ॥ सुनिबे योग बियोग राम को हौं न होउ मेरे प्यारे । सो मेरे नयननि आगे ते धुमि बनहिं सिधारे ॥ २ ॥ तुलसिदास समुझाइ भरत आंसु पोछि उरलाए । उपजी प्रीति जानि प्रभु के हित मनहुं राम फिरि आए ॥ ३॥६३ ॥

कौसल्याजी की उक्ति है। टि० पोरि दोष। रघुनाथ जी का वियोग मैं सुनने योग्य नहीं रही, सो मेरे नेत्रों के सामने वन सिधाये, मैं जीवत रही क्योंकि विधाता हम से वाम हैं ॥ २ ॥ ६३ ॥

मेरो अवध धौं कहहु कहा है। करहु राज रघुराजचरन तजि लै लटि लोगु रहा है ॥१॥ धन्य मातु हौं धन्य लागि जेहि राजसमाज ढहा है। ता पर मोसों प्रभु करि चाहत सब विनु दहन दहा है ॥ २ ॥ राम सपथ कोउ कछू कहै जिनि मैं दुख दुसह सहा है। चित्रकूट चलिहौं प्रातहि चलि छमिऐ मोहि हहा है ॥ ३ ॥ यों कहि भोर भरत गिरिवर को मारग बूझि गहा है। सकल सराहत एक भरत जग जनमि सुलाहु लहा है ॥ ४ ॥ जानिहि सिय रघुनाथ भरत को सील सनेह सहा है। कै तुलसी जाको रामनाम सों प्रेम नेम निवहा है ॥ ५॥६४ ॥

श्रीभरतजी की उक्ति है। मेरो अयोध्याजी में कहो तो क्या है अर्थात् कुछ नहीं है। रघुनाथ को चरण छोड़ि के राज करहु अस लै लगाइ के लोग कहैं रटि रहा वा मालै में लोग लटि रहा है ॥ १ ॥ हमारी माता धन्या हैं औ हम धन्य हैं काहे ते कि जेहि के निमित्त राजसमाज ढहा है कहैं बिगरि गया है, ताहू पर हमारे ऐसे को स्वामी करि के बिना अगिनि के सब जरा चाहत हैं ॥ २ ॥ मेरी हहा कहैं बिनती है छमा कीजिये हम प्रातःकाल चलेंगे, आप सब चलिये ॥३॥ गिरिवर कामदनाथ, जगत में जनमि के एक भरत ने सुंदर लाभ को लहा है अस सकल सराहत हैं ॥४॥५॥६४॥

भाई हौं अवध कहा रहि लहिहौं। राम लषन सिय चरन बिलोकन कालि काननहि जैहौं ॥१॥ जद्यपि मो सें कै

सुखदाता सुशील अमृत की राह जोहि की देखिवे ते तपनि जात है
विधु को भी विष और वारुणी को भी बंधु कहियत है, तो निश्चै
कि नाता धोयवे तें नहीं मिटत है ॥ २ ॥ सुजाननि में शिरोमणि
सब के मन माहीं श्रीराम जो न होते तो हे माता तेरी करतूति सु
के हमारी प्रीति प्रतीति कहां रही अर्थात् कहीं नहीं रही ॥ ३ ॥ कोमल
सुंदर सांची नेह सहित औ शुद्ध ऐसी जो भरत की श्रेष्ठ बानी ता
सुनत मात्र सुर नर मुनि प्रेम पहिचानिकै ठीक है ठीक है का
हैं ॥ ४ ॥ ६१ ॥

जौं पै हौं मातुमते महुं ह्वैहौं । तौ जननी जग में या
सुष को कहां कालिमा ध्वैहौं ॥१॥ क्यौं हौं आजु होत सुचि
सपथनि कौन मानिहैं सांची । महिमा मृगी कौन सुकृती
की खल बचन बिसिष ते बांची ॥ २ ॥ गहि न जाति रसना
काहू की कहौं जाहि जोहू सूझै । दीनबंधु कारुन्यसिंधु
बिनु कौन हिये की बूझै ॥ ३ ॥ तुलसी रामवियोग बिषम
बिष बिकल नारि नर भारी । भरत सनेह सुधा सींचे सब
भये ते समय सुपारी ॥ ४॥६२ ॥

कौसल्याजी के प्रति भरतजी की उक्ति ॥ १ ॥ आजु सपथनि
हम कैसे शुद्ध है सकत हैं । हमारी बात को कौन साचो मानैगो । कपटे
सुकृती की महिमा रूप मृगी खल के बचन रूप बान ते बची है । भात
नहीं बची है ॥ २॥३॥४॥६२ ॥ टि० महुं मैं, रसना जीभ ।

काहि को पोरि कौकहि लावों । धरहु धीर बलि
तात मोको आजु विधाता बावों ॥ १ ॥ सुनिवे योग बियो
राम को हौं न होंउ मेरे प्यारे । सो मेरे नयननि आगे
रघुपति बनहिं सिधारे ॥ २ ॥ तुलसिदास समुझाइ भरत
काहं आंसु पोंछि उरलाए । उपजी प्रीति जानि प्रभु के हित
मनहुं राम फिरि आए ॥ ३॥६३ ॥

कौसल्याजी की उक्ति है। टि० पोरि दोष। रघुनाथ जी का वियोग मैं सुनने योग्य नहीं रही, सो मेरे नेत्रों के सामने घन सिधाये, मैं जीवत रही क्योंकि विधाता हम से वाम हैं ॥ २ ॥ ६३ ॥

मेरो अवध धौं कहहु कहा है। करहु राज रघुराजचरन तजि लै लटि लोगु रहा है ॥१॥ धन्य मातु हौं धन्य लागि जेहि राजसमाज ढहा है। ता पर मोसों प्रभु करि चाहत सब बिनु दहन दहा है ॥ २ ॥ राम सपथ कोउ कछू कहै जिनि मैं दुप दुसह सहा है। चित्रकूट चलिहौं प्रातहि चलि छमिऐ मोहि इहा है ॥ ३ ॥ यों कहि भोर भरत गिरिवर को मारग बूझि गहा है। सकल सराहत एक भरत जग जनमि सुलाहु लहा है ॥ ४ ॥ जानिहि सिय रघुनाथ भरत को सील सनेह महा है। कै तुलसी जाको रामनाम सों प्रेम नेम निवहा है ॥ ५॥६४ ॥

श्रीभरतजी की उक्ति है। मेरो अयोध्याजी में कहो तो क्या है अर्थात् कुछ नहीं है। रघुनाथ को चरण छोड़ि के राज करहु अस लै लगाइ के लोग कहैं रटि रहा वा मालै में लोग लटि रहा है ॥ १ ॥ हमारी माता धन्या हैं औ हम धन्य हैं काहे ते कि जेहि के निमित्त राजसमाज ढहा है कहैं बिगरि गया है, ताहू पर हमारे ऐसे को स्वामी करि के बिना अगिनि के सब जरा चाहत हैं ॥ २ ॥ मेरी इहा कहैं बिनती है छमा कीजिये हम प्रातःकाल चलैंगे, आप सब चलिये ॥३॥ गिरवर कामदनाथ, जगत में जनमि के एक भरतै ने सुंदर लाभ को लहा है अस सकल सराहत हैं ॥४॥५॥६४॥

भाई हौं अवध कहा रहि लहिहौं। राम लषन सिय चरन बिलोकन कालि काननहि जैहौं ॥१॥ यद्यपि मो सैं कै

कुमातु ते ह्वै आई अति पोची। सनमुख गये सरन रावरिहि रघुपति परम सकोची ॥ २ ॥ तुलसी यों कहि चले भोरही लोग बिकल संग लागे। जनु वन जरत देखि दारुन दव निकसि बिहँग मृग भागे ॥ ३॥६५॥

सुगम ॥ ६५ ॥ टि०—पोची अत्यन्तबुराई, दारुन भयंकर, दव वनडाढ़ा।

सुक सों गहबर हिय कहै सारो। बीर कीर सिय राम लषन बिनु लागत जग अंधियारो ॥१॥ पापिन चेरि अयानि रानि नृप हित अनहित न बिचारो। कुल गुर सचिव साधु सोचत बिधि को न बसाइ उजारो ॥२॥ अवलोकै न चलत भरि लोचन नगर कोलाहल भारो। सुने न बचन करुना कर के जब पुर परिवार कँभारो ॥ ३ ॥ भैया भरत भावते के सँग वन सब लोग सिधारो। हम पर पाइ पींजरन तर सत अधिक अभाग हमारो ॥४॥ सुनि सग कहत अंब मीनो रहु समुझि प्रेमपथ न्यारो। गए ते प्रभु पहुंचाय फिरे पुनि करत करम गुनगारो ॥ ५ ॥ जीवन जग जानकी लषन को मरन महीप संवारो। तुलसी और प्रीति की चरचा करत कहा कछु चारो ॥ ६॥६६ ॥

मैना सुआ सो व्याकुल हृदय कहै हैं। हे भाई सुआ श्री सीता राम लखन बिना जगत अँधियारो लागत है ॥ १ ॥ पापिन जो चेरी औ बुद्धिहीन रानी और महाराज ने हित अनहित नहीं बिचार किया। बशिष्ट जी औ सुमंत्रादि मंत्री और साधुजन सोचत हैं कि बिधाता ने बसाय के कौन को नहीं उजारेउ अर्थात् राव को उजारो ॥ २ ॥ चलत के नेत्र भरि देखे नहीं और जब पुर परिवार को समाचार कियो तब नगर में महत शब्द रह्यो ताते करुनाकर के

बचन न सुने ॥ ३ ॥ प्रिय जो भैया भरत तिन के संग बन में सब लोगें गए औ हम पंख पाय कै पींजरन में तरसत हैं। भाव जिन के पंख नाहीं ते गए औ हम नाहीं, ताते अधिक अभाग हमारो है। ४॥ सुआ सुनि के कहत है कि हे अम्ब मैनी प्रेम को पथ न्यारो है यह समुझि कै मौनी कहें मौन रहु जे प्रभु के संग गए ते पहुंचाय कै कर्म के करतब की निंदा करत पुनि फिरे ॥५॥ जीवन तो जग में श्री जानकी औ लखन लाल को है औ महाराज ने मरन बनायो है और प्रीति की चरचा काहे को करत हैं काहे ते कि कुछु है सकत नाहीं। भाव न मरतैं बना न संग जातैं बना ॥ ६।६७ ॥

कहै सुक सुनहिं सिपावन सारो। बिधि करतब विपरीत बामगति राम प्रेमपथ न्यारो ॥१॥ को नर नारि अवध पग मृग जेहि जीवन राम ते प्यारो। बिद्यमान सब के गवने बन बदन करम को कारो ॥ २ ॥ अंब अनुज प्रिय सखा सुसेवक देखि बिषाद बिसारो। पन्छी परबस परे पींजरनि लेयौ कौन हमारो ॥ ३ ॥ रहि नृप की बिगरी है सब को अब एक सँवारनिहारो। तुलसी प्रभु निजचरनपीठ मिस भरत प्रान रखवारो ॥ ४ ॥ ६७ ॥

सुक कहत है कि हे मैना सिखावन सुनो। बिधि के बिपरीत करतब से बक्र गति है औ श्रीराम के प्रेम को पथ न्यारो है ॥ १ ॥ अवध में कवन नर नारि खग मृग अस हैं कि जेहि के राम ते प्यारो जीवन है परंतु सब के रहत जो श्रीराम बन को गए तो करम को मुह कारो है ॥ २ ॥ माता औ बंधुवर्ग औ प्रियसखा औ सुसेवक देखि के बिषाद को बिसरायो वा अनुज प्रिय सखा सुसेवकों को देखि कै माता सब बिषाद को बिसरायो तो हम तो पक्षी हैं ताहू में परबस पींजरन में परे हैं तो हमारो कवन लेखो है। ३। एक महाराज की तो रही और सब की बिगरी अब एक सँवारनिहारो है जो प्रभु निज चरण पादुका के महाना ते भरत के मान को रखवारो है ॥ ४। ६७ ॥

तादिन शृंगबेरपुर आए। रामसखा ते समाचार सुनि वारि विलोचन छाए ॥१॥ कुससाथरी देखि रघुपति की हनु अपनपौ जानो। कहत कथा सिय राम लषन की बैठेहि रैन बिहानी ॥ २ ॥ भोरहि भरद्वाज आश्रम ह्वै करि निषाद-पति आगे। चले जनु तक्यों न डाग तृषित गज धीरधाम के लागे ॥ ३ ॥ बूझत चित्रकूट कहं जेहि तेहि मुनिबालकनि बतायो। तुलसी मनहुं फनिक मनि ढूंढत निरखि हरषि हिय धायो ॥ ४ ॥ ६८ ॥

पद सुगम ॥ ६८ ॥

विलोकि दूरि ते दोउ बीर। उर आयत आजानु सुभग भुज स्यामल गौर सरीर ॥ १ ॥ सीस जटा सरसीरुह लोचन बने परिधनु मुनिचीर। निकट निषंग संग सिय सोभित करनि धुनत धनु तीर ॥२॥ मन अगहुड तन पुलकि सिथिल भयो नलिन नयन भरे नीर। गडत गोड मानो मकुच पंक मां कढत प्रेम बलधोर ॥ ३ ॥ तुलसिदास दसा देखि भरत की उठिधाये अतिहि अधीर। लिए उठाइ उरलाइ कृपानिधि बिरहजनित हरि पीर ॥ ४ ॥ ६९ ॥

आयत विसाल, आजानभुज जानु पर्यंत बाहुं ॥ १ ॥ बने परिधनु मुनिचीर मुनिचीर जे वल्कल ते परिधन कहैं वस्त्र बने हैं ॥ २ ॥ अगहुड अग्रवर्ती ॥ ३ ॥ हरि कहैं हरि लिए ॥ ४॥६९ ॥

राग केदारा। भरत भए ठाढे करजोरि। कहै न सकत सकुच बस समुझि मातुकृत खोरि ॥१॥ फिरिहैं किधौं कहिहैं प्रभु कछपि कुटिलता मोरि। हृदय सोच जल बिलोचन देह नेह भइ भोरि ॥ २ ॥ बनवासी पुर लोग

[illegible] कि के जातु के के कोरि । टेरि स्रवन सुनिवे को कर्म गर्व हरे देत अन कोरि ॥ ३ ॥ तुलसी राम सुभाव [illegible] पुर पति कीरति हरोरि । बोलि बचन विनोत हित अनाथकहि निहोरि ॥ ४।७० ॥

कलि कलना करि के कपोत विचारि के। देह नेह भई मोर [illegible] ॥ २ ॥ काह कैसे स्वप्न से बनाए भए हैं भाव [illegible] हैं, प्रेम पन कोरि प्रेम से मन को बोरि रहे हैं। ३ ॥ ७० ॥

जानत हौं मदही कि मन की। तदपि कृपाल करौं बिनती सोइ मातर गुनहु दीनहित जन की ॥१॥ ए सेवक संगत अनन्य अति ज्यों चातकहि एक गति घन की। यह बिचारि रघुनाथ पुनीत पुर करहु टुमह चारत परिजन की ॥ २ ॥ मेरो पुनि जीवन जानिए ऐसोइ जिय जैसो अहि जामु गई मनिफन की। मेटहु कुलकलंक कोसलपति पठा देहु नाथ मोहि पन की ॥ ३ ॥ मोको जोइ जोइ लाइए लागै सोइ सोइ जौं उतपति कुमातु ते या तन की। तुलसीदास सब दोष दूरि करि प्रभु अब लाज करहु निज पन की ॥ ४।७१ ॥

ए अवधवासी सब निरंतर अति अनन्य सेवक हैं। जैसे चातक को एक मेघ की गति है भाव तैसे इन जनन को एक आप की गति है ॥ २ ॥ पुनि हमारो जीवन अस जानिए कि जेहि सर्प के फणि की मणि गई जैसे सो जीवै। हे कोसलपति कुल को कलंक मेटहु। हे नाथ मोको पन जावे की आज्ञा देहु। इहां कुल को कलंक छोटे को राज्य होनो बड़े को पन जानो है ॥ ३ ॥ जो या तन की उतपत्ति कुमातु से है याते मोको जोई जोई दोष लगाए सोई सोई लागै। निज पन की कहँ शरनागत पालिवे की लज्जा। ४ ॥ ७१ ॥

तात विचारौ धौं हौं क्यों आवौं। तुम्ह सुचि सुहृद सुजान सकल विधि बहुत कहा कहि कहि समुझावौं ॥१॥ निज कर पाल खैंचि या तन ते जौं पितु पग पानहीं करावौं। छोउ उरिन पिता दसरथ तें कैसे ताको वचन मेटि पति पावौं ॥ २ ॥ तुलसिदास जाको सुजस तिहूं पुर क्यों तेहि कुलहि कालिमा लावौं। प्रभु रुप निरपि निरास भरत भए बाल्यौ है सबहि भांति विधि बावौं ॥ ३॥७२ ॥

हे तात भरत विचारो तो कि मैं क्यों वन को आयो ।१॥ करावौं कहैं बनवावौं, पति पावौं कहैं मर्यादा पावौं । २ ॥ कुलहि कालिमा लावौं कहिवे को यह भाव सत्यप्रतिज्ञ कुल है ॥ ३ ॥ ७२ ॥

राग सोरठ। बहुरौं भरत कह्यो कछु चाहै । सकुच सिन्धु बोहित विवेक करि बुधि बल बचन निबाहै ॥१॥ छोटेहु तें छोह करि आए मैं सामुहे न हेरो। एकहि बार आजु विधि मेरो सील सनेह निबेरो ॥ २ ॥ तुलसी जौं फिरिबो न बनै प्रभु तौ हौं आयसु पावौं। घर फेरिये लषन सरिका हैं नाथ साथ हौं आवौं ॥ ३॥७३ ॥

फेरि भरत कछु कहा चाहत हैं सकुच रूप समुद्र में अपने विवेक जो जहाज करि के तेहि जहाज को बुद्धि औ बचन के बल तें निबाहत हैं अर्थात् कुठौर में नहीं परै देत हैं। वा बुद्धि औ बचन रूप सैना को तेहि जहाज पर निबाहत हैं ॥ २ ॥ निबेरो कहैं दूरि कियो, हौं आवौं हम चलैं । ३ ॥ ७३ ॥

रघुपति मोहि रंग किन लीजै। बार बार पुर जाहु नाथ केहि कारन आयसु दीजै ॥१॥ जद्यपि हौं अति अधम कुटिलमति अपराधिनि को जायो। प्रनतपाल कोमल सुभाउ जिय जानि सरन तकि आयो ॥ २ ॥ जौ मेरे तजि

चरन आनि गति कहौं हृदय कछु राखौ । तौ परिहरहु दयाल दीनहित प्रभु अभिअंतरसाखी ३ ॥ ॥ ताते नाथ कहौं मैं पुनि पुनि प्रभु पितु मातु गोसाईं । भजनहीन नर-देह दया कर स्वान फेरु की नाईं ॥ ४ ॥ बंधुबचन सुनि स्रवन नयन राजीव नीर भरि आए । तुलसिदास प्रभु परम कृपा गहि बांह भरत उर लाए ॥ ५॥७५ ॥

जो मो कों चरन छोड़ि के आन गति होय औ हृदय में कछु राखि के कहत होउं तौ हे दयाल, हे दीनहित, हे प्रभु, हे अंतरजामी त्यागि देहु ॥ ३ ॥ फेरू शृगाल ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७४ ॥

काहे को मानत हानि हिये हो । प्रीति नीति गुन सील धरम कहँ तुम अवलंब दिये हो ॥ १ ॥ तात जात जानिबे न ए दिन करि प्रमान पितुबानी । ऐहौं बेगि धरहु धीरज उर कठिन कालगति जानी ॥२॥ तुलसिदास अनुजहि प्रबोधि प्रभु चरनपीठ निज दीन्हे । मनहुं सवन कें प्रानपाहरू भरत सीस धरि लीन्हे ॥ ३ ॥ ७५॥

हो भरत काहे को हानि हृदय में मानत हौ । प्रीति औ नीति औ गुण औ शील औ धर्म्म को तुमहीं अवलंब दिए हौ ॥ १ ॥ हे तात ए जे चौदह वर्ष के दिन हैं तिन के जाते न जानोगे ॥ २ ॥ ३ ॥ ७५॥

बिनती भरत करत कर जोरे । दीनबंधु दीनता दीनकी कबहुं परै जनि भोरे ॥१॥ तुम्ह से तुम्हहिं नाथ मोकों मो से जन तुम को बहुतेरे । यहै जानि पहिचानि प्रीति छमिबे अघ औगुन मेरे ॥ २ ॥ यौं कहि सीय राम पायन परि लषन लाइ उर लीन्हे । पुलक सरीर नीरभरि लोचन कहत प्रेम पनु कीन्हे ॥३॥ तुलसी बीते अवध प्रथमदिन जौ रघुबीर न

ऐहौ । तौ प्रभुचरनसरोज सपथ जीवत परिजनहि न पैहौ ॥ ४ ॥ ७६ ॥

मु० ॥७६॥ टि०—पुलक शरीर से नेत्रों में जल भरि के प्रभु की प्रतिज्ञा से कहा कि अवधि बीतने पर पहलेही दिन यदि न आवेंगे तो परिजन को जीवित नहीं पावेंगे ।

अवसि हौं आयसु पाय रहौंगो । जनमि कैकई कोखि कृपानिधि क्यों कछु चपरि कहौंगो ॥ १ ॥ भरत भूप सिय राम लषन बन सुनि सानंद सहौंगो । पुरपरिजन अवलोकि मातु सब सुप संतोष लहौंगो ॥ २ ॥ प्रभु जानत जेहिं भांति अवधलौं वचन पालि निवहौंगो । आगे की विनती तुलसी तव जब फिरि चरन गहौंगो ॥ ३ ॥ ७७ ॥

चपरि चाव पूर्वक ॥ १ ॥ भरत राजा हैं श्रीसीता राम लषन बन में हैं यह वचन सुनि के आनन्दसहित सहौंगो । पुरपरिजन औ मातन को देखि के अर्थात् विकल देखि के सुख औ संतोष को पावोंगे ॥ २ ॥ जेहि भांति अवधि लौं वचन पालि के निबहैंगे सो प्रभु जानत हैं । जब फेरि चरण गहैंगे तब आगे की विनती करैंगे भाव आ सिंहासन पर बैठिए यह विनती करैंगे ।३.७७॥

प्रभुसो मैं ढीठ्यौ बहुत दई है । कौवी छमा नाथ आरति ते कही कुजुगुति नई है ॥१॥ यौं कहि बार बार पायनि पर पांवरि पुलकि लई है । अपनो अदिन देखि हौं डरपत जिय विपबेलि बई है ॥ २ ॥ आयो सदा सुधारि गोसाईं जन बिगरि गई है । थके बचन पैरत सनेहसरि परयो मानो घोर घई है ॥ ३ ॥ चित्रकूट तेहि समय सबनि को बुद्धि बिपाक हई है । तुलसी राम भरत के बिछुरत सिला सप्रेम भई है ॥ ४ ॥ ७८ ॥

प्रभु सों मैं बहुत ढिठाई करी है औ आरति ते नई कुजुगुति कही है। हे नाथ ताको छमा कीजिएगा। १ ॥ पांवरि पादुका, हौं कहैं हम ॥ २ ॥ हे गोसाईं जो जन ते बिगरि गई है ताको आप सदा सुधारत आए हौ। एतना कहि बचन थकित भए, मानों सनेह रूप नदी के पैरत में घोर प्रवाह में परयो है। ३। तेहि समै चित्रकूट में सबनि के बुद्धि को बिषाद ने नाशी है। गोसाईं जी कहत हैं कि श्रीभरत जू को बिछुरत में और को को कहै शिलो प्रेमसहित भई है, भाव पघिलि गई है ।४।७८

अबते चित्रकूट ते आए। नंदिग्रामपनि अवनि डासि-कुस परनकुटी करि छाए ॥१॥ अजिन वसन फल असन जटा धरे रहत अवधि चित दीन्हे। प्रभुपद प्रेम नेम व्रत निरपत मुनिन्ह नमित मुख कीन्हे ॥ २ ॥ सिंहासन पर पूजि पादुका वारहिं वार जोहारे। प्रभु अनुराग मागि आयसु पुरजन सब काज संवारे ॥ ३ ॥ तुलसी ज्यौं ज्यौं घटत तेजतनु त्यौं त्यौं प्रीति अधिकाई। भए न हैं न होहिंगे कबहूं भुअन भरत से भाई ॥ ४ ॥ ७९ ॥

अजिन मृगचर्म, मुनिन्ह नमित मुख कीन्हे कहिवे को यह भाव कि राजकुमार होय के जस तप ए करत हैं तस हम नहीं करि सकत हैं ॥ २ ॥ अनुरागपूर्वक प्रभु जो चरनपादुका तिन्ह से आज्ञा मांगि करि के पुरजनन के सब काज संवारे हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥७९॥

राग रामकली—राषी भगति भलीभलाई भलीभांति भरत। खारथ परमारथ पथी जय जय जग करत ॥१॥ जो व्रत मुनिवरनि कठिन मानस आचरत। सो व्रत लियो चातक ज्यौं सुनत पातक हरत ॥ २ ॥ सिंहासन सुभग रामचरन-पीठ धरत। चालत सब राजकाज आयसु अनुसरत ॥ ३ ॥ आपु अवध बिपिनि बंधु सोच जरनि जरत। तुलसी सम बिषम सुगम अगम लषि न परत ॥ ३ ॥ ८० ॥

भली भांति ते भरत ने भली भगति औ भली भलाई राखी है
वा भली भलाई ते भली भांति भरत ने भगति राखी ।। भरत जू
स्वारथ औ परमारथ के पथी हैं अस कहि जगत जैजै कहत है
वा जगत में जेतने स्वारथ औ परमारथ के पथी हैं ते जैजै कहत
हैं ॥ १ ॥ कठिन मानस हठयोगादि ते वा कठिन करि मन को अर्थात्
रोकि के ॥ २ ॥ चरनपीठ के आज्ञानुसार सब राजकाज चलावत
हैं ॥ ३ ॥ आप तो अवध में हैं औ बन में भाई हैं ताते सोच रूप
जरनि ते जरत हैं । गोसाईं जी कहत हैं कि भरत जी को सम विषम
सुगम अगम कछु नहीं लखि परत हैं । अर्थात् अत्यंत सोच है ताते वा
सम औ सुगम ठौर में भरत जू औ विषम औ अगम ठौर में राम
हैं पर लखि नहीं परत कि के कहां हैं । भाव भरत जू यद्यपि सम सुग
ठौर में हैं पर जब सोच जरानि में जरत हैं तब विषमै अगम में हैं अ
श्रीराम जू यद्यपि विषम अगम में हैं पर शोचरहित हैं तो सम सुगम
में हैं ॥ ४ ॥ ८० ॥

मोहि भावति कहिआवति नहिं भरतजू की रहनि ।
सजल नयन सिथिल बयन प्रभुगुनगन कहनि ॥१॥ असन
बसन अयन सयन धरम गरुअ गहनि । दिन दिन पन प्रेम
नेम निरुपधि निरवहनि ॥२॥ सीता रघुनाथ लषन बिरह पीर
सहनि । तुलसी तजि उभय लोक रामचरन चहनि ॥३॥८१॥

असन भोजन, बसन वस्त्र, अयन गृह औ सैन औ भारी धर्म्म का
ग्रहन करना ॥ २ ॥ ३ ॥ ८१ ॥

जानी है संकर हनुमान लषन भरत रामभगति । कह
अगम करत सुगम सुनत मीठो लगति ॥ १ ॥ लहत सकल
चहत सकल जुग जुग जगमगति । रामप्रेमपथ ते कबहूं डोलत
नहिं डगति ॥ २ ॥ रिधि सिधि विधि चारि सुगति जा बिनु
गति अगति । तुलसी तेहि सनमुष बिनु बिषय ठगनि
ठगति ॥ ३ ॥ ८२ ॥

श्रीशंकर श्रीहनुमान श्रीलषनलाल श्रीभरत जू ने रामभक्ति
ानी है। वह रामभक्ति कैसी है कि कहिवे में सुगम है औ करिवे
गम है औ सुनत में मीठी लगति है ॥ १ ॥ तेहि भक्ति को सकल
ं हैं पर कोऊ एक पावत हैं औ जुग जुग में जगमगाति रहति है।
कबहूं मलानि परत नाहीं औ श्री राम के प्रेम रूप पथ ते कबहूं
ति औ डगति नहीं है ॥ २ ॥ रिद्धि सिद्धि औ चारो भांति की
कहँ उपाय सो जा विना अगति है तेहि भक्ति के सन्मुख विना
रूपी ठगिनि ठगति है ॥ ३ ॥ ८२ ॥

राग गौरी—कैकेई करो धौं चतुराई कौन। राम लषन
वनहिं पठाये पति पठयो सुरभौन ॥ १ ॥ कहा भलो
भयो भरत को लगे तरुन तन दौन। पुरबासिन के नैन
बिनु कबहुं तो देषति हौंन ॥ २ ॥ कौसल्या दिनराति
ूरति बैठि मनहिं मन मौन । तुलसी उचित न छोड़
बो प्रान गए संग जौन ॥ ३ ॥ ८३ ॥

कौशल्या जी की उक्ति है ॥ १ ॥ दवन कहैं विरहानल ॥ २ ॥
ाति चिंता करति प्रान गए संग जौन जो प्रान संग न गए ॥३॥८३

छाग मीजिबो हाथ रह्यो। लगी न रंग चित्रकूटहु ते
कहा जात बह्यो ॥ १ ॥ पति सुरपुर सिय राम लषन बन
व्रत भरत गह्यो । हौं रहि घर मसान पावक ज्यों
ोड़ मृतक दह्यो ॥ २ ॥ मेरोइ हियो कठोर करिवे कहुं
ं कहुं कुलिस लह्यो । तुलसी बन पहुंचाय फिरी सुत
कछु परत कह्यो ॥ ३ ॥ ८४ ॥

यां कहां जात बह्यो इहां का वहा जात रहा। भाव जेहि सन्दारै हेतु
॥ १ ॥ हम घर रहि के मसान को पावक जैसे मृतक को जरावत
सेई मरिबोई रूप मृतक को जराय दियो ॥२॥ हमारही हिय कठोर

फरिबे के लिए विधाता ने कतहुं कुलिस पायो है ।। भाव वारी को हमारो हृदै बनायो है ॥ ३ ॥ ८४ ॥

हौं तो समुझ रही अपनो सो । राम लषन सिय को सुषमा कहुं भयो सषी सपनो सो ॥१॥ जिन्ह के विरह विषाद बटाउन्ह पग मृग जीव दुषारी । सोहि कहा सजनी समुझावति हौं तिन की महतारी ॥ २ ॥ भरतदसा सुनि सुमिरि भूपगति देषि दीन पुरवासी । तुलसी राम कहत हौं सकुचति ह्वैहै जग उपहांसी ॥ ३॥८५ ॥

सखी समुझावति है ता प्रति श्री कौशल्या जी कहति हैं कि हे सखी मैं तो आपै समुझि रही हौं । भाव तब समुझाइवे को क्या प्रयोजन है ॥ १ ॥ २ ॥ कौशल्या जी कहति हैं कि राम कहत में हम सकुचत हैं । भाव लोग कहि हैं कि कैसी माता हैं कि ऐसे पुत्र के बिछुरे पर भी बोलति हैं । बोलनो हमारो जग में उपहास करावनिहारो होयगो ।३।८५

आली हौं इन्हहि बुझावों कैसे । लेत हिये भरि भरि षति के हित मात हेत सुत जैसे ॥ १ ॥ बार बार हिरिनात हेरि उत जो बोलै कोउ द्वारे । अंग लगाइ लिये बारे ते करुनामय सुत प्यारे ॥ २ ॥ लोचन सजल सदा सोचत से पान पान बिसराए । चितवत चौंकि नाम सुनि सोचति राम सुरति उर आए ॥ ३ ॥ तुलसी प्रभु के बिरह बधिक हठि राजहंस से जोरे । ऐसेउ दुषित देषि हौं जीवति राम लषन के घोरे ॥ ४॥८६ ॥

हे आली इन षोड़न के मैं कैसे समुझावों । अपने स्वामी जे श्रीराम लषन तिन के हित अपने हृदय में शोक को भरि भरि लेत हैं, जैसे महतारि के हेतु पुत्र ॥ १ ॥ जो कोऊ द्वारे बोलत है तब द्वार के ओर ताकि के बार बार हिरिनात हैं । भाव श्रीराम लषन तो नहीं बोलत

हैं। करुनामय हमारे प्यारे पुत्र लरिकई ते इन घोरन को अंग लगाइ लिए हैं ॥ २ ॥ सदा लोचन सजल रहत है औ खान पान जस सोअत में बिसरि जात है तस बिसराए रहत है औ श्रीराम लक्ष्मण को नाम सुनि चहुंकि के देखत हैं। जब नाम सुनिबे ते श्रीराम की सुरति उर में आय जाति है तब सोच करत हैं ॥ ३ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभु के बिरह रूप बधिक ने राम लषन के घोड़े जो राजहंस के जोड़े सम हैं तिन को हठि करि के दुखित किए सो भी देखि के मैं निअत हौं ॥ ४ ॥ ८६ ॥

रावो एक वार फिरि आवो । ए वर वाजि बिलोकि आपने बहुरो बनहिं सिधावो ॥ १ ॥ जे पय प्याइ पोषि कर पंकज वार वार चुचुकारे। क्यों जीवहिं मेरे राम लाडिले ते अब निपट बिसारे ॥ २ ॥ भरत सैगुनी सार करत हैं अतिप्रिय जानि तिहारे। तदपि दिनहुं दिन होत झांवरे मनहुं कमल हिम मारे ॥ ३ ॥ सुनहुं पथिक जौं राम मिलहिं बन कहियो मातु संदेसो। तुलसी मोहि और सबहिन ते इन्ह को बडो अंदेसो ॥ ४॥८७ ॥

सार कहें पालन ॥ ८७ ॥

राग केदारा। काहू सो काहू समाचार अस पाए। चित्रकूट ते राम लषन सिय सुनियत अनत सिधाए ॥ १ ॥ सैलसहित निरझर बन मुनिथल देखि देखि सब धाए। कहत सुनत सुमिरत सुपदायक मानस सुगम सुहाए ॥ २ ॥ बडि अवलंब बामबिधि बिघटित बिषम बिषाद बटाए। सिरस सुमन सुकुमार मनोहर बालक बिंध चटाए ॥ ३ ॥ अवध सकल नर नारि बिकल अति अकनि बचन अनभाए। तुलसी रामबियोग सोगबस समुझत नहिं समुझाए ॥४।८८॥

परवत नदी झरना वन मुनिन के आश्रम हम सब देखि देखि
आए हैं सुगम औ सुंदर हैं वसिबे को को कहै कहत सुनत सुमिरत
में मन के सुखदायक हैं, बहि अवलंब को वाम विधाता न तोरे औ
तीक्ष्ण विषाद को बढ़ाए। सिरिस के सुमन सम सुकुमार मनोहर
बालकन कों विंध्य परवत पर चढ़ाए ॥२।३॥ अकनि सुनि, अनभाए
अमिय ॥४॥८८॥

सुनी मैं सबी मंगल चाह सुहाई। सुभपत्रिका निषाद
राज की आजु भरत पहं आई ॥ १ ॥ कुंअर सो कुशल छेम
तेहि अवसर कुलगुरु कहं पहुंचाई। गुर कृपाज संभम पुर
घर घर सादर सबहि सुनाई ॥ २ ॥ बधि विराध सुर साधु
सुखी करि रिषि सिय आसिष पाई। कुंभजसिष्य समेत
संग सिय मुदित चले दोउ भाई ॥ ३ ॥ रेवा बिंध बीच
सुपास थल बसे हैं परनरटह छाई। पेंधकथा रघुनाथ
पथिक की तुलसिदास सुनि गाई ॥ ४॥८९॥

॥ १ ॥ सो कुशल छेम तेही अवसर कुंअर भरत ने वशिष्ठ को
कहं पहुंचाई है ॥ २ ॥ कुंभज शिष्य सुतीक्ष्ण ॥ ३ ॥ रेवा नर्मदा
॥ ४ ॥८९॥

सांख्य न्याय वेदांत को, छोड़ि छाड़ि सब जंग।
सीता रघुपति चरन महं, हरिहर करहु उमंग ॥

इति श्रीरामगीतावलीमकाशिका टीकायां श्रीसीतारामकृपापात्र श्री
॥ सीतारामीय हरिहर प्रसादकृतौ अयोध्याकाण्डः समाप्तः।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली—आरण्यकाण्ड ।

मङ्गलाचरण-वरवा ।

रक्ष रक्ष रघुनायक मुनिपथपाल ।
पाहि पाहि फरनाकर दुर्जनकाल ॥

मूल ।

राग मल्लार । देखि राम पथिक नाचत मुदित मोर । मानत मनहु सतडित ललित घन धनु सुरधनु गरजनि टंकोर ॥ १ ॥ कंपै कलाप बर बरहि फिरावत गावत कल कोकिल किसोर । जहं जहं प्रभु विचरत तहं तहं सुपट्ट कवन कौतुक न घोर ॥ २ ॥ सघन छाँह तम रुचिर रजनि भ्रम वदन चन्द चितवत चकोर । तुलसी मुनि पग मृगनि सराहत भये हैं सुकृत सब इन की ओर ॥ ३॥१ ॥

टीका ।

देखहु० कवि की उक्ति है कि श्रीराम पथिक के देखिवे ते हर्षित मोर नाचत हैं । मानो श्रीराम को तड़िता सहित सुंदर घन मानत हैं । इहां तड़िता श्रीजानकी जी हैं वा पीतपट है औ सारङ्ग धनु जो सो इन्द्रधनु है औ ताको टंकोर जो सो गरज है ॥१॥ बरही कहैं मयूर सो कलाप कहैं पक्ष को कंपाय के फिरावत है औ युवा कोकिल जो सो

मधुर गावत है । जहां जहां दण्डकवन में प्रभु फिरत हैं तहां तहां सुख
औ कौतुक थोर नहीं है ॥ २ ॥ सघन छांह की अंधेरी में सुंदर राति
के भ्रम ते औ मुख चन्द के भ्रम ते चकोर चितवत है । गोसाईं जी
कहत हैं कि खग मृगनि को मुनि सराहत हैं औ कहत हैं कि सब
सुकृत इन के ओर भए हैं ॥ ३॥१ ॥

राग कल्यान । सुभग सरासन सायक जोरे । बेलत
राम फिरत मृगया वन बसति सो मृदु मूरति मन मोरे ॥१
पीत बसन कटि चारु चारि सर चलत कोटि नट सो बन
तोरे । स्यामल तनु श्रमकन राजत ज्यों नव घन सुधासरोवर
धोरे ॥ २ ॥ ललित कांध बर भुज बिसाल उर लेहि कंठरेखा
चित चोरे । अवलोकत मुख देत परम सुख लेत सरद ससि
की छवि छोरे ॥ ३ ॥ जटा मुकुट सिर सारस नयननि गोहैं
तकत सुभौंह सकोरे । सोभा अमित समाति न कानन
उमगि चली चहुं दिसि मिति फोरे ॥४॥ चितवत चकित कुरंग
कुरंगिनि सब भये मगन मदन के भोरे । तुलसिदास प्र
बान न मोचत सहज सुभाय प्रेम बस थोरे ॥ ५॥२ ॥

सुभग १० । मृगया शिकार । १ ॥ कटि चारु चारि सर कटि में
चारि बान धरे हैं । नव घन सुधा सरोवर खोरे मानो नवीन
अमृत के तालाव में स्नान किए ॥ २ ॥ ३ ॥ जटा को मुकुट सिर
है औ सारस कहैं कमल ता सम नैन हैं । सुंदर भौंह को सकोरे म
घात ताकत हैं । शोभा मितिरहित है ताते वन में समाति नहीं है मर्या
को फोरि के चहुं दिसि उमगि चली ॥ ४ ॥ मृगा मृगी चकित चितवत
हैं मदन के भ्रम ते सब मगन भए हैं । भाव मदन के पांच बाण
हैं । एक एक बाण हाथ में औ चार बाण कटि में धरे हैं । गोसाईं जी
कहत हैं कि प्रभु बाण नहीं छोड़त हैं काहे ते कि प्रभु को यह सहज
सुभाव है अर्थात् बनावट करि नहीं कि थोरे प्रेम के बस होत हैं ॥५॥२॥

राग केदार—देखु री राम रूप रुचि सोना। पंचवटी वर पर्णकुटीरा करें छटु छवा धुनोना ॥१॥ कपटकुरंग कनक-रुचिर मणि जटित सो कहनि पैमि धावा। बाढ़ पालिबे योग लखन राम कंदुक धावा ॥ २ ॥ त्रियाबचन सुनि बिहंसि मेमरम संदरि आदर कीन्हें। चल्यो सो भाजि फिरि फिरि हेरत मुनिमन रघबीर छीन्हें ॥ ३ ॥ मोहति मधुर मनोहर मूरति रैमहरिन के पाहीं। भावनि नवनि विलोकनि बिहसनि हम तुलसीदास बलाहीं ॥ ४ ॥

पद १० पद ३० ॥३॥ टि०-कुरंग हरिन, रैमहरिन सोने का मृग, विहसनि विशेष मुस्कावट।

राग कल्यान—धर सर धनु कटि रुचिर निषंग। प्रिया प्रीति प्रेरित मनमोहिन विचरत कपट कनकमृग संग ॥ १ ॥ भुज विसाल कमनीय कंज उर समसोकर सोहै सांवरे अंग। मनो मुकुतामनि मरकतगिरि पर लसत ललित रविकिरन प्रसंग ॥ २ ॥ नैननलिन सिरजटा मुकुटविच सुमनमाल मानो सिवसिरगंग। तुलसिदास असि मूरति की बलि छवि विलोकि लाजै असित अनंग ॥ ३ ॥ ४ ॥

पद १० । भुजा विसाल है औ कंध छाती सुंदर है औ श्रम कण सांवरे अंग पर सोहत है। मानो मुक्तामणि मरकत के परवत पर सुंदर रविकिरन के प्रसंग से सोभत है। नैन कमल सम हैं सिर में जटा को मुकुट है बीच में श्वेत सुमन की माला है सो मानो शिव के शिर पर गंगा है। गोसाईं जी कहत हैं कि ऐसी मूरति की छवि देखि कै एक को कौ कहै अनेक काम लाजत हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

राग केदारा—राघव भावति मोहि बिपिन की बीथिन्ह धवनि। अरुन कंज सरन चरन सोकहरन अंकुस कुलिस केतु अंकित अवनि ॥ १ ॥ सुन्दर स्यामल अंग बसन पीत-

मुरंग कटि निषंग परिकर गिरवनि । कनक कुरंग की
राजे वार सर चाप राजियनयन इत उत चितवनि ॥ २ ॥
सोहत सिर सुघट जटापटल निकर सुमन लता सहित रची
वनवनि । तैसेई खमसोकर रुचिर राजत मुख तैसिये ललित
भृकुटिन्ह की नवनि ॥ ३ ॥ देषत षगनिकर मृग रवनिन्हजुत
थकित विसारि लहं तहं की भवनि । हरि दरसन फल पायो
है ज्ञान विमल जाचत भक्ति मुनि चाहत नवनि ॥ ४ ॥ जिन
को मन मगन भये हैं रस सगुन तिन के लिये सगुन मुक्ति
कवनि । खवनसुपकरनि भवसरितातरनि गायत तुलसिदास
कीरति पवनि ॥ ५ ॥ ५ ॥

राघोइ० रावो की विपिनि वीथिन की धावनि मोको भावति
जेहि धाइये ते शोकहरन लाल कमल सम जो श्रेष्ठ चरण में अंकु
कुलिश ध्वज हैं ताते अंकित अवनि ह्वै गई है ॥ १ ॥ औ सुंदर श्यामल
अंग औ सुंदर पीत रंग को वसन औ कटि में जो तरकस औ पटुका
तें फेट को बांधनि मोको भावति है औ कनकमृग के संग में जो ह
में सर चांप साजे हैं औ कमल सम नैन से जो इत उत देखत हैं त
मोको भावति है ॥ २ ॥ औ सिर में जटासमूह को मुकुट जो सोहत है औ
अनेकन पुष्प लता ते जो बनावरी रची है सो मोको भावनि है औ
तैसेई सुंदर श्रमकण जो मुख पर शोभत औ तैसेई सुंदर जे भृकुटिन
की नवनि है सो मोको भावति है ॥ ३ ॥ खगन औ मृगिनयुत सु
जहां तहां के भ्रमनि विमारि के थकित देखत हैं । हरि के दरसन को
फल विमल ज्ञान पायो है ताते भक्ति जाचत हैं । जेहि भक्ति को मुनि
चाहत हैं ॥ ४ ॥ कदापि कोऊ कहै कि सब ते दुर्लभ ज्ञान है तेहि
पाए पर भक्ति क्यों जाचत हैं ता पर कहत हैं जिन्ह के मन सगुन से
मेम में मगन भए हैं तिन्ह के लेखे निर्विशेष मुक्ति क्या है । अतएव
गीता में कहा । ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति । समस्सर्वेषु
भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् । पवनि कहैं पावनि ॥ ५ ॥ ५ ॥

मोरठ। रघुवर दूरि जाइ मृग मार्‌यो। लषन पुकारि राम हरुए कहि मरतेहुं वयर संभार्‌यो ॥ १ ॥ सुनहु तात कोउ तुमहिं पुकारत प्राननाथ की नाईं। कह्यो लषन हत्यो हरिन कोपि सिय हठि पठये वरिआईं ॥ २ ॥ वस्तु विलोकि कहत तुलसी प्रभु भाई भलो न कीन्हो। मेरे जान जानकी काहू पल छल करि हरि लीन्ही ॥ ६ ॥

रघु०। हरुए धीर अपर पद मु० ॥३। ६ ॥

आरत वचन कहति वैदेही। विलपति भूरि बिसूरि दूरि गये मृगसंग परम सनेही ॥१॥ कहे कटु वचन रेष नाघो मैं तात छमा सो कीजै। देषि वधिकवस राजमरालिनि लषन लाल छिनि लीजै ॥२॥ वन देवनि सिय कहन कहति यों छल करि नीच हरी हौं। गोमरकर सुरधेनु नाथ ज्यौं त्यों पर-हाथ परी हौं ॥३॥ तुलसिदास रघुनाथ नाम धुनि अकनि गीध धुकि धायो। पुचि पुचि जनि डरहि न जैहै नीच मीच हौं आयो ॥४॥ ७ ॥

आरत इ०। भूरि बिसूरि बहु चिंता करि वा बहुत उसास लेइ ॥१॥ २ ॥ वनदेवतिन सो सीता जू श्री राम जू सो यों कहिवे को कहति हैं कि मोको छल करि के नीच ने हरी है। गोमर कहै कसाई तेहि के कर सुरधेनु जैसे परै तैसे परहाथ परी हौं ॥३॥ धुकि कहै वेग करि, नीच मीच हौं आयो नीच जो रावण ताके मृत्यु राम मैं आयो ।४।७

फिरत न बारहिं बार प्रचार्‌यो। चपरि चोंच चंगुल हय हति रथ षंड षंड करि डार्‌यो ॥ १॥ विरथ विकल कियो छीन लीन्हि सिय वन-घायनि अकुलान्यो। तब असि काटि काटि पर पांवर लै प्रभुप्रिया परान्यो ॥२॥ रामकाज-पगराज

आज लखो जियत न जानकि त्यागी। तुलसिदास सुर सिद्ध सराहत धन्य विहग बड भागी ॥ ३।८ ॥

चपरि चटकई करि ॥१॥ पन धायन बहुत धावन से ॥२॥३।८॥

टि०—असि तलवार। मधुमिया सीता। खगराज जटायु।

राग गौरी। हेम को हरिन हनि फिरे रघुकुलमनि लषन ललित कर लिये मृगछाल। आश्रम आवत चले सगुन न भये भले फरकै वाम बाहु लोचन बिसाल ॥ १ ॥ सरित जल मलिन सरनि सूखे नलिन अलिन गुंजत कल कूजे न मराल। कोलिनि कोलकिरात जहं तहं बिलपात बदन बिलोकि जात पग मृग माल ॥ २ ॥ तरु जे जानकी लाये ज्याये हरि करि कपि हेरे न हुंकरि झरे फल न रसाल। जे सुकसारिका पाले मातु ज्यौं ललकि लाले तेऊ न पढत न पढावै मुनिबाल ॥ ३ ॥ समुझि सहमे सुठि प्रिया तो न आई उठि तुलसी विवरन परनटनसाल। चौरे सो सब समाजु कुसल देवौं आजु गइवरि हिये कहैं कोसलपाल॥४॥८॥

हेम को हरिन जो मारीच ताको मारि के रघुकुलमणि फिरे। ताको सुंदर छाल लषनलाल हाथ में लिए। अतएव हनुमन्नाटक लंकाकाण्ड में एही मृगचर्म्म पर रघुनाथ को बैठव लिखे। अङ्के कृत्वोत्तमाङ्गं प्लवगबलपतेः पादमक्षस्य हंतुर्भूमौ विस्तारितायां त्वचि कनकमृगस्याङ्गजेपं निषाद। बाणं रक्षःकुलघ्नं मधुगणितमनुज्ञेनार्पितं तीक्ष्णमक्ष्णोः कोणेनोद्दीक्ष्यमाणस्त्व-दनुजवचने दत्तकर्णोयमास्ते ॥ १ ॥ माल समूह ॥ २ ॥ ज्याए जे हरि करि, कपि, सिंह, दाषी बानर जे जानकी जी जिआए रहीं ॥३॥४॥९॥

आश्रम निरखि भूले द्रुम न फले फूले अलि पग मानो कमडु नहे। मुनिन मुनियधूटी उजरी परनकुटी पंचवटी पहिचानि टाढेई रहे ॥ १ ॥ उठि न सलिल लिये प्रेम प्रभु-

[illegible] [illegible] [illegible] [

न जानकी रापी । २॥ मरतन में रघुवीर विलोके तापस वेष बनाये । चाहत चलन प्रान पांवर बिनु सिय सुधि प्रभुहि सुनाये ॥३॥ बार बार कर मीजि सीसधुनि गीधराज पछिताई । तुलसी प्रभु कृपाल तेहि औसर आइ गये दोउ भाई ॥ ४।१२ ॥

मेरे इ० । अब गीधराज को परिताप कहत हैं कि मेरे एको बात हाथ न लागी नाहक हमार शरीर समाप्त भयो जैसे वन में कल्पलता अग्नि ते जारि जाइ ॥ १ ॥ सब जग जानत रहो कि महाराज दशरथ से औ जटायु से प्रेम है पर सो प्रेम महाराज दशरथ सो न प्रतिपाल्यो। भाव महाराज दशरथ की इच्छा रही कि श्रीराम राजा होहिं तेहि में हम सहाय न किया। नाटके। न मैत्री निर्व्यूढा दशरथनृपे राज्यविषया न वैदेही त्राता हठहरणतेाराक्षसपतेः। नरामस्यास्येन्दुर्नयनविषयोभूत्सुकृति-नोजटायोर्जन्मेदं वितथमभवद्भाग्यरहितम् ॥ याही श्लोक के अनुसार यह पद है ॥ १२ ॥

राघो गीध गोद करि लीन्हो। नयनसरोज सनेह सलिल सुचि मनहुं अर्घजल दीन्हो ॥ १ ॥ सुनहु लषन खगपतिहि मिले बन मैं पितु मरन न जान्यो। सहि न सक्यौं सो कठिन विधाता पाछो पच्छ आजु भान्यो ॥ २ ॥ बहुविधि राम कह्यो तन राषन परमधीर नहि डोल्यो । रोकि प्रेम अवलोकि बदनविधु बचन मनोहर बोल्यो ॥ ३ ॥ तुलसी प्रभु झूठे जीवनलगि समय न धोये लैहौं । जाको नाम मरत मुनि दुर्लभ तुमहिं कहां पुनि पैहौं ॥ ४ ॥ १३ ॥

राघोइ० । खगपति गीधराज, भान्यो तोरयो, अपर पद सु० ॥४॥ ॥१३॥ टिप्पणी—अर्घजल मरनसमय जल देना ।

नीके के जानत रामहियो हौं। प्रनतपाल सेवक कृपाल-

चित पितु पटतरहि दियो हौं ॥ १ ॥ तृजगजोनिगत गीध जनम भरि पाइ कुजन्तु जियो हौं। महाराज सुकृती समाज सब ऊपर पायु कियो हौं ॥ २ ॥ स्रवन वचन मुख नाम रूप चख राम उछंग लियो हौं। तुलसी सो समान बडभागी को कहि सकै वियो हौं ॥ ३॥१४ ॥

नीकेइ०। अपने हृदय में श्रीराम को नीके कै जानत हौं। वा यों कहैं एहि भांति ते नीके कै जानत हौं ॥१॥२॥ श्रवन सों श्रीराम को वचन सुनत हौं औ मुख से नाम लेत हौं नेत्र सो रूप देखत हौं औ देह को श्रीराम गोद में लिए हैं तो मो समान बड़ भागी वियो कहैं दूसरे को को कहि सकैगो ॥ ३॥१४ ॥

मेरे जान तात कछू दिन जीजै। देखिये आपु सुअन-सेवा सुख मोहि पितु को सुख दीजै ॥ १ ॥ दिव्य देह इच्छा जीवन जग विधि मनाइ मांगि लीजै। हरि हर सुजस सुनाय दरस दै लोग कृतारथ कीजै ॥ २ ॥ देखि बदन सुनि वचन अमिय तन राम नयन जल भीजै। बोल्यो बिहग बिहसि रघुवर बलि कहौं सुभाय पतीजै ॥ ३ ॥ मेरे मरिवे सम न चारि फल होंहि तो क्यों न कहीजै। तुलसी प्रभु दियो उतर मौनहीं परीमानो प्रेम सहीजै ॥ ४॥१५ ॥

मेरेइ०। पुत्र की सेवा को सुख आप देखिए औ हम को पिता का सुख दीजिये ॥ १ ॥ विधाता को मनाइ के दिव्य देह औ जग में इच्छाजीवन मांगि लीजिये। हरिहर को जस सुनाय के औ आपन दरशन देइ के लोगन को कृतार्थ कीजिये ॥ २ ॥ रघुनाथ के मुख को देखि कै औ वचनामृत कों सुनि के औ श्रीराम के नयन जल से तन को भिजै कै ॥ ३ ॥ मौने रूप उत्तर श्रीराम दियो मानों प्रेम में सही परी। भाव रघुनाथ ऐसे वक्ता निरुत्तर भए ॥ ४॥१५ ॥

मेरो सुनिये तात संदेसो। सीयहरन जिनि कहिहु पिता सों ह्वैहै अधिक अंदेसो ॥ १ ॥ रावरे पुन्य प्रताप अनल महँ अल्प दिननि रिपु दहिहै। कुलसमेत सुरसभा दसानन समाचार सब कहिहै ॥ २ ॥ सुनि प्रभुवचन आनि उर मूरति चरनकमल सिर नाई। चल्यो नभ सुनत राम कल कीरति अरु निजभाग बडाई ॥३॥ पितु ज्यों गीध क्रिया करि रघुपति अपने धाम पठायो। ऐसे प्रभु बिसारि तुलसी सठ तूं चाहत सुप पायो ॥ ४॥१६ ॥

पद सु० ॥ १६ ॥

राग सूहव। सबरी सोइ उठी फरकत वाम बिलोचन बाहु। सगुन सुहावने सूचत मुनि मन अगम उछाहु ॥ छन्द। मुनि अगम उर आनन्द लोचन सजल तनु पुलकावली। तृन पर्नसाल बनाइ जल भरि कलस फल चाहन चली ॥ मंजुल मनोरथ करति सुमिरति विप्रवर बानी भली। ज्यों कल्पबेलि सकेलि सुकृत सुफूल फूली सुप फली ॥ १ ॥ प्रानप्रिया पाहुने ऐहै राम लषन मेरे आजु। जानत जन जिय की मृदु चित राम गरीबनेवाजु ॥ छन्द ॥ मृदुचित गरीबनेवाजु आजु बिराजिहैं गृह आइ कै। ब्रह्मादि संकर गौरि पूजित पूजिहौं अब जाइ कै ॥ लहि नाथ हौं रघुनाथ बानो पतितपावन पाइ कै। टुहुं ओर लाहु अघाइ तुलसी तीसरेहु गुन गाइ कै ॥ २ ॥ दोना रुचिर रचे पूरन कंद मूल फल फूल। अनुपम अमियहु ते अंबक अवलोकत अनुकूल ॥ छन्द ॥ अनुकूल अंबक अंब ज्यों निज डिंभ हित सब आनि कै। सुंदर सनेहु सुधा सहस जनु सरस राखे

सानि कै ॥ छन भवन छन वाहिर बिलोकति पंथ भू परि-
यानि कै। दोउ भाइ आये सबरि काको प्रेमपनु पहिचानि
कै ॥ ३ ॥ स्रवन सुनत चली आवत देखि लषन रघुराउ ।
सिथिल सनेहु कहे हैं सपनो विधि कैधौं सतिभाउ ॥ छन्द ॥
सतिभाउ कै सपनो निहारि कुमार कोसलराय के । गहे
चरन जे अघहरन नतजन वचन मानस काय के ॥ लघु
भाग भाजन उदधि उमग्यो लाभ सुष चित चाय के। सो
जननि ज्यौं आदरी सानुज राम भूपे भाय के ॥ ४ ॥ प्रेम
पट पांवरे देत सुषर्ष विलोचन वारि । आश्रम लै दिये
आसन पंकज पाय पषारि ॥ छन्द ॥ पद पंकजात पषारि
पूजे पंथस्रम विरहित भये । फल फूल अंकुर मूल धरे
सुधारि भरि दोना नये ॥ प्रभु पात पुलकित गात स्वाद
सराहि आदर जनु जये। फल चारिहूं फल चारि देत पर-
चारि फल सबरी दये ॥ ५ ॥ सुमन वरषि हरषे सुर मुनि
मुदित सराहि सिहात । केहि रुचि केहि छुधा सानुज
मांगि मांगि प्रभु पात ॥ छन्द ॥ प्रभु पात मांगत देति
सबरी राम भोगी याग के। बालक सुमित्रा कौसिला के
पाहुने फल साग के ॥ पुलकत प्रसंसत सिद्ध सिव सनकादि
भाजन भाग के। सुनि समुझि तुलसी जानि रामहिं वस
अमल अनुराग के ॥ ६ ॥ रघुवर अंचद्र उठे सबरी करि
प्रनाम कर जोरि। हौं बलि बलि गई पुरइ मंजु मनोरथ
मोरि ॥ छन्द ॥ पुरई मनोरथ स्वारथहु परमारथहुं पूरन करी।
अब औगुनन की कोठरी करि कृपा मुद मंगल भरी ॥

तापस किरातनि कोल मृदु मूरति मनोहर मन धरी। सिर नाइ आयसु पाइ गवनी परम निधि पालें परी ॥ ७ ॥ सिय सुधि सब कही नप सिप निरपि निरपि दोउ भाइ। देदे प्रदच्छिना करत प्रनाम न प्रेम अघाइ ॥ छन्द ॥ अति प्रेम मानस रापि रामहिं रामधामहिं सो गई। तेहि मातु ज्यों रघुनाथ अपने हाथ जल अंजलि दई ॥ तुलसी भनत सबरी प्रनति रघुवर प्रकृति करुनामई। गावत सुनत समुझत भगति हिय होइ प्रभुपद नित नई ॥ ८॥१७ ॥

इति श्री रामगीतावल्यां आरण्यकाण्डः समाप्तः ।

सबरी इ० । सबरी सोय उठी वा काल में वाम नेत्र औ बाहु फरकत जे ते सोहावने सगुन मुनिमन अगम उछाहु को सूचन करत हैं। मुनिन को जो अगम सो आनन्द उर में है। नेत सजल हैं। तन में रोमांच है ऐसी जो सबरी सो तृन औ परन के गृह को संवारि के अर्थात् झारि बटोरि के औ कलस में जल भरि कै फल लेइवे के अभिलाष से चली। चलत में सुंदर मनोरथ करति है औ विमवर जो मतंग ऋषि तिन की जो भली बानी ताको सुमरति है। जो बानी रूप कल्पवेलि सुकृत बटोरि कै सुंदर फूल फूली रही सो अब सुख रूप फल फली ॥१॥ अब सबरी को मनोरथ कहत हैं। सबरी कहति है। हम नाथ पाइ कै अघाय के लाहु लहब औ श्रीरघुनाथ पतितपावन बाना पाय कै अघाइ कै लाहु लहब यातें दूनो ओर लाभ अघाइ के है औ तुलसी से तीसरो गुन गाइकै अघाय लहु लहब अपर सु० ॥ २ ॥ दोना सुंदर रचे ताको कंद मूल फल फूल ते पूरन किए। ते मूलादि कैसे हैं कि अमृतहु ते अनूप हैं औ अम्बक कहैं नेत्र ता से देखतो में अनुकूल हैं अर्थात् सुंदरो हैं। नेत्रन के प्रिय जो फल हैं जैसे माता अपने बालक के हित आनै तैसे सब आनि के सुंदर सनेह जो है सो हजार गुन अमृत से सरस है मानो तासो सानि राखे। छन भौन छन बाहर भूमि पर हाथ दैकै राह देखति है। सबरी के प्रेम की प्रतिज्ञा पहिचानि के

[illegible] [illegible] [illegible] [

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली—किष्किन्धाकाण्ड ।

मङ्गलाचरण—सोरठा ।

त्यागि बालि बलवान, दीन पीन सुग्रीव कहं ।
मीत कियो भगवान, को कृपाल अस हेतु बिनु ॥ १ ॥

मूल ।

राग केदारा । भूषन बसन बिलोकत सिय के। प्रेमबिबस मन बेपु पुलक तन नीरज नयन नीरभरे पिय के ॥ १ ॥ सकुचत कहत सुमिरि उर उमगत सील सनेह सुगुनगन तिय के । स्वामि दसा लखि लषन सखा कपि पघिले हैं आंच माठ मानो घिय के ॥ २ ॥ सोचत हानि मानि मग गुनि गुनि गये बिबटि फल सकल सुकिय के । बरने यामवन्त तेहि अवसर बचन बिबेक बीर रस बिय के ॥ ३ ॥ धीर बीर सुनि समुझि परसपर बल उपाय उघटत निज हिय के। तुलसिदास यह समउ कहे ते कबि लागत निपट निठुर जड जिय के ॥ ४ ॥ १ ॥

टीका ।

भूषण इ० । ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव ने श्रीजानकी जी को भूषण बसन श्रीराम जी को दिए तेहि बिलोकत मात्र श्रीराम जू को

मन प्रेम के विशेष वस भयो औ तन कंप औ पुलकावलीयुक्त भयो औ कमल नैन में आंसू भरि आए ॥ १ ॥ सखा कपि सुग्रीव और बांदर, माठ मठुका ॥ २ ॥ मन में हानि मानि के गुनि गुनि के सोचत हैं कि सुकिय कहैं सुकृत के सकल फल विघटि कहै बीति गए हैं वीर रस विय के वीर रस के बीज के ॥ ३ ॥ उघटत प्रगट करत ॥४॥१॥

प्रभु कपि नायक बोलि कह्यो है । बरषा गई सरद ऋतु आई अब लौ नहिं सिय सोधु लह्यो है ॥ १ ॥ जा कारन तजि लोकलाज तनु राषि बियोग सह्यो है । ताको तौ कपिराजु आजु लगि कछु न काज निबह्यो है ॥ २ ॥ सुनि सुग्रीव सभीत नमित मुष उतरु न देन चह्यो है । धाइ गये हरि जूथ देषि उर पूरि प्रमोद रह्यो है ॥३॥ पठये बदि बदि अवधि दसहुं दिसि चले बल सबनि गह्यो है । तुलसी सिय लगि भवदधि मानो फिरि हरि चहत मह्यो है ॥ ४॥१९ ॥

इति श्री रामगीतावल्यां किष्किन्धाकाण्डः समाप्तः ।

प्रभु इ० । ॥ १ ॥ २ ॥ हरि वानर ॥ ३ ॥ अवधि बदि बदि पठए अवधि चौपाई रामायण में स्पष्ट है । मास दिवस महं आयेहु भाई । दशो दिशा को चलत भए पराक्रम को सब ने गह्यो है, गोसाईं जी कहत हैं कि जानकी जी के लागि संसार रूप समुद्र को मानो फेर हरि महा चाहत हैं ॥ ४ ॥ २ ॥

इतिश्री रामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्रीसीतारामकृपापात्र श्रीसीतारामीय हरिहरप्रसादकृतौ किष्किन्धाकाण्डः समाप्तः ।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली—सुन्दरकाण्ड ।

मूल ।

राग केदारा—रजायसु राम को जब पायो । गाल मेलि मुद्रिका मुदितमन पवनपूत सिरनायो ॥ १ ॥ भालुनाथ नल नील साथ चले बली बालि को जायो । फरकि सुअंग भये सगुन कहत मानो मग मुद मंगल छायो ॥ २ ॥ देखि बिबरु सुधि पाइ गीध सो सबनि अपनो बलु गायो । सुमिरि राम तकि तरकि तोयनिधि लंक लूक सो आयो ॥ ३ ॥ खोजत घर घर जनु दरिद्रमन फिरत लागि धनु धायो । तुलसी सिय बिलोकि पुलक्यो तनु भूरि भाग भयो भायो ॥ ४ ॥१॥

टीका ।

रजायसु इ० ॥ १ ॥ २ ॥ गायो कहैं तौल्यौ, तरकि कहैं कूदि, लंक लूक सो आयो लंका में लूक सम आयो। भाव लूक उत्पात सूचक होत है ॥ ३ ॥ श्रीहनुमानजू श्रीजानकीजू को घर घर खोजत हैं जैसे दरिद्र को मन धन लागि धायो फिरत है भायो कहैं मन भायो ॥४॥१॥

देखी जानकी जब जाइ । परम धीर समीरसुत के प्रेम उर न समाइ ॥ १ ॥ कृस सरीर सुभाय सोभित लगी उडि उडि धूलि । मनहु मनसिजमोहनी मनि गयो भोरे भूलि ॥२॥

रटति निसिवासर निरंतर राम राजिवनयन। जात निकट न विरहिनी अरि अकनि ताते वयन ॥ ३ ॥ नाथ के गुन-गाथ कहि वापि दई मुदरी डारि। कथा सुनि उठि लई कर-पर रुचिर नाम निहारि ॥ ४ ॥ हृदय हर्ष विषाद अति पति-मुद्रिका पहिचानि। दास तुलसी दसा सो केहि भांति कहै बखानि ॥ ५ ॥ २ ॥

देखी इ० ॥ १ ॥ स्वाभाविक शोभित जो श्रीजानकीजू तिन को कृशित जो शरीर है तामें धूरि उड़ि उड़ि लगी है मानो काम भ्रम से अपने मोहनी मणि को भूलि गयो है ॥ २-॥ राति दिन निरंतर श्रीराम राजिवनैन रटति हैं। तात गरम बानी सुनि के विरहिनी अरि जो वायु सो निकट नहीं जात है। भाव जरि जावे के डर ते ॥३॥ करवर श्रेष्ठ कर में ॥ ४ ॥ ५ ॥ २ ॥

राग सोरठ—बोलि बली मुदरी सानुज कुसल कोसल-पालु। अमिय बचन सुनाइ मेटहि बिरह ज्वालाजालु ॥ १॥ कहति हित अपमान मैं कियो होत हिय सोइ सालु। रोप छमि सुधि करत कबहूं ललित लछिमन लालु ॥२॥ परसपर पति देवरहि का होति चरचा चालु। देवि कहु केहि हेतु बोले बिपुल बानर भालु ॥ ३ ॥ सीलनिधि समरथ सुसाहिब दीनबंधु दयालु। दास तुलसी प्रभुहि काहु न कह्यो मेरो हालु ॥ ४ ॥ ३ ॥

बोलि इ० । श्रीजानकीजू मुदरी से पूछति हैं कि हे मुदरी अनुज-सहित कोशलपाल को कुशल बोलु ॥ १ ॥ लषनलाल के हित कहते में मैं अपमान कियो सो सुमिरि हृदै में साल होत है। पति जो श्रीराम औ देवर जो लखनलाल तिन्ह के आपुस में केहि चाल की चरचा होति है। हे देवि बहुत बानर भालु केहि हेतु बोलाए। संका। बानर भालु के बोलाइबे श्रीजानकीजू कैसे जानी। उत्तर। मुदरी डारते में

गुणन जी कहे रहे। "नाथ के गुनगाथ कहि कपि दियो मुदरी डारि" ॥ ३।४।३ ॥

मदन मनपन हैं कुमक कृपालु कोमलगाउ। सीलसदन मनेहसागर सहज सरल सुभाउ ॥ १ ॥ नींद भूप न देय-रहि परिहरे को पछिताउ। धीर धुर रघुवीर को नहिं सपनेहूं चितचाउ ॥ २ ॥ सोधु बिनु अनुरोधु रिपु को बोधु विहित उपाय। करत हैं सोइ समय साधन फलति बनति बनाउ ॥ ३ ॥ पठै कपि दिसि दसहुं जो प्रभु काज कुटिल न काउ। बोलि लियो हनुमान करि सनमान जानि समाउ ॥४॥ दई हौं संकेत कहि कुसलात सियहि सुनाउ। देखि दुर्ग बिनेपि जानकि जानि रिपु गति आउ ॥ ५ ॥ कियो सीय प्रबोध मुदरी दियो कपिहि लपाउ। पाइ अवसर नाइ सिर तुलसी सगुन गन गाउ ॥ ६ ॥ ४ ॥

सदलइ० । मुदरी की उक्ति कि दलसहित लखनलालसहित कुसल हू कोसलनाथ सो कुशल हैं ॥ १ ॥ देवर जो लपनलाल तिन को न नींद है न भूप है औ छोड़ि के जावे को पछितावे है। भाव मर्म वचन सहि लेते उहां से न जाते तो काहे को दुख भोगते वा दूर जाइक गए नगीचे छप काहे न रहे औ धीरन में अग्रवर्ती जे श्रीरघु-वीर तिन के चित्त में सपनो में आनंद नहीं है ॥ २ ॥ रिपु को खबर भए बिना अनुरोध कहें रोक रहत है अर्थात् कुछ बनत नाहीं तब रिपु बोध में जो विहित उपाय ताको लोक करत हैं सोई उपाय रूप अपन समय पाय के फलति है औ बनाव बनत है एही न्याय के कुमार प्रभु ने रिपु के जानिबे हेतु दसो दिसा में बानरों को पठए। बानर प्रभु के काज में कुटिल कोऊ नहीं हैं। हनुमान में समाई जानि बुलाय लियो पुनि सनमान करि के संकेत की बात कहि के हम को औ कहत भए कि हमारी कुशलात जानकी जी को जाय सुनाओ

औ लंका गढ़ को औ विशेष जानकी जी को देखि कै औ रिपु की पराक्रम जानि कै हमारे ढिग आयो ॥३॥४॥५॥ एहि प्रकार ते सुंदरी ने श्रीजानकी जी को विशेष बोध कियो औ हनुमान को देखाय दियो श्रीहनुमान जू अवसर पाय सिर नाय कै श्रीराम के गुनसमूह कहन लगे ॥ ६॥४ ॥

सुअन समीर को धीर धुरीन बीर बडोइ । देखि गति सिय सुद्रिका की बाल ज्यों दियो रोइ ॥ १ ॥ अकनि कटु-बानी कुटिल की क्रोध बिंध्य बढोइ । सकुचि सम भयो ईस आयसु कलस भव जिय जोइ ॥ २ ॥ बुधि बल साहस परा-क्रम अछत राखे गोइ । सकल साज समाज साधक समउ कह सब कोइ ॥ ३ ॥ उतरि तरु ते नमत पद सकुचात सोचत सोइ । चुके अवसर मनहु सुजनहिं सुजन सनमुख होइ ॥४॥ कहे बचन बिनीति प्रीति प्रतीति नीत निचोइ । सीय सुनि हनुमान जान्यो भली भांति भलोइ ॥५॥ देबि बिन करतूति कहिबो जानिहै लघु लोइ । कहौंगो मुख की समर सरि कालिकारिख धोइ ॥ ६ ॥ कहत कछु नहिं बनत हरि हिय हरष सोक समोइ । कहत मन तुलसीस लंका करौं सघन घमोइ ॥ ७॥ ५ ॥

सुअनइ० । धीरन में अग्रवर्ती बड़ो वीर जो पवन को पूत सो श्रीजानकीजू औ मुद्रिका की कुगति देखि कै जैसे बालक रोवै तैसे रोय दियो ॥ १ ॥ कुटिल रावन की कटुबानी सुनि कै हनुमान जी को क्रोध रूप बिंध्य पर्वत बढ़त भयो पर श्रीराम की आज्ञा रूप अगस्ति को देखि कै सकुचि कै सम है जात भयो ॥ २ ॥ बुद्धि बल साहस पराक्रम के रहते इन सब के छपाय राखे कोई ते कि सकल साज समाज के साधक समय है अस सब कोई कहत हैं ॥ ३ ॥ वृक्ष ते उतरि के श्रीजानकी जू के पद में नमस्कार करत भए औ सो बात

हनुमान औ सोचन भए । भाव जब रावन कटु कहत रहा तब कुछ न कह्यो अवसर के चूके पर मानो सुजन के से सन्मुख सुजन होय ॥ ४ ॥ सीति विश्राम नीति में निचोरि के नम्र वचन बोले श्रीजानकी जी वचन सुनि के हनुमान को जान्यो औ यह विचारयो कि अब कहां भली भांति ते है ॥ ५ ॥ हनुमान जू बोले कि हे देवि बिना अनुमति किए कहिबे ते लोग लघु जानिहैं ताते कालिह समररूपी नदा में शत्रु की करिखा धोइ के तब करौंगो ॥ ६ ॥ हरष, शोक में हृदय मिलि रह्यो है ताते हनुमान जू सो कुछ करत नहीं बनत है । इहां हरष सगुन करि औ शोक दशा देखि । तुलसी के ईश जे हनुमान ते मन में धरत हैं कि लंका में सघन घमोइ करौंगो । भाव अस चौपट करौंगो कि कोई जामैगो । घमोइ को कोऊ देशवाले भंटभांड कोऊ देसवाले घमोइ कोऊ देशवाले फटीला कोऊ देशवाले सत्यानाशी कोऊ देशवाले बंग कहत हैं ॥ ७॥५ ॥

राग केदारा । हौं रघुवंसमनि को दूत । मातु मानु प्रतीति जानकि जानु मारुतपूत ॥ १ ॥ मैं सुनी बातें अमैसी कहि जे निठुर नीच । क्यों न मारे गाल बैठो काल हाटनि बीच ॥ २ ॥ निदरि अरि रघुबीर बल लै जाउं जौं हठि आजु । डरौं आयसुभंग ते अरु बिगरिहै सुरकाजु ॥३॥ बांधि बारिध साधि रिपु दिन चारि में दोउ बीर । मिलहिंगे कपि भालु दल संग जननि उर धरु धीर ॥ ४ ॥ चिंच-पटचया कुसल कहि सीस नायो कीस । सुहृद सेवक नाथ को लखि दई अचल असीस ॥ ४ ॥ भये सीतल स्रवन तन मन सुने बचन पियूष । दास तुलसी रही नयननि दरस ही भूष ॥ ५॥ ६ ॥

हौं इ० ॥ १ ॥ बातें असैली अमर्जाद की बातें काल के मुख में बैठारि है ताके बीच में बैठ्यो है तब क्यों न गाल मारैं । भाव गाल

नहीं मारत है सन्निपात करि जल्पत है ॥ २ ॥ श्रीरघुवीर के बल ते अरि की निरादर करि कै हठि करि जो आप को ले जाउं तो श्रीराम जू की आज्ञाभंग ते डरत हौं औ देवतन को काज बिगरैगो ताते डरत हौं ॥ ३ ॥ इहां चारि दिन अल्प दिन को बोधक है ॥ ४ ॥ चित्रकूट की कथा अर्थात् जयंत की कथा औ श्रीराम की कुशल कहि के हनुमान ने शीस नवाए। चित्रकूट की कथा जो कहे ताको यह भाव कि तुम्हारे हेतु इन्द्र के बेटा की कैसी दुर्दशा किए तब और की कहा चली ॥५॥६॥

तात तोहू सों कहत होति हिये गलानि । मन को प्रथम पनु समुझि अछत तन लखि नई गति भई मति मलानि ॥ १ ॥ प्रिय को वचन परिहस्यो जिय के भरोसे संग चली वन बड़ो लाभु जानि । प्रीत बिरह तो सनेह सरवसु सुत ओसर को चूकियो सरिस न हानि ॥ २ ॥ आरजसुअन के तौ दया दुअवनहु पर मोहि सोच मोते सब विधि नसानि । आपनी भलाई भलो कियो नाथ सब ही को मेरे ही अदिनवस विसरी बानि ॥ ३ ॥ नेम तो पपीहा ही के प्रेम प्यारी मीन ही के तुलसी कहो है नीके हृदय आनि । इतनो कहो सो कहो सोय ज्योंही त्योंही रही प्रीति परि सहो सो न बखानि ॥ ४ ॥ ७ ॥

तात इ० । हे तात तुमहूं से कहत हृदय में गलानि होति है । मन को जो प्रथम पन रह्यो भाव श्रीराम बिनु हम जिअब नाहीं सो तन को विद्यमान समुझि के यह नई गति देखि कै हमारी मति मलान भई ॥ १ ॥ पिय कहत रहे कि तुम घर में रहो तेहि वचन को त्यागो निभरे के भरोसे मे औ बन में बड़ा लाभ जानि के संग चलिबे को सनेह को सरवस जो पीतम तिन को बिरह भयो तब ते सुत अवसर चूकने सरिस हानि नहीं है । भाव बिछुरने शरीर छोड़ि देना रहा । वा "नतिमाबिरह ते सनेह सरवस" पाठ होय तो अस अर्थ करना कि बड़ो

अब बन में जानी कौन न्याय जानी कि प्रीतम के विरह से प्रीतम को अंतर सरबस है। भाव नाते संग चलनो चाहिए सो प्रीतम को विरह जल में भयो ताको हम मरे याते अवसर चूकिबो सरिस हानि नहीं है जात तन त्यागि देना रहा ॥ २ ॥ आजे जो श्रेष्ठ दशरथ महाराज तिन पर कुछ कछु दया दृष्टी पर है। भाव तब जो सरनागत हैं तिन को को करे। सो ते सब बिनसाय गई है याते हम को सोच है आपने भलाई ते नाथ सब को भलो कियो है पर मेरी ही अदिनवश नाथ हूं की भलाई सो बानि बिसरि गई है ॥ ३ ॥ नेम तो पपीहे को ठीक है। भाव वाको प्रीतम मेघ केतनो निरादर करत है ताको नहीं मानत है औ प्यारी मीनी को प्रेम है भाव प्रीतम जो जल तेहि बिनु नहीं जीअत है। नीके हृदय में आनि के जानकी जू ने यह कही है। यतनी कही सो कही जानकी जू ज्यों कै त्यों रही भाव काष्ठवत् है रही। प्रीति की तो सही रही अर्थात् अपनपो भूलि गई पर विधाता सो कुछ न बसान ॥४॥७॥

मातु काहे कौं कहति अति वचन दीन। तव की तुहीं जानति अब को होहिं कहत सब के जिय की जानत प्रभु प्रवीन ॥ १ ॥ ऐसे तो सोचहिं न्याय निठुर नायक रत सुलभ कुरंग पग कमल मीन। करुनानिधान को तो ज्यों ज्यों तनु छीन भयो त्यों त्यों मन भयो तेरे प्रेम मीन ॥ २ ॥ सिय को सनेह रघुवर की दसा सुमिरि पवनपूत देख्यो प्रीतिलोन। तुलसी जन को जननिङ्क प्रबोध कियो समुझि तात जग विधिअधीन ॥ २२॥८ ॥

मातु इ०। हे मातु काहे को अति दीन वचन कहति हौ। तव की तुमहीं जानति हौ। भाव कैसो प्रीति तुम्हारे पै रही औ अब जैसी है जब हम कहत हैं औ सब के जिय की प्रभु प्रवीन जानत हैं। भाव तुम को बिरहिनी जानि क्यों न बिरही होहिंगे ॥ १ ॥ जस तुम सोचति हो तस निठुर नायक में जे रत हैं ते सोचहिं तो न्याय कहैं युक्त हैं जैसे कुरंग, पपीहा, हरिन, कमल, मीन को निठुर नायक दीपसिखा, मेघ,

राग, सूर्य, जल ये सब हैं ते सोचहिं औ करुनानिधान श्रीराम को तो ज्यों ज्यों तन छीन भयो त्यों त्यों तुम्हारे प्रेम में मन पीन भयो ॥२॥ श्रीजानकी जू को नेह औ रघुवर की दशा सुमिरि के जब पवनपूत प्रीति में लीन भयो तब जानकी जू देखि हनुमानजी को प्रबोध कियो कि हे तात विधाता के आधीन जग जानो ॥ ३ ॥ ८ ॥

राग जयतिश्री । कहो कपि कब रघुनाथ कृपा करि हरिहैं निज वियोगसंभव दुख । राजिवनयन मयन अनेक छवि रवि कुल कुमुद सुखद मयंक मुख ॥ १ ॥ विरह अनल सहाय समीर निज तनु जरिबे कहं रही न कछु संक । अति बल जल बरषत दोउ लोचन दिन अरु रजनि रहत येकहि तक ॥ २ ॥ सुदृढ ज्ञान अवलंबि सुनहु सुत राखति प्रान विचारि दहन मत । सगुन रूप लीला विलास सुख सुमिरन करत रहत अंतरगत ॥ ३ ॥ सुनु हनुमंत अनंत बंधु करुना सुभाव सुसील कोमल अति । तुलसिदास एहि त्रास जानि जिय बरु दुख सहौं प्रगट न कहि सकति ॥ ४॥९ ॥

कहो इ० । निज वियोग सम्भव अपने वियोग ते उत्पत्ति ॥ १ ॥ निज स्वास रूप वायु के सहाय युक्त जो विरहानल तामें तन के जरिबे कहं कछु संदेह न रही । पर दिन औ राति एकै तार से दोऊ लोचन सबल जल वर्षत हैं । भाव नैन रूप मेघ जरिबे नहीं देत हैं ॥ २ ॥ हे सुत सुन्दर दृढ़ ज्ञान को अवलम्बन करि के भाव राघो जा को अपनावत हैं ताको त्यागते नहीं एहि ज्ञान के अवलम्बन करि जराइबे के मत ते विचारि के प्रान को राखति हौं औ भीतर सगुन रूप के लीला विलास को सुख सुमिरन करत रहत हौं ॥ ३ ॥ हे हनुमंत लपनलाल भाई कारुण्य सुशील औ अति कोमल हैं एहि त्रास ते प्रगट नहीं सकति हौं भाव तुम जब जाय कहोगे तब विकल होय जाहिंगे ते बरु दुख सहत हौं ॥ ४ ॥ ९ ॥

राग केदारा । कबहुं कपि राघव आवहिंगे । मेरे नयन चकोर प्रीतिवस राकासमिमुष देषरावहिंगे ॥ १ ॥ मधुप मराल मोर चातक है लोचन बहु प्रकार धावहिंगे । अंग अंग छवि भिन्न भिन्न सुष निरषि निरषि तहं तहं छावहिंगे ॥२॥ विरह अगिनि जरि रही लता ज्यों कृपादृष्टि जल पलुहावहिंगे । निजवियोगदुष जानि दयानिधि मधुरवचन कहि समुझावहिंगे ॥ ३ ॥ लोकपालु सुर नाग मनुज सब परे वंदि कब मुकुतावहिंगे । रावनवध रघुनाथ विमल जस नारदादि मुनि जन गावहिंगे ॥ ४ ॥ यह अभिलाष रटनि दिन मेरे राज विभीषन कब पावहिंगे । तुलसिदास प्रभु मोह-जनित भ्रम भेद बुद्धि कब विसरावहिंगे ॥ ५॥१० ॥

कबहुं इ० । हमारे प्रीतिवश नैन रूप चकोर को मुख रूप पूर्ण-चन्द्र को कब देखरावैंगे । राका नाम पूर्णवांसी को है ॥ १ ॥ लोचन जो सो भ्रमर हंस मोर पपीहा है के बहुत प्रकार ते कब धावैंगे औ अंग अंग की छवि में भिन्न भिन्न सुख देखि देखि के तहां तहां कब छाय रहैंगे । भाव भ्रमर है मुख नेत्र कर पद रूप कमलन में औ हंस है के नाभी रूप सर में औ मोर है के गंभीर गिरा रूप गर्जन में औ पपीहा है स्याम शरीर रूप घन में कब छावैंगे ॥ २ ॥ ३ ॥ मुक्तावहिंगे छोड़ावहिंगे ॥ ४ ॥ गोसाईंजी कहत हैं कि जानकीजी कहति हैं कि मधु हमारे मोह जनित भ्रम को अर्थात् कनकमृग विषयक जो भ्रम भयो ताको औ भेद बुद्धि को अर्थात् लक्ष्मणजू में जो आनि भांति की बुद्धि भई ताको कब बिसराइ देहिंगे । भाव यह दूनों दोष हमारे कब भूलि जाहिंगे ॥ ५ ॥ १० ॥

सत्य वचन सुनु मातु जानकी । जन के दुष रघुनाथ दुषित अति सहज प्रकृति करुनानिधान की ॥ १ ॥ तुव

वियोग संभव दारुन दुख विसरि गई महिमा सुवान की। नत कहुं कहं रघुपति सायक रवि तम अनीक कहं जातु-धान की ॥ २ ॥ कहं हम पसु सापामृग चंचल बात कहौं विद्यमान की। कहं हरि सिव अज पुज्य ज्ञान घन नहिं विसरति वह लगनि कान की ॥ ३ ॥ तुव दरसन संदेस सुनि हरि को बहुत भई अवलंब प्रान की। तुलसिदास गुन सुमिरि राम के प्रेममगन नहिं सुधि अपान की। ५॥११ ॥

सत्य वचन इ० ॥ १ ॥ तुम्हारे वियोग ते उत्पन्न जो कठिन दुःख ताते सुंदर जो बान की महिमा सो विसरि गई। नाहीं तो तुम ही कहो कहां रघुपति को शायक सूर्यसम कहां राक्षसों की सेना तमसम ॥२॥ कहां हम पशुन में चंचल बांदर औ कहां विष्णु शिव ब्रह्मा करि के पूज्य ज्ञानस्वरूप श्रीराम। बात कहौं मैं विद्यमान की हमारे पर जो बीती है सो बात कहत हौं जेहि प्रकार ते हमारे कान में लगि बात कहे सो विसरत नाहीं। इहां श्रीराम की अति करुना जनाए। तथा च स्मृतिः। "ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या यस्यांशा लोकसाधकाः। तमादिदेवं श्रीरामं विशुद्ध-म्परमम्भजे" ॥ १ ॥ २ ॥ तुम्हार दर्शन तुम्हार संदेशा सुनि के हम जानत हैं कि श्रीराम को प्रान की बहुत अवलंब भई। हनुमान जी श्री-राम को गुनगन सुमिरि के प्रेम में मगन भये ताते अपनपो भूलि गए ॥ ३ ॥ ११ ॥

राग कान्हरा। रावन जौ मैं राम रन रोषे। को सहि सकै सुरासुर समरथ बिसिष काल दसननि ते चोषे ॥ १ ॥ तपबल भुजबल कै सनेहबल सिव बिरंचि नीकी विधि तोषे। सो फल राज समाज सुअन जन आपुन नास आपने पोषे ॥ २ ॥ तुला पिनाक साहु नृप त्रिभुअन भट बटोरि सब के बल जोषे। परसुराम से सूर सिरोमनि पल में भये पेत के से धोषे ॥ ३ ॥ कालि की बात बालि की सुधि करि

समुझि हिताहित पोलि भरोपे। कह्यो कुमंत्रिन को न मानिये बडी हानि जिय जानि त्रिदोषे। ४॥जासु प्रसाद जन्मि जग पुरुषनि सागर सृजे पने अरु सोपे। तुलसिदास सो स्वामि न सूझ्यो नयन बीस मंदिर केसे मोपे॥ ५॥ १२॥

रावन इ० । अब श्रीहनुमान जी औ रावन को संवाद लिखत हैं॥ १॥ तपबल ते कै भुजबल ते कै सनेहबल ते शिव विरंचि को नीको विधि से प्रसन्न किए, ताको फल राज समाज औ पुत्र सेवक पाए सो आप ने पोषे को आपुहि मति नाशो॥ २॥ राजा जनक रूप साहु ने त्रिभुवन के भट बटोरि के सब के बल को पिनाक रूप तराजू पर जोपे, भाव सब का पलरा उठि गया, श्रीरामहि का पलरा न उठा औ जेहि श्रीराम के आगे सूरशिरोमणि परशुराम से पल में खेत के धोपे से भए, भाव देख ही मात्र के रहि गए॥ ३॥ अब ही बाल की बात कालि की है भाव थोड़े दिन की है ताको सुधि करि के हृदय रूप अरोपा को पट खोलि के हित अहित समुझि कुमंत्रिन को त्रिदोषे जानि अर्थात् कालवश जानि इन को कह्यो न मानिए काहे ते कि बड़ी हानि है॥ ४॥ जेहि के प्रसाद ते जगत में पुरुषं जनम के समुद्र को उत्पन्न किए औ खंदे औ सोखे। समुद्र को सृजे विषयन ने, औ खोदे सगर महाराज के पुत्रों ने, सोखे अगस्ति ने। मोपे कहँ अरोखे॥ ५॥१२॥

राग मारु—जौं हौं प्रभु आयसु लै चलतो। तौ यहि रिसि तोहि सहित दसानन जातुधान दल दलतो॥ १॥ रावन सो रसराज सुभट रस सहित लंक पल पलतो। करि पुट पाक नाकनायक हित घने घने घर घलतो॥ २॥ बड़े समाज लाज भाजन भयो बड़ो काज बिनु हलतो। लंकनाथ रघुनाथ बयर तरु आजु फैलि फुलि फलतो॥ ३॥ काल कर्म दिगपाल सकल लग लाल लाभु करतलतो।

भाव जो तन न छूटा तो कहा प्रेम ॥ ३ ॥ करुणा श्रीजानकी जू की दशा देखि कोप रावण पर लाज जस चाहिए तस न करने को भय बिनु आज्ञा लंका जराइवे को तासो भरयो चरण कमल सिर नाय के मौनहीं कपि गमन कियो यह समय स्नेह को सर्वस्व है औ तुलसी की रसना रूखी है ताही ते गायो परत है। भाव सरस होती तो वाशि जाती ॥ ४॥१५ ॥

राग बसंत—रघुपति देपो आयो आयो हनुमंत। लंकेस नगर पेल्यो बसंत ॥ श्रीरामराजहित सुदिन सोधि। साधो प्रबोधि लांघो पयोधि ॥ १ ॥ सिय पाय पूजि आसिषा पाय। फल अमिय सरिस षाये अघाय ॥ कानन दलि होरी रचि बनाय। हठि तेल बसन बालधि बंधाय ॥ २ ॥ दिय ढोल चले संग लोग लागि। बरजोर दई चहुंओर आगि ॥ आपत आहुति किये जातुधान। लपि लपट भभरि भागे बिमान ॥३॥ नभ तल कौतुक लंका बिलाप। परिनाम पचहिं पातकी पाप ॥ हनुमान हांक सुनि बरष फूल। सुर बार बार बरनहिं लंगूल ॥ ४ ॥ भरि भुअन सकल कल्यान धूम। पुर जारि बारिनिधि बोरि लूम ॥ जानकी तोषि पोषेउ प्रताप। तै पवनसुअन दलि दुअनदाप ॥ ५ ॥ नाचहिं कूदहिं कपि करि बिनोद। पीवत मधु मधुवन मगन मोद ॥ यों कहत लषन गहे पाय आय। मनिसहित मुदित भेंट्यो उठाय ॥६॥ लगे सजन सैन भयो हिय हुलास। जय जय जस गावत तुलसिदास ॥ ७ ॥ १६ ॥

रघुपति इ० ॥ १ ॥ साथी जामवंत आदि ॥ २ ॥ बालधि लंगूर ॥ ३ ॥ आहुति को आपत रूप निसाचरों को किए। भभरि भड़कि परिनाम पचहिं पाप ने पातकी अंत में पचत हैं तो क्यों न लंका में

। सेद ॥ ४ ॥ नृमि नेमुर ॥ ५ ॥ पोष्यो प्रताप लंका जराइ
लंकेस प्रताप को पुष्ट कियो। दुअन दाप कहं दुष्टन को अहंकार ॥६॥
को दृष्टांत। शंका। ए सब लक्ष्मण जी कैसे जाने। उत्तर। सर्व-
ज्ञा करि ॥ ७॥१६ ॥

राग जयतिश्री। सुनहु राम विस्रामधाम हरि जनक-
सुता अति विपति जैसे सहति। हे सौमित्रि बंधु करुना-
निधि मन महु रटति प्रगटहु नहिं कहति ॥ १ ॥ निज पद
नलज विलोक सोकरत नयननि वारि रहत न एक छन।
मनहु नील नीरज समि संभव रवि वियोग दोउ स्रवत सुधा-
कन ॥ २ ॥ बहु राछसी सहित तरु के तर तुम्हरे विरह
निज जन्म बिगोवति। मनहुं दुष्ट इन्द्रिय संकट महं बुद्धि
विवेक उदय मगु जोवति ॥ ३ ॥ सुनि कपिवचन विचारि
हृदय हरि अनपाइनी सदा सो एक मन। तुलसिदास दुष
दुयातीत हरि सोच करत मानहु प्राकृत जन ॥ ४॥१७ ॥

हे सौमित्र बंधो हे करुणानिधि अस जानकी जू मन महं रटति हैं
औ प्रगट नहीं कहति हैं भाव, अति वियोग ते बोलि नहीं सकति हैं
वा राछसन के भय ते ॥ १ ॥ अपने चरणकमल को देखत रहति हैं
नीचे सिर करना एक शोकमुद्रा है औ शोक में रतह हैं औ आंखिन
में आंसु एक छन टिकत नाहीं मानो चंद्रमा ते उत्पन्न जे दोऊ स्याम
रंग के कमल ते सूर्य के वियोग ते सुधाकण स्रवत हैं। इहां दोऊ स्याम
कमल नेत्र हैं। मुख समि है। रवि श्रीराम हैं। सुधाकण आंसू हैं। २॥
तरु के तर में बहुत राक्षसिन के सहित तुम्हारे विरह में आपन जन्म
बिनावति हैं मानो बुद्धि दुष्ट इन्द्रीन के संकट में विवेक उदै की राह
ताकति है। इहां दुष्टेन्द्री राक्षस हैं, बुद्धि श्रीजानकी जू हैं औ विवेक
श्रीराघव हैं ॥३॥ हरि कपि की बातें सुनि कै औ हृदय में अस विचारि
के कि सो जानकी जू एक मन में सदा अनपायनी कहैं नाशरहित

भाव जो तन न छूटा तो कहा प्रेम ॥ ३ ॥ करुणा श्रीजानकी जू
दशा देखि कोप रावण पर लाज जस चाहिए तस न करने को भ
विनु आज्ञा लंका जराइबे को तासो भरयो चरण कमल सिर नाय
मौनहीं कपि गमन कियो यह समय स्नेह को सर्वस्व है औ तुलसी
रसना रूखी है ताही ते गायो परत है। भाव सरस होती तो बाढ़ि जाती
॥ ४॥१५ ॥

राग बसंत—रघुपति देयो आयो आयो हनुमंत। लंकेस
नगर पैल्यो बसंत ॥ श्रीरामराजहित सुदिन सोधि। साधो
प्रबोधि लांघो पयोधि ॥ १ ॥ सिय पाय पूजि आसिषा पाय।
फल अमिय सरिस पाये अघाय ॥ कानन दलि हीरो रचि
बनाय। हठि तेल बसन बालधि बंधाय ॥ २ ॥ दिय ढोल
चले संग लोग लागि। बरजोर दई चहुंओर आगि ॥ आपत
आहुति किये जातुधान। लपि लपट भभरि भागे बिमान ॥३॥
नभ तल कौतुक लंका विलाप। परिनाम पचहिं पातकी
पाप ॥ हनुमान हांक सुनि बरष फूल। सुर बार बार बरनहिं
लंगूल ॥ ४ ॥ भरि भुवन सकल कल्यान धूम। पुर जारि
वारिनिधि बोरि लूम ॥ जानकी तोषि पोषेउ प्रताप। जै
पवनसुअन दलि दुअनदाप ॥ ५ ॥ नाचहिं कूदहिं कपि
करि विनोद। पीवत मधु मधुवन मगन मोद ॥ यों कहत
लषन गहे पाय आय। मनिसहित मुदित भेंट्यो उठाय ॥६॥
लगे सजन सैन भयो हिय हुलास। जय जय जस गावत
तुलसिदास ॥ ७ ॥ १६ ॥

रघुपति इ० ॥ १ ॥ साथी जामवंत आदि ॥ २ ॥ बालधि लंगूर
॥ ३ ॥ आहुति को आपत रूप निसाचरों को किए।
परिनाम पचहिं पाप ने पातकी अंत में पचत हैं तो

मारि के उर पर गिरावति हैं मानो हृदय में विरह के तुरन्त को घाव देखि के धीरज धरि के तकि तकि के तताराति कहँ छीटा देति हैं। अंतर गति हारति भीतर से हारति हैं ॥ ३ ॥ १९ ॥

तुम्हरे बिरह भई गति जौन। चित दै सुनहु रामकरुना-निधि जानौ कछु पै सकौं कहि को न ॥ १ ॥ लोचन नीर कृपन के धन ज्यौं रहत निरंतर लोचन कौन। ता धुनि पगी लाज पिंजरी महं रापि हिये बड़े बधिक हठि मौन ॥२॥ जेहि बाटिका बसति तहं पग मृग तजि तजि भजे पुरातन भौन। स्वास समीर भेंट भई भोरहुं तेहि मगु पगु न धस्यो तिहु पौन ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु दसा सोय की सुप करि कहत होति अतिगौन। दीजे दरस दूरि कीजे दुप हौ तुम आरति आरतदौन ॥ ४ ॥ २० ॥

तुम्हरे इ०। हे करुणानिधि राम तुमरे विरह में जानकी जू की जो गति भई है ताको चित्त दै के सुनहु हम कछु जानत हैं पै कहि नहीं सकत हौं ॥ १ ॥ निरंतर नेत्रन के कोन में नेत्रन को जल रहत है जैसे कृपिन को धन कोने में रहत है। लाजरूपी पिंजरा महं धीरुनि रूपी पक्षिणी को बड़े बधिक रूप मौन ने हठि करि के राखी है ॥ २ ॥ जेहि वाटिका में श्रीजानकी जू बसति हैं तहां ते सब मृग अपना प्राचीन भौन छोड़ि के भजे। भाव शरीर से विरहानल की तपनि जो उठति है ताको न सहि सकी। स्वास औ समीर ते जो भेंट भई तो फेर तेहि मग तीनों समीर शीतल मंद सुगंध पग न धरयो। भाव एक बार काहू भाग से बचि गए फेर जाइबे ते स्वांस डराइ देगो ॥ ३ ॥ हे प्रभु सीय की जो दशा है सो सुप करि कहिबे ते अति गौण होति है दरशन दीजे औ दुप को दूर कीजे काहे ते कि तुम आर्त की आर्ति दायक हौ ॥ ४॥२० ॥

कपि कै सुनि कल कोमल बदन। प्रेमदुसकि मरु गात

भक्ति में स्थित हैं। गोसाईं जी कहत हैं कि दुख सुख ते रहित जो हरि सो प्राकृत जन सम शोच करत हैं ॥ ४।१७ ।

राग केदारा—रघुकुलतिलक वियोग तिहारे। मैं देखी जब जाइ जानकी मनहुं विरहमूरति मनमारे ॥ १ ॥ चित्र से नैन भरु गढे से चरन कर मढे से स्रवन नहि सुनति सु कारे। रसना रटनि नाम कर सिर चिर रहै नित निजपद कमल निहारे ॥ २ ॥ दरसन आस लालसा मन महं राखे प्रभुध्यान प्रान रखवारे। तुलसिदास पूजति चिनटा नीके रावरे गुनगन सुमन सवारे ॥ ३ ॥ १८ ॥

रघुकुल इ०। मानो विरह की मूरति हैं ताहू में उदास ॥ १ ॥ तसवीर के नेत्र सम नेत्र हैं। भाव अचल है रहे हैं औ गढ़े से चरन कर हैं। भाव चेष्टा रहित हैं। मूदे सम कान हैं। ताते धीरे से को पुकारे से भी नहीं सुनति हैं। जीभ ते नाम को रटति हैं औ बहुत दे तक माथ पर हाथ धरे रहति हैं औ अपने चरणकमल को सदा निहारे रहति हैं ॥ २ ॥ आप के दर्शन की आशा औ लालसा मन में राखे हैं। ताते प्राण के रक्षा करनिहारो प्रभु को ध्यान राखे हैं औ रावरे गुनगन रूप संवारे भए फूल ते चुनटा नीके पूजति हैं ॥ ३ ॥ १८ ॥

अतिहिं अधिक दरसन की आरति। रामवियोग असोक विटपतर सीय निमेष कल्पसम टारति ॥ १ ॥ वार वार वर वारिज लोचन भरि भरि बरत वारि उर ढारति। मनहु विरह के सद्य घाय हियें लखि तकि तकि धरि धीर ततारति ॥ २ ॥ तुलसिदास यद्यपि निसिवासर छन छन प्रभु मूरतिहि निहारति। मिटति न दुसह तापतउ तनु की यह विचारि अंतरगति हारति ॥ ३ ॥ १९ ॥

आति इ० ॥ १ ॥ वार वार श्रेष्ठ कमल लोचन में गरम जल भरि

[illegible] तुम्हरे बिरह भई गति दीन । चित दै सुनहु रामकरुना-निधि जानौ हनू पै सबहीं कहि दीन ॥ १ ॥ लोचन नीर कृपन के धन ज्यों रहत निरंतर लोचन कौन । ता धुनि पंछी लाज पिंजरी मधे राखि दिये घटि बधिक हठि मौन ॥२॥ जेहि बाटिका बसति तहँ खग मृग तजि तजि भजे पुरातन भौन । स्वास समीर भेंट भई भोरहुं तेहि मग पगु न धर्यो तिहु पौन ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु दसा सीय की सुख करि कहत होति अतिगौन । दीजै दरस दूरि कीजै दुख जौ तुम आरति आरतदौन ॥ ४ ॥ २० ॥

तुम्हरे १० । हे करुणानिधि राम तुम्हरे बिरह में जानकी जू की जो गति भई है ताको चित दै के सुनहु हम कछु जानत हैं पै कहि नहीं सकत हौं ॥ १ ॥ निरंतर नेयन के कोन में नेत्रन को जल रहत है जैसे कृपिन को धन कोने में रहत है । लाजरूपी पिंजरा महं हाथुनि रूपी पक्षिणी को बड़े बधिक रूप मौन ने हठि करि के राखी है ॥ २ ॥ जेहि बाटिका में श्रीजानकी जू बसति हैं तहां ते खग मृग अपना मार्चीन भौन छोड़ि के भजे । भाव शरीर से बिरहानल की तपनि जो उठति है ताको न सहि सकी । स्वास औ समीर ते जो भूलीउ के भेट भई तो फेर तेहि मग तीनों समीर शीतल मंद सुगंध पग न धरयो । भाव एक बार काहू भाग से बचि गए फेर जाइबे ते स्वांस जलाइ देगो ॥ ३ ॥ हे प्रभु सीय की जो दशा है सो मुख करि कहिबे ते अति गौण होति है दरशन दीजे औ दुख को दूर कीजे काहे ते कि तुम आर्त की आर्ति दाहक हौ ॥ ४॥२०॥

कपि के सुनि कल कोमल वयन । प्रेमपुलकि सब गात

सिथिल भये भरे सलिल सरसीरुहनयन ॥ १ ॥ सियवियोग-
सागर नागर मनु बूडन लग्यो सहित चितचयन । लही
नाव पवनजप्रसन्नता वरवस तहां गह्यो गुनमयन ॥ २ ॥
सकत न बूझि कुसल बूझे बिनु गिरा विपुल व्याकुल उर
अयन । ज्यौं कुलीन सुचि सुमति वियोगिनि सनमुष सहै
बिरह सर पयन ॥ ३ ॥ धरि धरि धीर बीर कोसलपति किये
यत्न सबै उतरु न दयन । तुलसिदास प्रभु सपा अनुज रै
सयनहिं कह्यो चलहु सजि सयन ॥ ४ ॥ २१ ॥

कपि इ० ॥ १ ॥ श्री जानकी जू के वियोग रूपी समुद्र में श्रीराम
जू के मन जो नागर सो अपने चित्त के आनन्दसहित बूडन लग्यो
तहां पवनसुत की प्रसन्नता रूप नौका लही पर तहऊं वरवस ते काम
ने गुन को गह्यो । भाव मन को खीच्यो पवनजप्रसन्नता को नऊका
कहिवे को यह भाव कि इन की प्रसन्नता ते जानि परत है शीघ्र रावण
जीत्यो जायगो ॥ २ ॥ श्रीराम कुशल नहीं बूझि सकत हैं औ कुशल
बूझे बिना उर रूप घर में बानी अति व्याकुल है । जैसे कुलीन पवित्र
सुंदर मतिवाली वियोगिनी नायिका विरह को चोखो बान सन्मुख सहै
है । भाव कुछ उपाय नहीं करि सकति है ॥ ३ ॥ ४ ॥ २१ ॥

राग मारू । जब रघुवीर पयानो कीन्हो । कुसित सिंधु
डगमगत महीधर सजि सारंग कर लीन्हो ॥ १ ॥ सुनि कठोर
टंकोर घोर अति चौंके विधि त्रिपुरारि । घटापटल ते चली
सरसरी सकत न संभु संभारि ॥ २ ॥ भये विकल दिगपाल
सकल भय भरे भुवन दस चारि । परभर लंक ससंक दसा-
नन गर्भ स्रवहिं अरिनारि ॥ ३ ॥ कटकटात भट भालु
विकट मर्कट करि केहरिनाद । कूदत करि रघुनाथ सपथ
उपरीउपरा बढ़ि बाद ॥ ४ ॥ गिरि तरु धर नख मुख कराल

द कालहु करत बिषाद। चले तिस दिसि निसिभरि धरु धरु कहि को बराक मनुजाद ॥ ५ ॥ पवन पंगु पावक पतंग मनि टुरि गए थकि बिमान। जाचत सुर निमेष सुरनायक नयन भार अकुलान ॥ ६ ॥ गये पुरि सर धूरि भूरि भय थल जलधि समान। नभ निसान हनुमान हाँक सुनि समुझत कोउ न अपान ॥ ७ ॥ दिग्गज कमठ कोल सहसानन धरत धरनि धरि धीर। बारहिं बार असरपत करपत करकैं परी सरीर ॥ ८ ॥ चली चमू चहुं ओर सोर कछु बनै न बरनत भीर। किलकिलात कसमसत कोलाहल होत नीरनिधितीर ॥ ९ ॥ जातुधान पति जानि कालबस मिले बिभीषन आइ। सरनागतपालक कृपाल कियो तिलक लियो अपनाइ ॥ १० ॥ कौतुक ही बारिधि बंधाइ उतरे सुबेलतट जाइ। तुलसिदास गढ़ देखि फिरे कपि प्रभु आगमन सुनाइ ॥ ११ ॥ २२ ॥

जब १० । क्षुभित कहँ चलायमान ॥ १ । २ ॥ ३ ॥ केहरिनाद सिंहनाद उपरिउपरी चढ़ा चढ़ी। ४। धरे धीरज किए, रद दांत, बराक तुच्छ, मनुजाद राक्षस ॥५। वायु बंद है गयो, अग्नि सूर्य चन्द्रमा सब छिपि गए, विमान थकि गए, देवता निमेष जाचत भए, औ इन्द्र नैनन के भार ते अकुलाय उठे। भाव बहु नेत्रन में धूरि परी जाते ।६। धूरि से तलाव पूरि गए, परवत औ थल सब समुद्र के समान है गए। भाव चरनन के आघात से आकाश में नगारा औ हनुमान जू को हाँक सुनि के कोऊ अपनपो नहीं सम्हारत है। अर्थात् देहाध्यास रहित भए ॥ ७ ॥ दिग्गज कमठ वाराह शेष धीर धरि के भूमि को धरत हैं औ शरीर में कड़कैं परी है ताते बारंबार आसपसुक होइ खींचत हैं। अर्थात् शरीर को सीधा करत हैं ॥ ८ ॥ कसमसत एक में एक घिसि गए हैं ताते ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ । २२ ॥

राग असावरी । आए दूत देखि सुनि-सोच-सठ मन में। बाहिर बजावै गाल भालु कपि कालबस मोसे बीर सो चहत जीत्यो रारि रन में ॥ १ ॥ राम छाम लरिका लषन बालिबाल कहि घालि को गनत रिच्छ जल ज्यों न घन में। काज को न कपिराज कायर कपिसमाज मेरे अनुमान हनुमान हरि गन में ॥ २ ॥ समय सयानी रानी मृदुबानी कहैं पिय पावक न होहि जातुधानबेनुबन में । तुलसी जानकी दिये स्वामी सों सनेह किये कुसल न तरु सब छैहै छार छन में ॥ ३॥२३ ॥

आए इ० ॥ १ ॥ छाम कहैं दुर्बल, बालिबालक अंगद, जल ज्यों न घन में जैसे बेजल को बादर बेगनती को होत है । हरिगन बानर को समूह ॥ २ ॥ राक्षस रूप जो बांस का बन है तामें अग्नि मति होहिं ॥ ३ ॥ २३ ॥

आपनी आपनी भांति सब काहू कही है । मंदोदरी महोदर मालिवान महामति राजनीतिपाहुंचि जहां लो जाकी रही है ॥ १ ॥ महामद अंध दसकंध न करत कान मीचुबस नीचु हठि कुगहनि गही है । हंसि कहै सचिव सयानी मों सो यों कहत चहत मेरु उडन बडो बयार बही है ॥२॥ भालु नर बानर अहार निशचरनि को सोऊ नृप बालकनि मांगो धारि लही है । देखो काल कौतुक पिपीलकनि पंख लागे भाग मेरे लोगनि के भई चित चही है ॥ ३ ॥ तोसो न तिलोक आजु साहस समाजु साजु महाराजु आयसु भो जोई सोई सही है । तुलसी प्रनाम कै बिभीषन बिनीति कहै प्यास बैरे ताल कपि केलि लंका दही है ॥ ४॥२४ ॥

आपनी इ० । धारि कहैं फौज अपर पद मु० ॥ ४ ॥ २४ ॥

दूसरो न देवियत साहिब सम रामै। वेदज्ञ पुरान कोविद विरतरत जाको जसु सुनत गावत गुन सामै ॥ माया जीव जग जाल सुभाव करम काल सब नामकु सब मै सब जामै। विधि से करनिहार हरि जाननिहार हर से हरनिहार जपै जाके नामै ॥ २ ॥ सोई बेष जानि जन की बिनती मानि मतो नाथ सोई जाते परिनामै। सुभटसिरोमनि कुठार पानि सारिपेहुं की लपाई इहां किये सुभ सामै ॥ ३ ॥ बचनविभूषन पन बचन सुनि लागें दुख दूषन से दाहिनेउ बामै। तुलसी हुमकि हिये हन्यो लात भले तात चल्यो सुरतरु तजि घोर घामै ॥ ४॥२५ ॥

दूसरी इ० । कोविद पंडित, विरतरत वैराग्यरत ॥ १ ॥ सासकु शासनकर्त्ता ॥ २ ॥ सुभटन में शिरोमणि परशुराम ऐसहुं देखि औ के श्रीराम से शुभ जानिकै सामे किए अर्थात् मिलाप किए ॥३॥ बचन को विशेष भूषनकर्त्ता जो विभीषन का बचन है ताको सुनि कै दाहिने बचन है पर दुख औ दूषन समान बाम लगे वा दाहिने औ बैठे रहे तिन के दुख दूषन समान लगे। गोसाईं जी कहत हैं हुमकि करि के हृदय में लात मारयो, हे तात भला किए अब काहे घोर घाम मय जो रावन है ताको तजि के सुरतरुसमान जो श्रीराम तिन को ताकि के चल्यो ॥ ४ ॥ २५ ॥

जाय माय पाय परि जथा सो सुनाई है। समाधान बोलि विभीषन को बार बार कहा भयो तात लात मारे बड़ो भाई है ॥ १ ॥ साहिब पितुसमान भ्रातुमान को निबाह ताके अपमान तेरो बड़ीये बड़ाई है। गरल समानि अनमानि सिय देति रोष किये दोष मई मनुजे

भलाई है ॥ ३ ॥ द्रुहौं ते विमुख भये राम की सरन गये भलो मेरु लोकु राखे निपट निकाई है । मातुपग सोस नाई तुलसी असीस पाइ चले भले सगुन कहत मन भाई है ॥ ४॥२६ ॥

जाय इ० । विभीषन अपने माता को ढिग जाय के पाँय परि के लात मारिबे की कथा सुनाई ॥ १ ॥ एक तो साहिब है, दूसरे पितुसमान है। अर्थात् बड़ा भाई है और राक्षसन को राजा है ताके अपमान ते तेरी बडिए बड़ाई है । विभीषन को गलानि में गरत जानि के माता सनमानि के शिक्षा देति हैं कि समुझे ते क्रोध किए में दोष है और सहे में भलाई है ॥ २ ॥ यद्यपि रावन कहां ते विमुख भए में औ श्रीराम जू के शरन गए में भलो है पर तथापि किंचित् लोक राखे में निपट सुंदराई है । भाव लोग कहैंगे कि संकटसमय में भाई को छोड़ दियो ॥ ४॥२६ ॥

भाई कौसो करौं डरौं कठिन कुफेरैं । सुसंत संकट पर्यो जातु है गलानि गर्यो कृपानिधि को मिलो पै मिलि कै कुबेरैं ॥ १ ॥ जाय गहे पाय धाय धनद उठाय भेट्यो समाचार पाय पोच सोचत सुमेरैं । तहँई मिले महेस दियो हित उपदेस राम की सरन जाहि सुदिन न हेरैं ॥ २ ॥ जाको नाम कुंभज कलेस सिंधु सोखिबे को मेरो कह्यो मानि तात बांधे जनि बेरैं । तुलसी मुदित चले पाये हैं सगुन भले रंक लूटिबे को मानो मनिगन ढेरैं ॥ ३ ॥२७ ॥

भाई इ० । विभीषन अपने मन में विचार करत हैं कि हे भाई हम कैसा करैं कठिन कुफेरैं हैं । धर्म्म संकट में परत भए । भाव राम विरोधी कहां न रहना चाहिए औ त्यागिबे में लोकोपहास, कि आपदकाल में छोड़ि भागे एहि ग्लानि में गरे जात हैं । फेर यह निश्चै कियो कि कुबेर से मिलि करि के फेर श्रीरघुनाथ सो मिलो ॥ १ ॥ फेर कुबेर के ढिग

विधाता ने भली भांति बात राखी ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ कृपासिंधु शूलपा वे परिश्रम अनुकूल भए। मुद को मूल रूप जो मार्ग ताको जनाय सनमानि कै दीनजन जानि कै अपनाय लियो ॥ ५ ॥ स्वारथ परमारथ दोऊ हस्तगत भयो औ श्रमपथ बीति गयो यह सपना कैधौं सौतुख है कि सुख रूप धान को देवता सीचत औ निराय दे हैं। निराइवे सोहिवे को कहत हैं ॥ १ ॥ गुरु गौरीश मिले अब सी सीतापति औ हित हनुमान ते जाय के मिलि हौं अब हम को को करिवे को है। वांछित की सीमा अघाय कै मिली ॥७॥ मैं जो लालच सो लटि के ललचाइ के को जानै कहां जाय मरतो अब अभै रू नगारा बजाय कै श्रीरघुवीर को भजि हौं ॥ ८ ॥ २८ ॥

पदपदुम गरीब निवाज के। देपिहौं आइ पाइ लोचन फल हित सुर साधु समाज के ॥ १ ॥ गई बहोर ओर निर्वा इक साजक बिगरे साज के। संवरीसुपद गीधगतिदायक समन सोक कपिराज के ॥ २ ॥ आरति हरन सरन समरथ सब दिन अपने की लाज के। तुलसी याहि कहत नतपालक मोसे निपट निकाज के ॥ ३ ॥ ४६ ॥

पद ३० ॥१॥ जो बात गई है ताको बहोरनिहारे हैं औ अन्तलौं निर्वाह करनिहारे हैं औ बिगरे भए साज को साजनिहारे हैं ॥ २ ॥ आरति के हरनिहारे हैं औ सब दिन में अपने भक्त की लाज के समर्थ सरन कहँ रक्षक हैं। "शरणं गृहरक्षित्रोरित्यमरः"। नतपालक शरणागत रक्षक ॥ ३ ॥ २९ ॥

महाराज राम पहिं जाउंगी। सुप स्वारथ परिहरि करिहौं सोइ जो साहिबहि सोहाउंगो ॥ १ ॥ सरनागत मुनि बेगि बोलिहैं हौं निपटहिं सकुचाउंगो। राम गरीब निवाज निबाहि हैं जानिहैं ठाकुर ठाउंगो ॥ २ ॥ धरि

गाय हाय माथे एहि ते केहि लाभ अघाउंगो। सपनो सौ
पनो न कछू लपि लघु लालच न लोभाउंगो ॥३॥ काहिहौं
रोटिहा रावरो बिन मोलही बिकाउंगो। तुलसी पट
जतरो ओढ़िहौं उबरी जूठन पाउंगो ॥ ४ ॥ ३० ॥

टी० । पद ३० ॥१॥ जानि हैं ठाकुर ठाउंगो ठांव कहैं स्थान गयो
ठाकुर मोको जानि हैं अर्थात् स्थानभ्रष्ट ॥२॥ लघु लालच लौकिक
इत्यादि ॥ ३ ॥ ४ ॥ ३० ॥

आइ सचिव बिभीषन के कही। कृपासिंधु दसकंध बंधु
तव चरन सरन आयो सही ॥ १ ॥ बिषम बिषाद बारिनिधि
बूड़त थाह कपीस कथा लही। गये दुख दोष देखि पद पंकज
सब न साध एकौ रही ॥ २ ॥ सिथिल सनेह सराहत मग
सिव नीकि निकाई निरबही। तुलसी मुदित दूत भए मनहुं
अमिय लाहु मागत मही ॥ ३॥३१ ॥

आय ३० । विभीषन के सचिव ने श्री रामचंद्र से आइ के कही ॥१॥
दारुण विषाद रूप समुद्र में बूड़त रहे तहां सुग्रीव की कथा समुझि थाह
ही, भाव बालि के त्रास से सुग्रीव के उबारे तो हमहूं को उबारेंगे ॥२॥
राम ते सिख लेा जो नीकी निकाई निबही है ताको सराहन है औ
सनेह ते सिथिल हैं । दूत हर्षित होत भयो, मानो छांछ को मागत रहे
सो अमृत पाए । इहां छांछ सनेसा है औ अमृत सुंदराई को देखिबो
॥ ३ ॥ ३१ ॥ टि०—पद पंकज देखतही सभी दुख और दोष दूर
भए और एक भी वासना (सोध) बाकी न रही सब पूरी होगई ।

बिनती सुनि प्रभु मुदित भए । भीतहरन कपिराज
हित नय बोलि बालिनंदन लये ॥ १ ॥ बूझिऐ कहा रघुराइ
आइ नय धर्ममहित उतर दये। बली बंधु ताको बिगोइ
सब बिधि सोइ परबस भये ॥२॥ बांह पगार हार हठि मर्कट

न कबहूं फिरि गये। तुलसी असरन-सरन स्वामि के विरद विराजत नित नये ॥ ३॥३२ ॥

विनती ॥ १ ॥ श्रीरामजू कहे तुम सब के बूझिवे में कहा है, अस आज्ञा पाइ के नीति धर्म्म सहित उत्तर देत भए। तेहि रावण बली को बंधु है जेहि ने विशेष मोह के वश वैर को बीज बोए। एह नीति कहे अब धर्म्म कहत हैं ॥ २ ॥ हे बांह पगार तेरे द्वार ते भय सहित जे पुरुष ते कबहूं फिरि न गए। स्वामी के अशरण शरण जे विरद हैं ते नित्य नए विराजत हैं। पगार नाम यद्यपि भित्ति का है पर इहां प्रबल के अर्थ में जानना ॥ ३ ॥ ३२ ॥

हिय बिहसि कहत हनुमान सों। सुमति साधु सुचि सुहृद विभीषन बूझि परत अनुमान सों ॥ १ ॥ हौं बलि जाउं और को जानै कहि कृपानिधान सों। छली न छोड़ स्वामि सनमुख ज्यों तिमिर सातहयजान सों ॥ २ ॥ खोटो खरो सभीत पालिये सो सनेह सनमान सों। तुलसी प्रभु कीबो जो भलो सोइ बूझि सरासन बान सों ॥ ३॥३३ ॥

हिय इ० ॥ १ ॥ कृपानिधान सो हनुमान जू यह बात कही कि मैं बलि जाउं। आप छोड़ि और अस को जानै छली पुरुष स्वामी के सन्मुख नहीं होत है, सातहयजान जो सूर्य तिन्ह सो जैसे अंधकार सन्मुख नहीं होत है ॥ २ ॥ खोटो है वा खरो है पर सो विभीषण सभीत है तातें सनेहयुक्त सन्मान सो पालिये। शरासन औ बाण सो बूझि कहैं जानि के जो आप करब सो भलो है। भाव शरासन टेढ़ा औ बाण सूधा आप दोऊ को राखे हैं। वा शरासन बाण सो बूझि कै आप जो करब सो भला है। भाव दूसरे से बूझिवे को क्या प्रयोजन है। आप के पराक्रम को को भेद ले सकैगो ॥ ३ ॥ ३३ ॥

सांचेहु विभीषन आइ है। बूझत बिहसि कृपालु लषन सुनि कहत सकुचि सिर नाइ है ॥ १ ॥ ऐहै कहां नाथ

को है छो क्यों करि छाति बनाइ है। रावनरिपुहि राखि
छहा बिनु को त्रिभुवन पति पाइ है ॥ २ ॥ प्रभु प्रसन्न सब-
सभा सराहत दूतबचन मन भाइ है। तुलसी बोलिय बेगि
लषन सों भइ महाराज रजाइ है ॥ ३ ॥ ३४ ॥

सोवेहु इ० लषनलाल सों श्रीरामकृपालु बिभीषन के कृपन हैं कि
सोवेहु बिभीषण आवैगो। यह सुनि सिर नवाइ सकुचि के लषनलाल
रात हैं ॥ १ ॥ हे नाथ आवैगो कहा अर्थात् भविष्य आप काहे को
रात हैं बिभीषण आइ गयो है औ आप के इहां बनाइ के क्यों कहि
जा सकत है आप के बिना रावण के रिपु को राखि कै ऐसो को
त्रिभुवन में है जो प्रतिष्ठा पावैगो ॥ २ ॥ प्रभु प्रसन्न हैं सब सभा सरा-
ति है औ यह बचन बिभीषण के दूत के मन में भावत भयो। लषन-
लाल सों श्रीमहाराज रामचन्द्र की आज्ञा भई कि बिभीषण को शीघ्र
बुलाय लीजिये ॥ ३ ॥ ३४ ॥

चले लेन लषन हनुमान हैं। मिले मुदित बूझि कुसल
रम्पर सकुचत करि सनमान हैं ॥ १ ॥ भयो रजायसु पाउं
धारिये बोलत कृपानिधान हैं। दूरि तें दीनबंधु देखे जनु देत
भय बरदान हैं ॥२॥ सील सहस दिमभानु तेज मत कोटि
मनहुं के भानु हैं। भक्तनि को हित कोटि मातु पितु अरिन्ह
को कोटि कृसानु हैं ॥ ३ ॥ जनगुन रज गिरि गनि सकुचत
ज गुनगिरि रज परवान हैं। बाहुं पगार बोल को अविचलु
करत गुनगान हैं ॥४॥ चरचा चलति बिभीषन की सीद
त सुचितु दै कान हैं। चाहचाप तूनीर तामरस करनि
रत बान हैं ॥ ५ ॥ हरषत सुर बरषत प्रसून सुभ सगुन
त कल्यान हैं। तुलसी ते कृतकृत्य जे सुमिरत समय
षन ध्यान हैं ॥ ६ ॥ ३५ ॥

चले इ० । लवाइवे के हेतु लषनलाल औ हनुमान जू चले हैं, जब विभीषण के ढिग गए तब हर्षित परस्पर मिले औ कुशल वृष्टि के सन्मान करि के सकुचत हैं । सकुचने को यह भाव जस सन्मान किया चाही तस नाहीं बनत है वा करि के अर्थ से जानना अर्थात् सन्मान से विभीषण जू सकुचत हैं ॥ १॥२ ॥ प्रभु सहस्र चन्द्र सम शीलवान हैं, शतकोटि भानुहू के भानु सम तेजस्वी हैं, कृशानु कहैं अग्नि ॥ ३ ॥ जन को गुण जो रज सम है ताको गिरि सम गनि के सकुचत हैं औ आपन गुण जो गिरि सम है ताको रज सम मानत हैं ॥ ४ ॥ सुन्दर चाप औ तरकस है कर कमलनि ते बाण सुधारत हैं ॥५॥६॥३५॥

रामहिं करत प्रनाम निहारि कै । उठे उमगि आनंद प्रेम परिपूरन विरद विचारि कै ॥ १ ॥ भयो विदेह विभीषन उत इत प्रभु अपनपो विसारि कै । भली भांति भावती भरत ज्यों भेट्यो भुजा पसारि कै ॥ २ ॥ सादर सबहि मिलाइ समाजहि लिपट निकट बैठारि कै । बूझत कुसल प्रेम सप्रेम अपनाइ भरोसों भारि कै ॥ ३ ॥ नाथ कुसल कल्यान सुमंगल विधि सुष सकल सुधारि कै । देत लेत जे नाम रावरो विनय करत सुषचारि कै ॥ ४ ॥ जो मूरत सपने न विलोकत मुनि महेस मन मारि कै । तुलसी तेहि हीं लियो अंक भरि कहत कछु न सँवारि कै ॥ ५ ॥ ३६ ॥

रामहि इ० । विरुद विचारि कै अशरण के शरण हम हैं यह बान विचारि कै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ हे नाथ जे रावरो नाम लेत हैं तिन्है ब्रह्मा कुशल कल्याण सुमंगल सकल सुख सुधारि कै देत हैं औ चारि मुख से विनय करत हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३६ ॥

करुनाकर की करुना भई । मिटी मीचु लहि लंक संक गढ़ काहू सों न पुनिस पई ॥ १ ॥ दसमुष तज्यो दूध मापी ज्यों आपु काढ़ि साढ़ी लई । भव भूषन सोइ

किये बिभीषनु मुद मंगल महिमा भई ॥ २ ॥ बिधि हरि-हर मुनि सिद्ध सराहत सुदित देव दुंदुभि दई । बारहिं बार सुमन बरषत दिय हरषत कपि जय जय लई ॥३॥ कौसिक मिला जनक संकट हरि भृगुपति को टारी टई । पग मृग खग निसाचर सब को पूंजी बिनु बाढी मई ॥ ४ ॥ जुग जुग कोटि कोटि करतब करनी न कछु बरनी नई । राम भजन महिमा तुलसी दिय तुलसीहू की बनि गई ॥५॥३७॥

करुणा इ० । करुणाकर जो श्रीराघव तिन्ह की करुणा होति भो बिभीषण की मृत्यु मिटी लंका मिली औ सब शंका गई औ काहू सो सुनुस औ इर्षा न भई । भाव बिना परिश्रम ई सब बात भई ॥१॥ दशमुख ने बिभीषण को दृग के माखी सम तज्यो औ आप साढ़ी सब लंका के सुख को लई सोइ बिभीषण को श्रीराम ने भव जो संसार ताको भूषण औ मुद मंगल महिमा मई कियो ॥ २ ॥ ३ ॥ बिश्वामित्र अहल्या औ जनक को संकट हरि के परशुराम की टई कहें गर्व टारे औ खग मृग भिल्ल औ निशाचर इन्ह सब की बिन पूंजी की बढ़ती बाढ़ी ॥ ४ ॥ युगयुग में कोटि कोटि श्रीराम के करतब हैं कछु नई करनी नहीं बरनी गई ॥ ५॥३७ ॥

मंजुल मूरति मंगल मई । भयो बिसोक बिलोक बिभीषनु नेह देह सुधि सींव गई ॥ १ ॥ उठि दाहिनी ओर तें सन्मुख सुपट मागि बैठक लई । नय सिय निरखि निरखि रुप पावत भावत कछु कछु ऐ भई ॥ २ ॥ बार कोटि सिर काटि साटि लटि रावन संकर पै लई । सोइ लंका लखि अतिथि अनवसर राम तृनासन ज्यौ दई ॥३॥ प्रीति प्रतीति रीति सोभा सरि थाहत जहं जहं तहं घई । बाहु बली बा नेत बोल को बीर बिरद बिजई नई ॥४॥ यो दयालु दूसरो

दुनी जेहि जरनि दीन हिय की हई। तुलसी काको नाम जपत जग जगती जामति बिनु बई ॥ ५॥३८ ॥

मंजुल इ०। नेह कहैं सांसारिक प्रेम और देह की सुधि की मर्यादा गई वा श्रीराम के नेह ते देह की सुधि की मर्यादा गई ॥ १ ॥ दाहिनी ओर बैठे रहे तहां ते उठि के सुखद सन्मुख बैठवे की श्रीराम सो आज्ञा मांगि लई। अर्थात् जामें रूप भली भांति देखि परै। भावत कछु कछु ऐ भई महा दुख की भावना करत रहे सो सुख की भावना करण लगे ॥ २ ॥ अनंत बार सिर काटि कै ऊख समान लटिके जो रावण ने श्रीशंकर पै लंका लई सोई लंका को बिभीषण को अतिथि मानि कै अनवसर समुझि कै अर्थात् बनवास समुझि कै तृण के आसन समान दई। भाव यह बिचारे कि हम कुछ न दिये ॥३॥ प्रीति प्रतीति रीति औ शोभा रूप नदी को जहां जहां थाह लेत हैं तहां तहां अथाहै पावत हैं। बांधु के बली बोल के बाना वाले अर्थात् जो कहत सोई करत और बिश्व के बिजय करनेवाले बीर औ नीतिवान और दयालु कौन दूसरो दुनियां में है, जेहि ने दीन के हिय की जरनि नाशी है, औ काको नाम जपत संसार में पृथ्वी बिना बोए जामति है ॥४॥५॥३८॥

सब भांति बिभीषन की बनी। कियो कृपालु अभय कालहु ते गई संसृति सासति घनी ॥ १ ॥ सखा लषन हनुमान संभु गुरु धनी राम कोसल धनी। हियेहि और और कीन्ही बिधि रामकृपा औरै ठनी ॥ २ ॥ कलुष कलंक कलेस कोस भयो जो पद पाइ रावन रनी। सोइ पद पाइ बिभीषन भो भव भूषन दलि दूषन अनी ॥ ३ ॥ बांह पगार उदार सिरोमनि नतपालक पावन पनी। सुमन बरषि रघुवर गुन बरनत हरषि देव दुंदुभि हनी ॥ ४ ॥ रंक निवाज रंक राजा किये गये गरब गरि गरि गनी। राम प्रनाम महा महिमा बर सकल सुमंगल मनि जनी ॥५॥ होय

भनो ऐसेहि अजहूं गये राम सरन परिहरि धनी । भुजा उठाय मापि संकर करि कसम पाइ तुलसी भनी ॥६॥३९॥

सब धानि है० । संसृति संसार ॥१॥ श्रीलखनलाल औ हनुमान रक्षा भए औ श्रीसिव जू गुरु भये औ कोसल धनी जो श्रीराम सो धनी कहें स्वामी भए विभीषण के हृदय में और रहा भाव रावण को उपदेस करि दिन कहें और विधाता ने और किया । अर्थात् रावण न मान्यो और श्रीराम के कृपा ते औरै ठनत भई अर्थात् विभीषन ने लंका पाई ॥ २ ॥ जो राजपद पाय कै रनी रावण पाय औ कलंक को लेख को खजाना भयो सोई राजपद पाय कै दूषणगण को दलि के संसार को भूषण विभीषण भयो ॥ ३ ॥ पावनपनी पवित्र जाकी प्रतिज्ञा है ॥४॥५॥ रंक निवाजा कहें गरीबनेवाज जो श्रीराम सो रंक जो विभीषण ता को राजा किए औ धनी कहें धनी अपने गर्व ते गलि गलि गये अर्थात् विभीषण को ऐश्वर्य्य देखि कै श्रीराम के प्रणाम की महा महिमा की खानि ने सकल सुमंगल रूप मणि को उत्पन्न किये ॥५॥ धनी कहें अभिमान ताको छोड़ि के अजहूं श्रीराम शरण गए ऐसे हौं पलो हाथे अर्थात् जस विभीषण को भयो भुजा उठाय कै अर्थात् ईश्वर की ओर हाथ करि के और शिवजी के साक्षी करि के शपथ खाय के तुलसी ने कही ॥ ६ ॥ सो० । इतनहु पर नहिं होय, सन्मुख सीतानाथ जो । हरिहर पशु हय सोय, तरसत भूसा घास को ॥ ३९ ॥

कहो क्यों न विभीषन की बनै । गयो छाडि छल सरन राम की जो फल चारि चाखो जनै ॥ १ ॥ मंगलमूल प्रनाम जासु जग मूल अमंगल की धनै । तेहि रघुनाथ हाथ माथे दियो को ता की महिमा भनै ॥२॥ नाम प्रताप पतित पावन किय जो न अघाने अघ घनै । कोउ उलटो कोउ सूधो जपि भये राजहंस बायस तनै ॥ ३ ॥ हुतो ललात कृसगात पातपरि मोद पाइ कोटीकनै । सो तुलसी चातक भयो जाचत रामस्याम सुंदर घनै ॥ ४ ॥ ४० ॥

कहो इ० । जो फल चारि चारयो जनै जो शरणागत चारो वेद में फल रूप है औ अर्थ धर्म्म काम मोक्ष चारो की उत्पत्ति करनिहारी है ॥ १ ॥ जाको प्रणाम मंगल को मूल है औ अमंगल के मूल को खोदत है ते रघुनाथ ने हाथ माथे पर दियो तब ताकी महिमा को को कहै ॥ २ ॥ अघ औ अनीति ते जे न अघाने ते पतितन को नाम ने अपने प्रताप ते पावन किये उलटो वाल्मीक जी जापि कै सूधो प्रहाद आदि जपि कै काक से हंस भए ॥ ३ ॥ दुर्बल शरीर लालचात जो खरी खात रह्यो औ कोदो के कनौ पाय कै आनन्द पावत रह्यो सो राम श्यामसुंदर घन को जाचत मात्र चातक भयो । इहां खरी लौकिक सुख को जानौ औ कोदो के कणवत् स्वर्गादि सुख जानो औ चातक होव श्रीराम में अनन्य होव है ॥ ४॥४० ॥

अतिभाग बिभीषन के भले । एक प्रनाम प्रसन्न राम भये दुरित दोष दारिद दले ॥ १ ॥ रावन कुंभकर्न वर मागत सिव बिरंचि बाचा छले । रामदरस पायो अविचल पद सुदिन सगुन नीके चले ॥ २ ॥ मिलनि बिलोकि स्वामि सेवक की उकटे तरु फूले फले । तुलसी मुनि सनमान बंधु को दसकंधर हसि हिय जले ॥ ३॥४१ ॥

अति इ० । दुरित दोष पाप जनित दोष वा पाप औ औगुन ॥१॥ रावण औ कुंभकर्ण को वर मांगत में शिव बिरंचि ने सरस्वती करि के छले अर्थात् आन कै आन कहवाय दिए औ वे वर मागे श्रीराम के दरशन ते विभीषण अविचल पद पाए औ सुंदर दिन औ सुंदर सगुन भली भांति ते विभीषण के संग चले भाव विभीषण दिन सगुनादि न विचारे रहे आप से आप संग लगे ॥ २ ॥ उकठे तरु फूले फले को यह भाव कि जे जड़ श्रीराम सनेहरहित रहे ते सनेहसहित भए हंसि हिय जले ऊपर से तो हंसे पर भीतर से जले ॥ ३॥४१ ॥

गए राम सरन सब को भलो । गनी गरीब बडो छोटो

मुद मूढ़ तीनदल पतितबलो ॥ १ ॥ पंगु अंध निर्गुनी निसंबल सो न लहै जाँचे अलो। सो निबह्यो नीके जो जनमि जग रामराज मारग चलो ॥ २ ॥ नाम प्रताप दिवाकर कर तें गत तुहिन ज्यों कलिमलो। मुत हित नाम लेत भवनिधि तरि गयो अजामिल सो पलो ॥ ३ ॥ प्रभुपद प्रेम प्रनाम कामतरु सद्य विभीषन को फलो। तुलसी सुमिरत नाम सबनि को मंगलमय नभ जल थलो ॥४॥४२॥

गए १० । सुध पंडित ॥ १ ॥ निसम्बल बिना खरच को राम गत मारग चलो श्रीराम के राजमार्ग कहँ भक्ति पथ में जो चलो ॥२॥ नाम प्रताप रूप सूर्य के तीक्ष्ण किरण ते कलिमलो बरफ सम गलत है ॥ ३ ॥ प्रभु के पद में प्रेम औ प्रणाम रूप कामतरु से तत्क्षण विभीषण को भलो भयो नाम सुमिरतमात्र सब जीवन को आकाश अरु थल मंगल मय होत है ॥ ४॥४२ ॥

सुजस मुनि स्रवन हौं नाथ आयो सरन। उपल केवट, गृद्ध सबरी संसृति समन सोक सम सींव सुग्रीव आरति हरन ॥ १ ॥ राम राजीवलोचन विमोचन विपति स्याम, नव तामरस दास वारिद वरन। लसत जट जूट सिर चारु मुनि चीर कटि धीर रघुवीर तूनीर सर धनु धरन ॥ २ ॥ यातुधानेस भ्राता विभीषन नाम बंधु अपमान गुरु ग्लानि आहत गरन। पतितपावन प्रनतपाल करुनासिंधु रापिए मोहि सौमित्र सेवित चरन ॥ ३ ॥ दीनता प्रीति संकलित मृदु वचन सुनि पुलकि तन प्रेम जल नयन लागे भरन। बोलि लंकेस कहि अंक भरि भेंटि प्रभु तिलकु दियो दीन दुख दोष दारिद दरन ॥ ४ ॥ रातिचर जाति आराति सब भाँति गत कियो सो कल्यान भाजन सुमंगल करन । दास

तुलसी सदय हृदय रघुबंसमनि पाहि कहे काहि कीन्हो न तारन तरन ॥ २॥६२ ॥

सुजस इ० ॥१॥ श्याम नव तामरस दाम नवीन नील कमल की माला सम, जूट समूह ॥ २ ॥ जातुधानेस रावण, गुरू ग्लानि, भारी ग्लानि से ॥ ३ ॥ संकलित संमिलित ॥ ४ ॥ रातिचर निशाचर, आराति शत्रु, इहां रावण को बंधु है ताते आराति कहे सदय दयासहित ॥५॥४३॥

दीनहित बिरद पुरानन्हि गायो । भारतबंधु कृपालु मृदुलु चित जानि सरन हौं आयो ॥१॥ तुम्हरे रिपु की हौं अनुज विभीषन बंस निसाचर जायो । सुनि गुन सील सुभाव नाथ को मैं चरनन्हि चितु लायो ॥ २ ॥ जानत प्रभु दुख सुख दासनि को ताते कहि न सुनायो । करि करुना भरि नयन विलोकहु तब जानौं अपनायो ॥ ३ ॥ बचन बिनीत सुनत रघुनायक हंसि करि निकट बुलायो । भेट्यौ हरि भरि अंक भरत ज्यों लंकापति मनु भायो ॥ ४ ॥ कर पंकज सिर परसि अभय कियो जन पर हेतु देखायो । तुलसिदास रघुबीर भजनु करि को न अभय पद पायो ॥५॥४४॥

दीन इ० । हेतु प्रीति अपर पद सु० ॥ ४४ ॥

राग धनाश्री । सत्य कहौं मेरो सहज सुभाउ । सुनहु सखा कपिपति लंकापति तुम सन कौन दुराउ ॥ १ ॥ सब विधि हीन दीन अति जडमति जाको कतहु न ठाउ । आये सरन भजो न तज्यो तेहि यह जानत रिपिराउ ॥२॥ जिन कें हौं हित सब प्रकार चित नाहि न और उपाउ । तिनहिं लागि धरि देह करौं सब डरौं न सुजस नसाउ ॥ ३ ॥ पुनि पुनि भुजा उठाइ कहत हौं सकल सभापति आउ । नाहिन कोउ प्रिय मोहि दास सम कपट प्रीति बहि जाउ ॥ ४ ॥ सुनि रघुपति के बचन विभीषन प्रेम मगन मन चाउ ।

तुलसिदास तजि आस त्रास सब ऐसे प्रभु कहुं गाउ ॥५॥४५॥

गल ३० । सहज बनावटरहित ॥ १ ॥ भजो कहैं अंगीकार करत हौं, गिरिजा नारद जू ॥ २ ॥ दरो न भुवन नसाइ कहिबे को यह मत कि "भुवन अनेक रोम प्रति जासू। यह महिमा कछु बहुत न तासू"। इत्यादि ॥ ३ ॥ कपट प्रीति यदि जाउ कपट करि जो प्रीति होती है। सो सदिनाऊ होति है। भाव हमारी प्रीति निष्कपट है अतएव अचल है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ४५ ॥

नाहि न भजिबे जोगु जियो। श्रीरघुवीर समान आन को पूरन कृपा कियो ॥ १ ॥ कहहु कौन सुर सिला तारि पुनि केवट मीत कियो। कौने गीध अधम कौं पितु ज्यौं निज कर पिंड दियो ॥ २ ॥ कौन देव सबरी के फल करि भोजन सलिल पियो। बालिबास बारिधि बूडत कपि केहि गहि बांह लियो ॥ ३ ॥ भजन प्रभाउ विभीषन भाष्यो सुनि कपि कटक जियो। तुलसिदास को प्रभु कोसलपति सब प्रकार बरियो ॥ ४ ॥ ४६ ॥

नाहिन ३० । जियो कहैं दूसरो ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ बरियो कहैं बलवान ॥ ४ ॥ ४६ ॥

राग जयतश्री । कब देखौंगो नयन बह मधुर मूरति। राजिवदलनयन कोमल कृपा अयन मयनगि बहु छवि अंगनि दूरति ॥ १ ॥ सिरसि जटा कलाप पानि सायक चाप उरसि रुचिर बनमाल लूरति। तुलसिदास रघुवीर की सोभा सुमिरि भई है मगन नहिं तनु की सूरति ॥२॥४७॥

श्री जानकी जू की आंखि कमल के पत्र के समान नेत्र है जेहि मूरति की औ कोमल है औ कृपा को गृह है औ काम समूह के छवि को अंगनि से दूर करति है ॥ १ ॥ दूरति छटकति ॥ २ ॥ ४७ ॥

राग केदारा । कहु कबहूं देखिहौं आली हौं बारज

भुअन । सानुज सुभग तन जब ते बिछुरे बन तब ते दव सी लागी तीनहुं भुअन ॥ १ ॥ मूरति सूरति किये प्रगट प्रीतम हिये मन के करन चाहै चरन कुअन । चित चढ़िगो वियोग दसानन कहिबे जोग पुलकगात लागे लोचन चुअन ॥ २ ॥ तुलसि बिजटा जानी सोय अति अकुलानी मृदुबानी कह्यो ऐहैं दवन दुअन । तमीचर तम हारी मुरकंज सुखकारी रविकुलरवि अब चाहत उअन ॥ ३॥४८ ॥

कहु इ० । आरज कहैं श्रेष्ठ दवसी आगसी ॥ १ ॥ मन के करन मन के हाथन से ॥ २ ॥ दवन दुअन शत्रुनाशक निशाचर रूप तम के नासनिहारे औ देवरूप कमल के सुख देनिहारे सूर्य कुल के सूर्य अब उगा चाहत हैं ॥ ३॥४८ ॥

अब लौं मैं तोसों न कहेरी । सुनु बिजटा प्रिय प्राननाथ बिनु बासर निसि दुप दुसह सहेरी ॥ १ ॥ बिरह बिषम बिष बेलि बढ़ी उर तें मुख सकल सुभाय दहेरी । सोइ सोचिबे लागि मनसिज के रहट नयन नित रहत न हेरी॥२॥ सर सरोर सुपे प्रान बारिचर जीवन आस तजि चलन चहेरी । तें प्रभु सुजस सुधा सीतल करि राखे तदपि न तृप्त लहेरी । ३ ॥ रिपु रिसि घोर नदी बिबेक बल धीरसहित हुं ते जात बहे री । दै सुद्रिका टेक तेहि अवसर सुचि समीर सुत पैरि गहे री ॥४॥ तुलसिदास सब सोच मोच मृग मन कानन भरि पूरि रहे री । अब सखि सिय संदेह परिहरु हिय आइ गये दोउ बीर अहेरी ॥ ५॥४९ ॥

अब लौं ॥ १ ॥ उर तें तीक्षण विरह रूप विष की बेली बढ़ी तेहि बेली ने स्वाभाविक सकल सुख को जराय दई औ तेहि बेली सींचने के अर्थ काम के रहट रूप हमारे नेत्र नित नये रहत हैं ॥ २ ॥ शरीर रूप तड़ाग सूखे प्राण रूप मछली आदि जीवन की आशा छोड़ि

ह बचना चाहे पर मैं ने प्रभु सुयश रूप अमृत से शीतल करि के राखे तथापि तृषा न गई ॥ ३ ॥ प्रभु का जो घोर रिस है। सो नदी है विवेक बल धीरता महित नाँघ वेह जान रहे पर तेहि अवसर में हिंसा रूप लहरी से घबड़ाइ के हे सखी पैरि के पवनपूत गहत भए ॥ ४ ॥ सब सोच पोच रूप मृगा मन रूप कानन में भरि पूरि रहे हैं सुना सुनि विनटा बोली कि हे सखी श्रीजानकी जू अब संदेह को तिन ने छोड़ो दोऊ शिकारी कुँअर आइ गए। भाव सोच पोच रूप मृग अब न बचेंगे ॥ ५॥४६ ॥

राग बिलावल—सो दिन सोने को कहु कब ऐहै । जा दिन बंध्यो सिंधु बिकटा मुनु तूं संभ्रम मोहि आनि सुनैहै ॥ १ ॥ बिखदयन हुर साधु मतावन रावन कियो आपनो पैहै। कनकपुरी भयो भूप बिभीषन बिबुध समाज बिलोकन धैहै ॥ २ ॥ दिव्य दुंदुभी प्रसंसि हैं मुनिगन नभतल बिमल बिमाननि छैहै। बरषिहैं कुसुम भानुकुलमनि पर तब मोकों पवनपूत लै जैहै ॥ ३ ॥ अनुजसहित सोभिहैं कपिन मह तनुछवि कोटि मनोज हि तैहै। इन नयननि एहि भांति प्रानपति निरपि हृदय आनँद समैहै ॥४॥ बहुरौ सदल सनाथ सलछिमन कुसल कुसल विधि अवध देखैहै । गुरुपुरलोग सासु दोउ देवर मिलत दुसह उर तपित बतैहै ॥५॥ मंगल-कलस बधावन घर घर पैहैं मागने जो जेहि मैहै। बिजय राम राजाधिराज को तुलसिदास पावन जसु गैहै ॥६॥५०॥

सो दिन इ० । सोने को कहिबे को यहै भाव कि जैसे धातुन में सोना उत्कृष्ट होत है तैसे दिनन में सो दिन उत्कृष्ट कब आवैगो ॥ १ ॥ २ ॥ नभतल आकाश औ पृथ्वी में ॥ ३ ॥ कोटि मनोज तिनहैं कोटि काम को संतप्त करि हैं । ४ ॥ फेर दलमोहन लछिमन-सहित नाथ को कुशल औ अवध को कुशल विधाता देखैं हैं । ५॥६॥५०॥

लपति नाथ समुझि जियं देपु ॥ ७ ॥ सुनि पुलस्ति के जस मयंक मधु कत कलंक हठि होहि। और प्रकार उवार नहीं कहुं मैं देख्यौ जग टोहि ॥८॥ चलु मिलु वेगि कुसल सादर सिय सहित अग्र कर मोहि। तुलसिदास प्रभु सरन सबद मुनि अभय करैं गो तोहि ॥ ८॥९॥१॥

टीका।

मानइ०। मंदोदरी की उक्ति है आयो व कहैं आयो अब ॥ १ ॥ जनायो आप अपने को जनावत भए मिस बहाना ते ॥ २ ॥ दाप अभिमान ॥ ३ ॥ ४ ॥ बल उदधि अगाध बल रूप समुद्र जेहि बालि को अथाह ॥ ५ ॥ ६ ॥ बिरदैत बानावाले टोहि कहैं टोइ कै ॥८॥९॥१

राग कान्हरा। तूं दसकंठ भले कुल जायो। तामहुं सिवसेवा बिरंचि बर भुज बल बिपुल जगत जसु पायो ॥१॥ पर दूषन बिसिरा कबंधरिपु जेहि बाली जम लोक पठायो। ताको दूत पूनीत चरित हरि सुभ संदेस कहन हौं आयो ॥२॥ स्रीमद नृप अभिमान मोहबस जानत अनजानत हरि लायो। तजि ब्यलीक भजु कारुणीक प्रभु दै जानकिहिं सुनहि समुझायो ॥३॥ यातें तव हितु होइ कुसल कुल अचल राज चलिहै न चलायो। नाहित रामप्रताप अनल महुं है पतंग परिहै सठ धायो ॥ ४ ॥ जद्यपि अंगद नीति परम हित कह्यो तथापि न कछु मन भायो। तुलसिदास सुनि बचन क्रोध अति पावक जरत मनहु घृत नायो ॥ ५॥ २॥

दूइ०। अंगद की उक्ति ॥ १ ॥ २ ॥ श्रीमद धनमद, लीक कपट ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ २ ॥

तैं मेरो मरम कछु नहिं पायो। रे कपि कुटिल ढीठ

सु पांवर मोहि दास ज्यों डांटन आयो ॥ १ ॥ भ्राता कुंभ-
करन रिपुघातक सुत सुरपतिहि बंध करि ल्यायो। निज
भुजबल अति अतुल कहौं क्यों कंदुक ज्यौं कैलास उठायो
॥२॥ सुर नर असुर नाग पग किन्नर सकल करत मेरो
मन भायो। निसिचर रुचिर अहार मनुजतनु ताको जस पल
मोहि सुनायो ॥ ३ ॥ कहा भयो वानर सहाय मिलि करि
उपाय ज्यों सिंधु बंधायो। जो तरिहै भुज बीस घोर निधि
ऐसो को विभुवन में जायो ॥ ४ ॥ सुनि दससीस वचन
कपिकुंजर विहंसि ईस माय हि सिर नायो। तुलसिदास
केसव कालवस गनत न कोटि जतन समुझायो ॥ ५॥३ ॥

तें इ० । रावण की उक्ति ॥ १ ॥ २ । मन को भायो कहैं हमारो
मो कहैं हमारो गुलाम को भायो करत हैं ॥ ३॥४॥५।३ ॥

सुनु पल में तोहि बहुत बुझायो। एते मान सठ भयो
मोहबस जानतहूं चाहत विष पायो ॥ १ ॥ जगतविदित
अतिवीर वालि बल जानत हौं किधौं अब बिसरायो। बिनु
प्रयास सोउ हत्यो एक सर सरनागत पर प्रेम देखायो ॥ २ ॥
रावनुगे निज करमी जनित फल भलि ठौर दुठि धेर बटायो।
बानर भालु चपेट लपेटनि मारत तब हैहि पहितायो ॥ ३ ॥
तोहीं दसन तोरिबे लायक कहा करौं जो न आयसु पायो।
सर रघुबीर बाण विदलित उर सोवहिगो रनभूमि सोहायो
॥ ४ ॥ अविचल राज विभीषन को सब लेहि रघुनाथ चरन
चित्त लायो। तुलसिदास एहि भांति बदन करि गरजत
रावनो बालिनंदबधायो ॥ ५॥४ ॥

पद ३० । अंगद की उक्ति । रे सठ एतना अभिमान कोरउ

भयो है ॥१॥२॥३॥ होहीं कहैं इम, विदलित विशेषदलित ॥ ४॥५॥४॥

राग केदारा । राम लषन उर लाइ लये हैं । भरे नीर राजीवनयन सब अंग अंग परिताप तये हैं ॥ १ ॥ कहत ससोक बिलोकि बंधुमुख बचन प्रीति गथये हैं । सेवक सखा भक्ति भायप गुन चाहत अब अथये हैं ॥ २ ॥ निज कीरति करतूति तात तुम्ह सुकृती सकल जये हैं । मैं तुम्ह बिनु तनु राखि लोक अपने अपलोक लये हैं ॥ ३ ॥ मेरे पन की लाज इहां लौं हठि प्रिय प्रान दये हैं । लागत सांग बिभीषन ही पर सीपर आपु भये हैं ॥ ४ ॥ सुनि प्रभुवचन भालु कपि सुर गन सोच सुपाइ गये हैं । तुलसी आइ पवन-सुत बिधि मानो फिरि निरमये नये हैं ॥ ५॥५ ॥

राम इ० । लक्ष्मण जी की शक्ति लगिवे की कथा लिखत हैं । सब अंग परिताप तए हैं सब अंग परिताप तें तै उठे है ॥ १ ॥ वचन प्रीति गथए हैं वचन प्रीति से गुहे भए हैं । सेवक औ सखा औ भगति औ भाईपने को गुन अब डूबा चाहत है । भाव ए सब गुण लक्ष्मण छोड़ि दूसरे में कहां होयगो । २ ॥ हे तात तुम अपनी कीर्ति औ करतूति के सकल सुकृति को जीति लए हैं हम तुम्हारे बिना अपना तन लोक में राखि के अपलोक कहैं अयश को लए हैं ॥ ३ ॥ हमारी प्रतिज्ञा की लाज तुम को इहां लो भई कि हठि करि के प्रिय जो प्रान सो दिए । विभीषण को सांग लागत तापर लक्ष्मण आप ढाल भए हैं । भाव विभीषण जो मरैंगे तो श्रीराघव की प्रतिज्ञा जायगी यह विचारि आप शक्ति को लै लए ढाल को सिपर पारसी में कहत हैं ॥ ४ ॥ निर्मल नए हैं मानो विधाता ने नए सिरे से फिर लक्ष्मण जी को बनाए हैं ॥ ५ ॥ ५ ॥

राग सोरठ—सोवैं तो न काजू ह्वै भाई । और निबाहि भली विधि भायप चल्यो लषन सो भाई ॥ १ ॥ पुर पितु-

बंधु सकल सुख परिहरि जेहि वन विपति बंटाई। ता संग
हौं मुरलोक सोक तजि सक्यो न प्रान पठाई ॥ २ ॥ जानत
हौं या उर कठोर तें कुलिस कठिनता पाई। सुमिरि सनेह
मिथासुत को दरकि दरार न जाई ॥ ३ ॥ तातमरन तिय-
हरन गीधबध भुज दाहिनी गवांई। तुलसी मैं सब भांति
अपने कुलहि कालिमा लाई ॥ ४ ॥ ६ ॥

धोरे ह० । ओर अंत लों ॥१॥२॥३॥ दाहिना भुज भाई को कहत
४ ॥ ६ ॥

मेरो सब पुरुषारथ थाको। विपति बंटावन बंधु बाहु-
करौं भरोसो काको ॥ १ ॥ सुनु सुग्रीव सौंवहूं मी मर
बदन विधाता। ऐसे समय समर संकट हौं तज्यो
सो भ्राता ॥ २ ॥ गिरि कानन जैहैं सापामृग हौं पुनि
संघाती। ह्वैहै कहा विभीषन की गति रही सोच
खाती ॥ ३ ॥ तुलसी सुनि प्रभुवचन भालु कपि सकल
हिय हारे। जामवंत हनुमंत बोलि तब औसर जानि
॥ ४ ॥ ७ ॥

ह० । विपति बटावन विपति को बटावनहारो ॥ ७ ॥

राग मारू—जौ हौं अब अनुसासन पावौं। तौ चंद्र-
मंडोरि खैल ज्यों आनि सुधा सिर नावौं ॥ १ ॥ कै
दसौं ज्वालावलि अमृतकुंड महि लावौं। मेदि भुवन
भानु दाहिरो तुरत राहु देखावौं ॥ २ ॥ बिबुध बेद
बानी धरि तौ प्रभु अनुग कहावौं। पटकौं मीच नीच
ज्यों सबहि कों पार पठावौं ॥ ३ ॥ तुम्हरेहि कृपा

प्रताप तिहारहि नेकु विलंब न लावौं। दीजै सोइ आयसु तुलसी प्रभु जेहि तुम्हरे मन भावौं ॥ ४ ॥ ८ ॥

जौ इ० । हनुमानजी की उक्ति है जो अब हम आज्ञा पावैं तौ षड़ सम चन्द्रमा को गारि कै अमृत आनि कै सिर नवावैं ॥ १ ॥ अथवा पाताल के सर्पों को मारि कै अमृत को कुंड भूमि पर ले आवैं अथवा ब्रह्मांड को भेदन करि तेहि राहु तेहि सूर्य को बाहर करौं और तेहि राहु को राहु से बंद करि देउं । भाव जब सूर्य ब्रह्मांड में न रहैंगे तब कैसे भिनुसार होयगो । "काज नसाईहि होत प्रभाता" एह आशय लेके हनुमानजी । कहे विबुधवैद्य अश्वनीकुमार, बरबस जो रावरी अनुग्रहास मीचु मृत्यु, मूषक मूसा ॥ २ ॥ ४ ॥ ८ ॥

सुनि हनुमंतबचन रघुवीर । सत्य समीरसुअन सब लायक कह्यौ राम धरि धीर ॥ १ ॥ चाहिय बेद ईस आयसु धरि सीस कीस बल ऐन । आन्यौ सदनसहित सोवत ही लौलौं पलकु परै न ॥ २ ॥ जिये कुंअर निसि मिले मूलिका खोल्यौ बिनय सुपेन । उठ्यो कपीस सुमिरि सीतापति चल्यौ सजीवन लेन ॥ ३ ॥ कालनेमि दलि बेगि विलोक्यौ द्रोनाचल जिय जानि । देखी दिव्यौषधी जहां तहं जरी न परी पहिचानि ॥ ३ ॥ लियौ उठाइ कुधर कंदुक ज्यौं बेगि न जाइ बखानि । ज्यौं धाए गजराज उधारन सपदि सुदर्सनपानि ॥ ४ ॥ आनि पहार जोहारे प्रभु कियौ बैदराज उपचारु । करुनासिंधु बंधु भेट्यौ मिटि गयो सकल दुखभारु ॥ ५ ॥ मुदित भालु कपि कटक लह्यौ जनु समर पयोनिधि पारु । बहुरि ठौरही राखि महीधरु आयो पवनकुमारु ॥ ६ ॥ सेनसहित सो कहि सराहत पुनि पुनि राम सुजान । बरषि प्रसंसत बिबुध बजाइ निसान ॥ ७ ॥

तुलसिदास सुधि पाइ निसाचर भये मनहुं बिनु प्रान। परी लंक चहुं ओर महा दुख लंक हनुमान ॥ ८॥९ ॥

दोहा १० ॥ १ ॥ श्रीरघुवर कह कि वैद्य चाहिए यह आज्ञा स्वामी की हनुमान वैद्य भवन सिर पर धरि के परमहित वैद्य को लंका में लेआवतही भान्यो पवन वेगना से कि जब लो पलक न परयो ॥२॥ सुषेन नामा वैद्य-जो लंका में आयो सो विनै कीन्ही कि राति भर में द्रोण गिरि जो कुंभर जांवै ॥ ३ ॥ ४ ॥ कुधर पर्वत, फंदुक गेंदा, वेग वेगना, सुदर्शनयानि विष्णु ॥ ५ ॥ ६ ॥ ठौरहीं जहां से आए रहे तौं तौं आए ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

राग केदारा। कौतुक हीं कपि कुधर लियो है। चल्यो नभ नाइ माथ रघुनाथहि सरिस न वेगु कियो है ॥१॥ देख्यो भरत जानि निसिचर बिनु फर सर हन्यो हियो है। पर्यो कहि राम पवन राख्यो गिरि पुर तेहि तेज पियो है ॥ २ ॥ आइ भरत भरि अंक भेंटि निज जीवन दान दियो है। दुख लघु लषन मरम घायल सुनि मुख बड़ो कोस जियो है ॥ ३ ॥ आयसु दुतहि स्वामि संकट उत परत न कछू कियो है। तुलसिदास बिहगौ अकास सो कैसे कै जात सियो है ॥ ४॥१०॥

कौतुक इ०। सरिस न वेग कियो है जाके बराबर दूसरे को वेग नहीं है। १ ॥ भरत जू हनुमान जी को जात देखे निशर जानि के बिनु फर को बान हृदय में मारयो, तेहि बान ने पुर कहँ संपूर्ण हनुमान जी के तेज को पी लियो। हनुमानजू राम कहि के पृथ्वी में गिरे पर्वत को पवन ने रोकि राख्यो भाव जाते पुरी न दबि जाय। २। भरत जू हनुमान जी के ढिग जाय के अंक भरि भेंटि के पुनि अपना आरोग्य हनुमान जू को दान दियो है तब हनुमान जू जी उठे हैं। एतना [illegible] ॥ इति श्रीराम

जू की आज्ञा अवधि भर अयोध्या जी में रहिवे की औ उत श्रीराघव जू संकट में हैं कुछ करत नहीं बनत है। भाव न रहत बनत न जात बनत गोसांई जी कहत हैं कि फट्यो आकाश सो कैसे सियो जात है ॥ ४॥१० ॥

भरत सत्रुसूदन बिलोकि कपि चित चकित भयो है। राम लषन रन जीति अवध आए कैधों मोहि भ्रम कैधों काहू कपट ठयो है ॥ १ ॥ प्रेम पुलकि पहिचानि के पद पदुम नयो है। कह्यौ न परत जेहि भांति दुहुं भाइन्ह सनेह सों सो उर लाइ लयो है ॥ २ ॥ समाचार कहि गहरू भो तेहि ताप तयो है। कुधरसहित चढो बिसिष बेगि पठवौ सुनि हरि हिय गरब गूढ उपयो है ॥ ३ ॥ तीर ते उतरि जसु कह्यौ चहै गुन गननि जयो है। धन्य भरत धन्य भरत करत भयौ मगन मौन रह्यौ मन अनुराग रयो है ॥ ४ ॥ यह जलनिधि पन्यो मथ्यो लँघ्यो बंध्यो अंचयो है। तुलसिदास रघुवीर बंधु महिमा को सिंधु तरि को कबि पार गयो है ॥ ५॥११ ॥

भरत इ०सु० ॥१।२। हनुमान जू समाचार कहे। गहरु कहँ बिलम्ब भयो तेहि ताप ते भरत जू तपि जात भए। भरत जू कहत भये कि पर्वतसहित हमारे बाण पर चढ़ो तुम को शीघ्र प्रभु के ढिग भेज देउं, यह सुनि के हनुमान जी के हृदय में भारी अहंकार उपज्यौ है कि "मोरे भार चलहि किमि बाना"। फिर हनुमान जी बाण पर चढ़े भरत जू को बोझ न जान परयौ बाण चलावन लगे तब हनुमान जू भरत जू को प्रभाव समुझि बाण ते उतरि के भरत जू को यश कहा चाह्यौ पर भरत जू के गुणगणों ने जीति लियो है। भाव कहिवे को न समर्थ भये धन्य धन्य भरत कहत मगन भए औ चुप है जात भए औ मन भरत जू के अनुराग में रंगि गयो ॥३॥४॥ यह समुद्र को सगर महा-

राज के पुत्रों ने खन्यो वा मिथव्रत ने औ देवता दैत्यों ने मथ्यो औ हनुमान जी ने नाप्यो श्रीरघुनाथ ने बांधिउ औ अगस्त्य जी अचइ गए। गोसाईं जी कहत हैं कि भरत की महिमा समुद्र को तरि के कौन अस कवि है कि जो पार गयो है। एहि समुद्र तें महिमा समुद्र को अधिक जनाए ॥ ५॥११ ॥

जो तो नहिं जो जग जनम भरत को। तौ कपि कहत कृपानधार मग चलि आचरन चरत को ॥ १ ॥ धीरज धरम धरनिधर धुरहुं तें गुरु धुर धरनि धरत को । सब सदगुन सनमानि आनि उर अघ औगुन निदरत को ॥ २ ॥ सिवहु न सुगम सनेह रामपदु सुजननि सुलभ करत को। सुजि निज जसु सुरतरु तुलसी कहुं अभिमत फरनि फरत को ॥ ३॥१२ ॥

जोतो इ०। अब हनुमान जी की उक्ति। गोसाईं जी कहत हैं जगत में जो भरत जी को जनम न होतो तो स्नेह का मार्ग कृपाणधार सम है ता पर चलि के तेहि व्रत को को आचरण करत ॥१॥ धरणीधर जो पर्वत तेहि के धुर कहैं भारहु ते गुरु कहैं अधिक है भार जेहि को ऐसे धीरज धर्म्म को धरणी पर को धरत औ सब सदगुणों को सनमानि कै हृदै में आनि कै अघ औ औगुनन को कौन दरत कहैं विदीर्ण करत वा निदरत कहैं निरादर करत ॥२॥ जो रामपद सनेह शिव को भी नहीं सुगम सो सुजननि को सुलभ करत। भाव भरत जी की दशा स्मरण करि के श्रीरामपद में प्रीति उपजति है "कहत सुनत सुनिभाव भरत को। सीयरापद होइ न रत को"। निज यश रूप सुरतरु को सृजि के तुलसी कहं वांछित फरनि को को फरत भरत जी प्रति श्रीराम जी की उक्ति है "मिटिहै पाप प्रपंच सब अखिल अमंगल भार। लोक सुजस परलोक सुख सुमिरत नाम तुम्हार" ॥३॥१२॥

सुनि रनघायल लषन परे हैं। स्वामि काज संग्राम

सुभट सो लोहे ललकि लरे हैं ॥ १ ॥ सुवन सोक संतोष सुमित्रहिं रघुपति भगति वरे हैं। छिन छिन गात सुपात छिनहिं छिनु हुलसत होत हरे हैं ॥ २ ॥ कपि सों कहत सुभाय अंब के अंबक अंबु भरे हैं। रघुनंदन बिनु बंधु कुअवसर जद्यपि धनु दुसरे हैं ॥ ३ ॥ तात जाहु कपि संग रिपुसूदन उठि कर जोरि परे हैं। प्रमुदित पुलकि पैत पूरे जनु विधिवस सुढर ढरे हैं ॥ ४ ॥ अंब अनुज गति लखि पवनज भरतादि गलानि गरे हैं। तुलसी सब समुझाइ मातु तेहि समय सचेत करे हैं ॥ ५ ॥ १३ ॥

सुनि इ० । स्वामी के कार्य हेतु संग्राम में सुभट जो मेघनाद तासों ललकारि के लोह करि लरें हैं तेहि रण में लषणलाल घायल परे हैं यह सुनि के सुमित्राजू को पुत्र को शोक है औ लक्ष्मणजू रघुपति की भक्ति को वरे कहैं अंगीकार किए हैं ताते संतोष है याते छिन छिन में गात सुपात औ छिन छिन में हुलसत औ हरे होत है ॥ १ ॥ २ ॥ माता के नेत्रों में जल भरे हैं स्वाभाविक कपि सों कहति हैं यद्यपि धनु दूसरा है अर्थात् सहायक है तथापि कुअवसर में बिना बंधु के रघुनन्दन भए ॥ ३ ॥ हे रिपुसूदन अब तुम हनुमान के संग जाउ यह सुनि सत्रुहन जू हाथ जोरि के खड़े होत भए आनन्द करि पुलकित होत भए मानो पूरे दाव पर विधि के वश पासा सुन्दर ढार से ढरे हैं माता की औ शत्रुहन की दशा देखि हनुमान जू औ भरत आदिक ग्लानि में गरत भए तेहि समय में मातु के सदुपाय के सब सचेत करे हैं ॥ ४ ॥ १३ ॥

बिनय सुनाइ बीर परि पाय। कहौं कहा कपीस तुम्ह सुचि सुमति सुहृद सुभाय ॥ १ ॥ स्वामि संकट हेतु हौं जड़ जननि जनम्यौ जाय। समय पाइ कहाइ सेवक घट्यौ तीन सहाय ॥ २ ॥ कहत मिथिल सनेह भो जनु धीर घायल घाय। भरतगति लखि मातु सब रहि ज्यों गुही बिनु गाय ॥

॥ ३ ॥ भेंट कहि कहिबो कह्यौ यौं कठिनमानस माय। लाल लौनें लषन महित मुललित लागत नाय ॥ ४ ॥ देषि बंधु सनेह अंब सुभाउ लषन कुठाय। तपत तुलसी तरनि-तामकु ठहि नये तिहुं ताय ॥ ५॥१४ ॥

विनय ३० ॥१॥ जाय व्यर्थ, गयो तौन सहाय सहाय में युक्त न भयो ॥ २ ॥ ज्यों गुडी बिनु वायु जैसे वे हवा की गुडी ॥ ३ ॥ श्रीकौशिल्याजू कहति हैं कि हमारो भेंट कहि कै ऐसो कहना कि तुम्हारी कठिनमानस माता ने अस कह्यो है कि हे लाल नाथ कहैं नाथ तुम्हारो लषन सहित ललित लागत है। भाव निज शोभा जो चाहो तो लषनसहित आओ ॥ ४ ॥ भरत शत्रुहन को सनेह औ माता को सुभाव औ लषन को कुठाव में देखि कै तरनि जो सूर्य तिन के त्रास देनिहारे जो हनुमानजू सो यह नये तीनों ताप से तपत हैं। शंका। नन्दिग्राम में श्रीकौशिल्या जू आदि कैसे प्राप्त भई। उत्तर। महात्मन के मुख से अस सुना है जब लक्ष्मणजू को शक्ति लगी तब सुमित्राजू स्वप्न देख्यो कि भुजा को सर्प लीलयो, सो जाय श्रीवशिष्ट जू सों कह्यो सो सुनि वशिष्टजू कह्यो कि लक्ष्मण को कुछ अरिष्ट है सो ताके हेतु यज्ञ शांति के अर्थ किया चाहिए परन्तु यह समय राक्षस करि यज्ञ नाहीं होय पावत। भरत जो रक्षा करैं तो यज्ञ होय तब सब मिलि नन्दिग्राम में भरत के समीप आय के समाचार कहे। तब भरत बिना गासी को बान लै करि रक्षा हेतु धरे ताही समय में हनुमान आए सो निश्चर के भ्रम से भरतजू मारत भए ॥ ५ ॥ १४ ॥

हृदय घाउ मेरे पीर रघुवीरै। पाइ सजीवन जागि कहत यौं प्रेम पुलकि बिसरे सरीरै ॥ १ ॥ मोहि कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै। सोभा सुष छति लाहु भूप कहुं केवल कांति मोल हीरै ॥ २ ॥ तुलसी मुनि सौमित्रबचन सब धरि न सकत धीरौ धीरै। उपमा राम लषन को प्रीति की क्यों दीजै छीरें नीरै ॥ ३॥१५ ॥

हृदय इ० । श्रीलक्ष्मण जू सजीवन के पाय के जागि के प्रेम में पुलकि के देहाध्यास विसारि के अस कहत हैं कि हम को पुनि पुनि कहा बूझत हौ, जो घाव देखनो होय तो हमारे हृदय में देखो ओ पीर पूछना होय तो श्रीरघुवीर जू सो पूछो। जैसे पाठ के अर्थ की चर्चा सूगा से कोऊ पूछैं। भाव तस हम से पूछना है। शोभा सुख हानि औ लाभ राजा कहं है हीरा को केवल कांति औ मोल मात्र है, अस लक्ष्मणजू को वचन सुनि धीरो धीर को नहीं धरि सकत है। श्रीरामलषन की प्रीति की उपमा छीर औ नीर की क्यों दिजिए। भाव उन की प्रीति खटाई आदि तें बिलगति है ॥ ३ ॥ १५ ॥

राग कान्हरा। रातज राम कामसत सुंदर। रिपु रन जीति अनुज संग सोभित फेरत चाप विसिष बनरुह कर॥१॥ स्याम सरीर रुचिर स्रम सीकर सोनितकन विच बीच मनोहर। जनु पद्योतनिकर हरिहित गन भ्राजत मरकत सैल सिषर पर ॥ २ ॥ घायल बीर बिराजत चहुं दिसि हरषित सकल रीछ अरु बनचर। कुसुमित किंसुक तरु समूह महं तरुन तमाल बिसाल बिटपवर ॥ ३ ॥ राजिवनयन विलोकि कृपा करि किये अभय मुनि नाग बिबुध नर। तुलसिदास यह रूप अनूपम हृदिसरोज बसि दुसह विपति हर ॥४॥१६॥

अब रावणादि सब निशाचरों के वध के अनंतर श्री रघुनाथ जी के स्वरूप को, वर्णन करत हैं। राजत इ०। बनरुह कमल ॥ १ ॥ सुंदर श्याम शरीर में सुंदर श्रमविन्दु औ बीच २ में श्रोणितकण हैं। मानो खद्योत समूह औ हरिहित जे चंद्रमा तिन के गण जे तारा ते मरकत शैल के सिपर पर शोभत हैं इहां खद्योत श्रोणितकण है औ तारा श्रमविन्दु है मरकत शैल श्रीराम को शरीर है खद्योत को कोऊ देश में जुगनू कोऊ देश में भगजोगिनी कहत हैं औ जो खद्योत सूर्य वाचक होय तौ भी बनत है क्योंकि अरुण रंग सूर्य का भी है ॥ २ ॥

मानो फूले मए पलास के नव समूह में युवा श्रेष्ठ विशाल तमाल को हुए हैं। इहां मायल वीर फूले पलाससम हैं तमालसम श्रीराम हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ १६ ॥

राग धनाश्री। अवधि आजु किधौं औरो दिन ह्वै हैं। चढि धवरहर विलोकि दखिन दिसि बूझ धौं पथिक कहा ते आए वै हैं ॥ १ ॥ बहुरि विचारि हारि हिय सोचति पुलकिगात लागे लोचन च्वै हैं। निज वासरनि बरष पुरवैगो विधि मेरे तहं करम कठिन कृत के हैं ॥ २ ॥ बन रघुवीर मातु गृह जीवति निलज प्रान सुनि सुनि सुष स्वै हैं। तुलसिदास मो सो कठोर चित कुलिस सालभंजिको न ह्वै हैं ॥ ३ ॥ १७ ॥

अवधि इ०। श्रीकौशिल्या जू की उक्ति रघुनाथ के आइबे को दिन आजु है कि दुइ दिन और है सखी ते कहति है कि अटारी पर चढ़ि के दक्षिण दिशा देखि के पथिक सो बूझु कि वै कहां ते आए हैं। भाव कदापि कहीं रघुनाथ से आवत के भेंट भई होय ॥ १ ॥ विचार करि हारि हिए सोच करत हैं पुलकावली अंग में है औ नेत्रन से आंसू टपकन लगे। अब हृदय में सोचत हैं कि तहां विधाता के निकट मेरे इन कठिन कर्म कोई है तातें ब्रह्मा अपने दिनन सों चौदह वर्ष पुरवैगो ॥ २ ॥ कुलिश शालभंजिको न ह्वै हैं कुलिश कहै वज्र की शालभंजिका कहै मतिमा सो भी नहीं होगी ॥ ३ ॥ १७ ॥

आली अब राम लषन कित ह्वैहैं। चित्रकूट तज्यो तब ते न लही सुधि वधूसमेत कुसल सुत द्वैहैं ॥ १ ॥ वारि बयारि विषम हिम आतप सहि बिनु वसन भूमितल स्वैहैं। कंद मूल फल फूल असन बन भोजन समय मिलत कैसे वै हैं ॥ २ ॥ जिन्हहि विलोकि सोचिये लता द्रुम पग मृग

सुनि लोचन जल च्वैहैं। तुलसिदास तिन्ह को जननी हौं सो सो निठुर चित औरौं कहुं ह्वैहैं ॥ ३॥१८ ॥

आली इ० । शंका । हनुमान जी से तो सब वृत्तान्त सुने रहीं चित्रकूट तज्यो तब ते न लही सुधि यह कैसे कहति हैं । उत्तर । व्याकुलता करि । अपर पद सु० ॥ १८ ॥

राग सोरठ । बैठी सगुन मनावति माता । कब ऐहैं मेरे बाल कुसल घर कहहु काग फुरि बाता ॥ १ ॥ दूध भात की दोनी देहौं सोने चोंच मढैहौं । जब सियसहित बिलोकि नयन भरि राम लषन उर लैहौं ॥ २ ॥ अवधि समीप जानि जननी जिय अति आतुर अकुलानी । गनक बुलाइ पाय परि पूछति प्रेम मगन मृदुबानी ॥ ३ ॥ तेहि अवसर कोउ भरत निकट तें समाचार लै आयो । प्रभु आगमन सुनत तुलसी मानो मीन मरत जल पायो ॥४॥१९॥

बैठी इ० । पद सुगम ॥ १९ ॥

राग गौरी । छेमकरी बलि बोलि सुबानी । कुसल छेम सिय राम लषन कब ऐहैं अवधि अवध रजधानी ॥ १॥ ससिमुषि कुंकुमबरनि सुलोचनि सोचतु वेद बखानी । देवि दया करि देहि दरसफल जोरि पानि बिनवहि सब रानी ॥ २ ॥ सुनि सनेहमय बचन निकट ह्वै मंजुल मंडल कै मडरानी । सुभ मंगल आनंद गगन धुनि अकनि अकनि उर जरनि जुडानी ॥३॥ फरकन लगे सुअंग बिदिसि दिसि मन प्रसन्न दुख दसा सिरानी । करहि प्रनाम सप्रेम पुलकि तन मानि विविध बलि सगुन सयानी ॥ ४ ॥ तेहि अवसर हनुमान भरत सो कही सकल कल्यान कहानी ।

तुलसिदास मोह चाह मनोबनि बिषम बियोग बिथा बडि भानी ॥ ५॥२० ॥

इस इ० । सेमकरी संपदमुखवाली चील को कहत हैं । काहू देश में खेमकल्यानी कहत हैं । ऐहैं अवधि अवध रजधानी । रजधानी की जो मीचां तेहि अयोध्या जी में कब ऐहैं ॥ १ ॥ हे शशिमुखी हे अरुणवर्णी तूं कहैं तुप ॥ २ ॥ ३ ॥ मानि विविधि बलि अनेकन पूजा मानि के ॥ ४ ॥ सोई कल्यान कहानी रूप इच्छित सजीवन ने बिषम बियोगजनित जो बड़ी व्यथा ताको जराय दिए ॥ ५ ॥ २० ॥

राग धनाश्री । सुनियत सागर सेतु बंधायो। कोसलपति की कुसल सकल सुधि कोउ एक दूत भरत पहि ल्यायो॥१॥ बध्यो बिराध बिसिरा पर दूषन सूपनषा को रूप नसायो। हति कबंध बल अंध बालि दलि कृपासिंधु सुग्रीव बसायो ॥ २ ॥ सरनागत अपनाइ बिभीषन रावन सकुल समूल बहायो। बिबुधसमाज निवाजि बांह दै बंदि छोर बर बिरुद कहायो ॥ ३ ॥ एक एक सों समाचार सुनि नगर लोग जहं तहं सब धायो। घन धुनि अकनि मुदित मयूर ज्यों बूडत जलधि पार सो पायो ॥ ४ ॥ अवधि आजु यों कहत परसपर बेगि बिमान निकट पुर आयो। उतरि अनुज अनुगनि समेत प्रभु गुरु द्विज गन चरननि सिरु नायो ॥ ५ ॥ जो जेहि लोग राम तेहि बिधि मिलि सब के मन अति मोद बढायो। भेंटी मातु भरत भरतानुज क्यों कहौं प्रेम अमित अनमायो ॥ ६ ॥ तेही दिन मुनिबृंद अनंदित तुरित तिलक को साज सजायो । महाराज रघुबंसतिलक को सादर तुलसिदास गुन गायो ॥ ७॥२१ ॥

सुनियत इ० सु० ॥१॥२॥३॥ मेघधुनि सुनि के जैसे मयूर महदित

होत अर्थात् तस प्रमुदित भए औ जस समुद्र में बूड़त पार पावै तस पाए ॥४॥ अनुग सेवक ॥ ५ ॥ अनमायो जो न अमाय ॥६॥७॥२१॥

राग जयतिश्री। रन जीति राम राउ आए। सानुज सदल ससीय कुसल आजु अवध अनंद वधाए ॥ १ ॥ अरिपुर नारि उजारि मारि रिपु विबुध सुवास बसाए। धरनि धेनु महिदेव साधु सब के सब सोच नसाए ॥ २ ॥ दई लंक थिर थप्यो बिभीषन बचन पियूष पिआए। सुधा सींचि कपि कृपा नगर नर नारि निहारि जिआए ॥ ३ ॥ मिले गुर बंधु मातु जन परिजन भए सकल मनभाए। दरस हरष दस चारि बरष के दुख पल में बिसराए ॥ ४ ॥ बोलि सचिव सुचि सोधि सुदिन मुनि मंगल साज सजाए। महाराज अभिषेक बरषि सुर सुमन निसान बजाए ॥ ५ ॥ ले ले भेंट नृप अहिप लोकपति अति सनेह सिरु नाए। पूजि प्रीति पहिचानि राम आदरे अधिक अपनाए ॥ ६ ॥ दान मान सनमानि जानि रुचि जाचक जन पहिराए। गए सोक सर सूखि मोद सरिता समुद्र गहिराए ॥ ७ ॥ प्रभुप्रताप रवि अहित अमंगल अघ उलूक तम ताए। किए बिसोक हित कोक कोकनद लोक सुजस सुभ छाए ॥ ८ ॥ रामराज कुलि काज सुमंगल सबनि सबै सुख पाए। देहिं असीस भूमिसुर प्रमुदित प्रजा प्रमोद बढाए ॥ ९ ॥ आस्रम धरम बिभाग वेद पथ पावन लोग चलाए। धरम निरत सियराम चरन रत मनहुं राम सिय जाए ॥१०॥ कामधेनु महि बिटप कामतरु कोउ विधि बाम न लाए। ते तव अब तुलसी तेउ जिन्ह हित सहित राम गुन गाए ॥ ११॥२२॥

रणः० मु० ॥ १॥२ ॥ सुधा मे सींचि के कपिन को औ कृपा से
र के नर नारि को जिआवन भए ॥ ३ ॥ दरश हरष दर्शन के हर्ष
महाराज अभिषेक महाराज के अभिषेक होने में ॥ ४ ॥ ५ ॥ अहिप
कपति शेष वासुकी आदि औ इन्द्रादि लोकपाल ॥ ६ ॥ सोक रूप
त्र सूखि गए औ आनंद रूप सरिता औ समुद्र अथाह होत भए
७ ॥ प्रभु के प्रताप रूप सूर्य ने अहित औ अमंगल औ अघ रूप
क को सुखदायी जो तम ताको नाश किए । इहां तम करि अविद्या
ा औ हित रूप चक्रवाक औ कमल को विगत सोक किए औ लोक
दर यश शुभ छाए ॥ ८ ॥ श्रीरघुनाथ के राज्य में सब काज में
ाल भयो औ सब ने सब प्रकार के सुख पाए ॥ ९ ॥ मनहुं राम
जाए मानो श्री सीताराम के पुत्र हैं । भूमि काम धेनु होत भई औ
कल्पतरु होत भए औ कोऊ पर विधाता बाम न भए ते प्रजा तब
राज्य में सुखी भए अब तेऊ सुखी हैं जे हितसहित रामगुण
॥ १० ॥ २२ ॥

राग टोडी । आजु अवध आनंद बधावन रिपु रन
ति रामु घर आए । सजि सुबिमान निसान बजावत
हित देव देपन धाए ॥ १ ॥ घर घर चारु चौक चंदन
ा मंगल कलस सबनि साजे । ध्वज पताक तोरन बितान
विविधि भांति बाजन बाजे ॥ २ ॥ रामतिलक सुनि
दीप के नृप आए उपहार लिए । सीयसहित आसीन
ासन निरपि जोहारत हरपि हिये ॥ ३ ॥ मंगल गान
ुनि जयधुनि मुनि असीस धुनि भुवन भरे । बरपि
न सुर सिद्ध प्रसंसत सब के सब संताप हरे ॥ ४ ॥ राम-
भद्र कामधेनु महि सुप संपदा लोक छाए । जनम
म जानकीनाथ के गुनगन तुलसिदास गाए ॥५॥२३ ॥

इति श्री रामगीतावल्यां लंकाकाण्डः समाप्तः ।

आजु इ० ॥ १ ॥ घर घर में सुंदर चौक चंदन ते औ मणि ते औ मंगल कलश सब ने साजे तोरण कहैं बंदनवार वितान कहैं मंडप ॥२॥ उपहार भेंट, आसीन बैठे ॥ ३ ॥ ४ ॥ श्री रघुनाथ के राज्य में भूमि कामधेनु भई सुख औ संपदा सब लोक में छावत भई जन्म जन्म में जानकीनाथ के गुनगन को गाए। इहां जन्म जन्म पद ते अपने को वाल्मीक जी को अवतार सूचन किए। स्पष्ट श्रीनाभा जी लिखे "कलि कुटिल जीव निस्तार हित वालमीक तुलसी भयो" लंका कांड की समाप्ति जैसे वाल्मीक जी रामराज्य में किए तैसे गीतावली में गोसाईं जी किए।

दोहा।

मंगल श्री सरयू सरित, मंगल विपिन प्रमोद ॥
मंगल सीता राम जू, जो मोदहु को मोद ॥

इति श्रीतुलसीदासकृतरामगीतावलीमकाशिकादीकायां श्रीसीताराम-कृपापात्र श्रीसीतारामीय हरिहरप्रसादकृतौ लङ्काकाण्डः समाप्तः।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली—उत्तरकाण्ड ।

मङ्गलाचरण—दोहा ।

इत कलँगी उत चंद्रिका, कुंडल तरिवन कान ।
सिय सियवल्लभ मो सदा, बसो हिये बिच आन ॥ १ ॥

मूल ।

राग सोरठ—बन ते आइ कै राजा राम भए भुआल । मुदित चौदह भुअन सब सुप सुखी सब सब काल ॥ १ ॥ मिटे कलुष कलेस कुलपन कपट कुपथ कुचाल । गए दारिद दोष दारुन दंभ दुरित दुकाल ॥ २ ॥ कामधुक महि कामतरु तरु उपल मनिगन लाल । नारि नर तेहि समय मुकुतो भरे भाग सुभाल ॥ ३ ॥ बरन आश्रम धरम रत मन बचन बेद मराल । राम सिय सेवक मनेहा साधु सुसुप रसाल ॥ ४ ॥ रामराज समाज बरनत सिद्ध सुर दिगपाल । सुमिरि सो तुलसो चरन हिय हरष होत बिसाल ॥ ५ ॥ १ ॥

टीका ।

बनइ० । भए भुआल पृथ्वीपालन में मुख्य भए चौदहो भुअन के सबै सब दिन औ सब काल में सब सुख करि सुखी होत भए । १ ॥ पाप करि क्लेश जो रोगजनित औ कुलपन कुलोद्भवतादि सो मिटे औ कपटकरि औ कुपथ में परि जो कुचाल ते चलन रहे सो मिटे औ दारुण दोष

दंभ औ पाप रूप दुकाल अर्थात् दुरभिक्षादि तें जो दारिद्रजनित दोष रहे सो गए ॥ २ ॥ भूमि कामधेनु भई, वृक्ष कल्पवृक्ष भए, पाथर सब लालमणि के समूह भए अर्थात् चिन्तामणि भए औ तेहि समय में नारि नर सुकृती औ सुन्दर भाल अपना भाग्य तें भरत भए ॥ ३ ॥ वरणाश्रम धर्म में रत औ मन वचन करि हंस सम वेषधारी अर्थात् बोली मधुर औ वेषौ उज्वल औ राम सिय के सेवक औ सनेही औ परकार्य्यसाधक औ सुमुख कहैं प्रसन्नमुख औ रसयुक्त बचन अर्थात् मिष्टभाषी ॥ ४ ॥ १ ॥

राग ललित—भोर जानकीजीवन जागे। सूत मागध प्रवीन वेनु बीना धुनि द्वारे गायक सरस रागरागे ॥१॥ स्यामल सलोने गात आलसबस जभाँति प्रियाप्रेमरस पागे। उनीदे लोचन चारुमुष सुषमा सिंगारु हेरि हारे मार भूरि भागे ॥ २ ॥ सहज सुहाई छबि उपमा न लहै कवि मुदित बिलोकन लागे। तुलसिदास निसिवासर अनूप रूप रहत प्रेम अनुरागे ॥ ३ ॥ २ ॥

भोर इ०। सूत पौराणिक, मागध वंशप्रसंसक, सरस रागतें रागे कहैं गावत भए। उनीदे लोचन निन्द भरे नयन सुन्दर और मुख की परम शोभा देखि शृंगार रस हारे औ एक के को कहै बहुत काम भागे ॥ १ ॥ स्वाभाविक सुन्दर छवि ताकी उपमा कवि नहीं पावत। हर्षित सब देखन लागे यह अनूप रूप के प्रेम में राति दिन दास अनुरागे रहत हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ २ ॥

राग कल्यान—रघुपति राजीवनयन सोभा तन कोटि मयन करुनारस अयन चयन रूप भूप माई। देषो मषि अतुलित छवि संतवंश कानन रवि गावत कल कीरति कवि कोविद समुदाई ॥ १ ॥ मज्जन करि सरजुतीर ठाढे रघुबंस बीर सेवत पदकमल धीर निरमल चित लाई। ब्रह्मंडकी

पूर्णचंद्र सम्य इंदुवदन राजत मुखसदन लोकलोचन सुख-दाई ॥ ३ ॥ विद्युरित सिरुहवरन कुंचित बिच सुमनजूथ-मनिजुत सिरफनि अनीक समि समीप आई । जनु सभीत है चकोर राखि मुख रुचिर मोर कुंडलछवि निरखि चोर मधुप बन अधिकाई ॥ ४ ॥ ललितभ्रकुटि तिलकभाल चिबुक अधर द्विज रसाल दाम उतंतर कपोल नासिका सुहाई । मधुकर जुग पंकज बिच मुख विलोकि नीरज पर जरत मंजर अवली मानो बीचि कियो जाई ॥ ५ ॥ सुंदर पट पीत विमद भ्राजत बनमाल उरसि तुलसिका प्रसून रचित विविध विधि बनाई । तरु तमाल अधबिच जनु त्रिविधि कीर पांति रुचिर हेमजाल अंतर परि तातें न उड़ाई ॥ ६ ॥ संकर हृदि पुंडरीक निवसत हरि चंचरीक निरब्यलोक मानस गृह संतत रहे छाई । अतिमय आनंद मूल तुलसिदास सानुकूल बरन सकल मूल अवधमंडन रघुराई ॥ ७ ॥ ३ ॥

रघुपति इ०। सखी प्रति सखी कहति है। री माई अर्थात् री सखी रघुपति जो कमलनयन हैं औ जिन के तन की शोभा कोटिमयन सम है औ करुणारस के अयन कहे गृह हैं औ चैनदाता रूप भूप हैं जिन को बाजावत चैन कहे आनंद रूप ब्रह्मादि तिन के भूप हैं तिन को देखो अतुलित छवि है उन की औ संत रूपी कमल बन के सूर्य हैं अर्थात् प्रफुल्लित करनिहारे हैं औ उन की सुंदरि कीरति कवि पंडितन को समुदाय गावत हैं ॥१॥ सो श्रीरघुवंश वीर स्नान करि के सरजूतीर में खड़े हैं। धीर कहे ज्ञानी अपने निर्मल चित्त को लगाय उन के पद कमल को सेवत हैं। ब्राह्मणन की मंडली औ मुनिन के समूहन के बीच में चंद्रवदन सुखसदन सब लोग के नैनन को सुखदाता श्रीरघुनाथ सोहत हैं। ब्राह्मण वशिष्ठ न्याय करि ब्रह्ममंडली ते मुनींद्रवृन्द पृथक् लिखे ॥ २ ॥ सिरुह

कहैं वार कुंचित कहैं टेढे तिन को वरूथ कहैं समूह विथुरित कहैं बिखरे भए हैं। तिन के बीच बीच फूलन के गुच्छे गथे हैं, सो मानो मणि-युक्त सर्पन के बालकन की सेना चन्द्रमा के समीप आई है, सो सेना देखि चंद्रमा डरि अकोर दै जुगल सुंदर कुंडल जो मयूर है ताको राखे अर्थात् सर्प को मयूर खात है तिन कुंडल मयूरन की छवि देखि चोर सर्पबालक बहुत सकुचत हैं। इहां मणि गूथे भये पुष्प हैं, सिसुफणि की सेना टेढे बिखरे वार हैं चन्द्रमा मुख है कुंडल के आड़ कर वार मुख पर नहीं आय सकत है सो सकुचना है। शंका। सर्प को मणि गुप्त रहत हैं इहां फूल तो प्रगट है। उत्तर। मणि जो सिर पर गुप्त रहत है ताकी आभा बाहर चमकत है तैसे बालन में पुष्प गुप्त हैं किंचित् पसुरी जो निकली है सो आभा रूप हैं ॥३॥ भौंहैं ललित हैं औ भाल तिलक औ ठोढ़ी औ ओठ औ दांत रसीले हैं हंसी अति सुंदर है औ कपोल नासिका सुंदर है मानो नीरज कहैं कमल इहां कमल करि नेत्र जानना तिन के ऊपर भ्रम की अवली लरत हैं, यहां भ्रमर की पंक्ति दोनो भौंहैं हैं सो कमल रूप नेत्र के रस पान करिबे हेतु लरत हैं सो बिलोकि मधुकर जुगल जो कमल में हैं, इहां मधुकर जुगल कस्तूरी को तिलक रेख है। जो केसर को तिलक मानो तो पीत जुगल मधुकर जानो पंकज मुख है अर्थात् कमल बदन पर जो जुग मधुकर तिलक रेख सो औ नासिका रूप सुआ सो दोऊ के बीच अर्थात् दोऊ भौंह भ्रमरावली के बीच कियो। भाव धरहर कियो जाय कै ॥ ४ ॥ सुंदर पीत वस्त्र धारे हैं औ बिमद बनमाल तुलसी औ पुष्प करि रचित विविधि विधान ते बनाई उर में शोभत। मानो तमाल वृक्ष के अधबिच त्रिविध सूगन की पांति अचिर बैठी है। कोऊ संदेह करै कि पक्षी चंचल होत हैं थिर क्यों है रहे हैं, ता हेतु लिखत हैं कि सोने के जाल के भीतर परे हैं ताते उड़ात नहीं हैं। इहां तमाल तरु राघव हैं। अधबिच वक्षस्थल है त्रिविध कीर पांति बन-माला जो हरित श्वेत पीत तुलसी पुष्पन करि है सोहै, सोने की जाल पीत वसन है ॥ ५ ॥ शिव जी के हृदय कमल में राम रूपी भंवर जो नेवास करत है औ विर्ग्यलीक कहैं दूषनरहित मानस कहैं हृदय रूप गृह में निरंतर जो छायो रहत है औ अतिसै आनंद को मूल है औ

सकल भूल हरणिहारो औ श्री अवध के मंडन कहैं भूषन करनिहारो रघुराई, मैं जो तुलसीदास ता पर सानुकूल रहौं ॥ ६॥३॥

राजत रघुवीर धीर भंजन भवभीर पीरहरन सकल सरजूतीर निरपत्रु लखि मोहैं । संग अनुज मनुजनिकार दनुजबल विभंगकरन अंग अंग छवि अनंग अगनित मन मोहैं॥१॥ मुखमा मुख मोल नयन नयन निरखि निरखि नील कुंचितकच कुंडल कल नासिक चित पोहैं । मनहुं इंदुबिंब मध्य कंज मीन खंजन लखि मधुप मकर कीर आए तकि तकि निज गोहैं ॥ २ ॥ ललित गंडमंडल भ्रुविसाल भाल तिलक भालक संजुतर अवंक अरु रुचिर वंक भौंहैं । अरुन अधर मधुर बोल दसन दमक दामिनिदुति मुलमति प्रिय हसनि चारु चितवनि तिरछौंहैं ॥ ३ ॥ कंबुकंठ भुजविसाल उरसि तरुन तुलसिसाल संजुत मुक्तावलिजुत जागति सिय ओ हैं । जनु कलिंद नंदिनिमनि इंद्रनील सिखर पर सिधमति लसति हंसवनि मंजुल अधिकौ हैं ॥ ४ ॥ दिव्यतर दुकूल मध्य नव्य रुचिर चंपकचय चंचला कलाप कनक निकर बनि किधौ हैं । सज्जन सुख भूषनिकित भूषन मनिगन समेत रूप जलधि वपुष जित मन गयंद वोहैं ॥ ५ । अकनि देवन चातुरी तुरीय पेखि प्रेममगन गगन परत इत उत सब चकित तेहि समो हैं । तुलसिदास यह मुधि नहि कोन को कहां ते आइ कौन जाउ काके टिग कौन ठाउं कोहैं ॥ ६॥४॥

राजत इ० । श्री सती रघुवीर धीर भंजन करनिहारे भवभीरी धीर हरो औ सकल पीर हरनिहारे सरजू नीर में मेरे कोई दुश्मन शोभन न देखहु । भाई औ बहुत मनुष्य संग हैं औ दुश्मन के हद को

विसेष तोड़निहारे हैं जो दनुजबन पाठ होय तो अस अर्थ करना दनुज रूप बन को तोड़निहारे हैं। हैं तो ऐसे बलिष्ट पर सुंदर ऐसे हैं कि अंग अंग की छवि पर एक को को कहँ अगिनित काम मोहैं ॥१॥ परमा शोभा औ सुख औ शील के गृह जे नैन हैं तिन्हैं देख औ श्याम टेढ़े बाल औ कुंडल औ सुंदर नासिका जे चित्त पोहत हैं तिन्हैं देखु। भाव वशकरि लेत हैं सो मानो चंद्रमा के बिंब के मध्य में कमल मछरी पंजरीट लखि कै भँवर मछरी सुआ अपने अपने गोहैं कहँ संबंध जानि आए। इहां चंद्रबिंब श्री राघव को मुख है तेहि मध्य कमल मीन खंजन रूप नेत्र हैं तेहि को देखि कै कमल जानि बाल रूप भ्रमर आए औ कुंडल रूप मकर अपनो सजाती नेत्र मीन को मानि आए औ नासिका जो कीर सोऊ अपनो सजातीय अर्थात् पक्षी नैन खंजन को जानि आए ॥ २ ॥ ललित कपोल मंडल है औ सुंदर बिसाल भाल तामें तिलक अति सुंदर टेढ़ी भौंहैं अंक सम हैं औ लाल ओठ हैं बोल मधुर है दांतन की चमक दामिनि की दुति सम है हँसनि औ तिरछी चितवनि देखि हृदय हुलसति है ॥ ३ ॥ संख के तीन रेखा सम कंठ है भुज बिसाल है उर में तुलसी की माला मोतिन की माला युक्त है जाको योगी जिय सो देखत हैं मानो यमुना जी नीलमनिंद्र पहार के सिखर को परसि धसति कहैं गिरति तहां हंसनि की पंक्ति संकुल कहैं संकीर्ण अधिक होति अर्थात् एक में एक सटि लसति इहां यमुना तुलसी की माला है· मनींद्रनील रघुनाथ हैं सिखर कांधा है ताको परसि धारासम माला नीचे को गिरयो है ताके पास मोतिन की माला है सो हंस की पंक्ति है ॥ ४ ॥ अति अलौकिक पीत बसन भव्य कहैं सुंदर नवीन जो है सो कैधों सुंदर चंपा के पुष्पन का समूह है कैधों बिजुरीन को समूह है कैधों सोननि के भ्रमरन को समूह है अर्थात् पीत भ्रमरन का समूह है औ रूप रूपी समुद्र जो है सो भूषन रूप मनिगन समेत सज्जन के नेत्र रूप मछरी के निकेत कहैं रहिवे को स्थान है। भाव समुद्र में मछरी रहत है सो इहां सज्जन का नेत्र है, वहां मुनिगन रहत इहां भूषन है, तेहि रूप रूपी समुद्र में मन रूप हाथी को वपुष कहैं सरीर बोह लेत है अर्थात् डूबत उतिराति है ॥५॥

सखी के वचन को चतुराई अवनि कहँ मुनि नव तुरीय जो श्रीरघुनाथ तिन को देखि के प्रेम मे वचन भई. पग नहीं इत घर के ओर पग न उत सरजू ओर परत नहि समय मों सब चकित ह्वै गई। गोसांई जी कहत हैं यह मुनि नहीं रहीं कि कवन की हौं औ केहि ठांव ते जाउं मों कौन काज करना है काके ढिग हौं औ कवन ठांव के रहैया हौं तुरीय ने रघुनाथ बोध हेतु प्रमान। "तुरीया जानकी प्रोक्ता तुरीयो रघुनंदनः' इति महागमायणे ॥ ६।४ ॥

देषु सखि आजु रघुनाथ सोभा घनी। नील नीरद बरन बपुष भुवनाभरन पीत अंबर धरन हरन दुतिदामिनी ॥१॥ सरजु मज्जन किये संग मज्जन लिये हेतु जनपर हिये कृपा कोमल घनी। मजनि आवत भवन मत्त गजवरगवन लंक मृगपति ठवनि सुघर कोसल धनी ॥२॥ सघन चिक्कन कुटिल चिकुर बिलुलित मृदुल करनि विवरत चतुर सरस सुषमा जनी। ललित अहिसिसुनिकर मनहुं ससि सन समर करत धरहरि करत रुधिर जनु जुगफनी ॥ ३ ॥ भाल भ्राजत तिलक जलज लोचन पलक चारु भ्रू नासिका सुभग मुख आननी। बिंबुक सुंदर अधर अरुन द्विज दुति सुधर बचन गंभीर मृदु हास भव भाननी ॥ ४ ॥ स्रवन कुंडल बिमल गंड मंडित चपल कलित कलकांति अति भांति कछु तिन तनी। जुगल कंचन मकर मनहुं विधुकर मधुर पिअत पहिचानि करि सिंधु कीरतिभनी ॥ ५ ॥ उरसि राजत पदिक जोति रचना अधिक माल सुबिसाल चहुं पास बनी गजमनी। स्याम नव जलद पर निरषि दिनकर कला कौतुको मनहुं रहि घेरि उडगन अनी ॥ ६ ॥ मंदिरनि पर परी नारि आनंद भरी निरषि बरषहिं बिपुल कुसुम कुंकुम कनी। दास तुलसी राम

परम करुना धाम काम सतकोटि मद हरत छबि आपनी ॥ ७ ॥ ५ ॥

देखु इति । हे सखी आजु जो रघुनाथ की शोभा बनी सो देखु । श्याम मेघ सम शरीर को रंग है सो शरीर समस्त भुवन के आभरन कहँ भूषन रूप है औ पीतवसन का जो पहिरन है सो दामिनी की द्युति हरनिहारो है, सरजू ते भंजन किए संग में सज्जनन को लिए हेतु कहँ प्रीति जन के ऊपर जिन क हृदय में है औ कृपा करि कोमल स्वभाव बनी कहँ अत्यंत है औ मतवारे श्रेष्ठ हाथी सम चाल है औ लंक कटे कटि औ ठवनि कहे अकड़ सिंह सम है । हे सजनी कोशल धनी कुँअर भौंन आवत हैं ॥ २ ॥ सघन चिक्कन टेढ़े बार अरुझे भाव स्नान किए ते अरुझे हैं ताको कोमल हाथ सो रघुनाथ विवरत कहँ पृथक् पृथक् करत तासे अतिरसयुक्त परमा शोभा जनी कहँ उत्पन्न भई । सुंदर सर्पन के बालकन के समूह मानो चन्द्रमा सन युद्ध में लरत तहां दुइ सर्प सुंदर धरहरि करत हैं इहा सर्पन के बालकन के समूह बार हैं शसि मुख है युग फनी दोउ हाथ है मुख पर जो बार परत हैं सो लरब है हाथन ते जो सम्हारब है सो धरहरि है। भाव यह कि अमृत हेतु चंद्रमा सो सर्पन के बालक लरत हैं दुइ बड़े सर्प धरहरि करत हैं। कि जो कोई अपना माल न दे तो तासो लड़ना न चाहिये ॥ ३ ॥ ललाट में तिलक शोभत कमल सम नेत्र हैं पलकैं और भौंह सुंदर हैं औ नासिका सुंदर सुगा के मुख सम है, अर्थात् ठोर सम टोढ़ी औ अरुन अधर ओष्ठ के नीचे को भाग औ दांतनि की दुतिधर कहे ओष्ठसहित सुंदर है । बचन गंभीर है औ मृदु हँसी संसार की नासनिहारी है ॥४॥ कानन में चंचल निर्मल कुंडल हे तिन्ह करि कपोल भूषित हैं कल कहँ सुंदर शोभित अति प्रकाशित जिन्ह की कांति तिन्ह कुंडलन ने कछू तनी कहँ विस्तार कियो है । ताको कहत हैं मानो दुइ सोने के मकर अर्थात् कुंडल रूप मछरी चंद्र की किरन मधुर अमृत पियत इहां मुख चंद्र है रूप अमृत है, समुद्र की कीर्ति जो भनी भई हैं अर्थात् चन्द्रमा अमृत आदि समुद्र ते उत्पन्न है यह कीर्ति तें पहिचानि करि के पियत कि हमहुं समुद्र तें उत्पन्न हैं तो भाई के चीज लेवे में दोष नहीं ॥ ५ ॥

ग में पदिक शोभति ताकी रचना की जोति अधिक है औ गजमुक्ता करि बनी सुंदर विशाल माला चहुं पास शोभत सो मानो श्याम नवीन मेघ पर सूर्य की कला देखि के कौतुक करनेवाली तारागन की सेना घेर रही। इहां श्याम नव जलद रघुनाथ को वक्षस्थल है औ पदिक जोति दिनकर की कला हैं तारागन मोती की दाना हैं, कौतुक मेघ सूर्य की कला को होनो हैं ताको देखि तारागन विचारे हमहूं सब उलटी करैं जाते मेघ के ऊपर ताहू पर सूर्य के समीप आनि बैठे यह अति आश्चर्य कौतुक किये ॥ ६ ॥ मंदिरन पर खड़ी आनंद भरी नारि निरखि के बहुत फूल औ कुमकुम कहैं केसरि वा रोरी ताकी कनिका को दृष्टि करति हैं। गोसाईं जी कहत हैं परम करुणा के धाम जो राम सो आपनी छवि सो सौ कोटि काम के मद को हरत हैं ॥ ७ ॥ ५ ॥

बाहु रघुबीर छवि जातिनहि कछु कही। सुभग सिंहासनासीन सीतारमन भुवन अभिराम बड़ धाम सोभा सही ॥ १ ॥ चारुचामर व्यजन छत्र मनिगन विपुलदाम मुकुतावली जोति जगिमगि रही। मनहुं राकेस सँग हंस खडगन वरहि मिलन आये हृदय जानि निज नाथही ॥ २ ॥ मुकुट सुंदर सिरसि भालवर तिलक भ्रूकुटिल कचकुंडलनि परम शोभा लही। मनहु हरडर जुगल मारध्वज की मकरलागि श्रवननि करत मेरु की बतही ॥ ३ ॥ बदन राजीवदल नयन करुना अयन वदन सुषमासदन हासमय तापही। विविधि कंकनहार उरसि गजमनिमाल मनहु बगपांति जुगमिलि चली जलदही ॥ ४ ॥ पीत निरमल वैस मनहु मरकत सैल पृथुलदामिनि रही छाइ तजि सरजही। लसित सायकचाप पीनु भुजबल अतुल मनुजतन दनुजदल दहन मंडन मही ॥ ५ ॥ जासु गुन रुपनहि कलित निरगुन सगुन

संभुसनकादि सुक भक्ति दृढ करि गही। दासतुलसी राम चरन पंकज सदा वचन मन करम चहै प्रीति नित निरवही ॥ ६ ॥ ६ ॥

आजु इ० । आसीन बैठे, भुवन अभिराम चौदहों भुवन में सुंदर है, सही सत्य ॥ १ ॥ सुंदर चंवर पंखा छत्र तामो बहुत मनिगन औ मोतिन की पंक्ति अर्थात् झालरि लगी है औ दाम कहैं गुच्छा तिन की जोति जगमगाय रही मानो छत्र नहीं राकेस कहैं पूर्णचन्द्र है, चमर नहीं हंस है। चमर स्वेत होत है ताते हंस कहे। मुक्तामणि नहीं है तारागन हैं औ पंखा नहीं है वरही कहैं मयूर है, हृदय में अपना स्वामी जानि मिलन आय पंखा मयूर के पक्ष का है औ मयूर के नाचवे सम डोलत रहत है ताते मयूर कहे ॥२॥ सुंदर मुकुट सिरपर है औ ललाट में श्रेष्ठ तिलक है भौंहैं टेढ़ी हैं औ दोऊ कुंडल परम प्रभा को लही है मानो शिव जी के डर ते कामदेव के ध्वजा के दोऊ मछरी कान मों लगी मेल की बतकही करत हैं। इहां दोऊ कुंडल मछरी हैं। भाव हमारे स्वामी काम को मारि डारे अब हम को भी शिव कदापि मारि डारैं यह हेतु शिव जी को स्वामी रघुनाथ को जानि मेल की बतकही करत हैं कि इन के कहे शिव जी न मारैंगे मेल है जायगो ॥ ३ ॥ लाल कमल सम नेत्र करुणा के गृह हैं औ मुख परमा शोभा को घर तीनों ताप हरता है और विविध प्रकार के कंकन हारादि अर्थात् बनमाला आदि औ उर में गजमुक्ता की माला है सो मानो माला नहीं है जुगवगति पांति है, शरीर रूप मेघ सो मिलि चली है ॥ ४ ॥ मलरहित पीतरंग को बसन मानो शरीर रूप मरकतमणि के शैल पर पृथुल कहैं समूह पीताम्बर रूप बिजुली सहज ही स्वभाव जो चंचल ताको तजि के छाय रही थिर होय रही, पीनभुजा औ बल अतुलित है, सुंदर बान धनुष धारे मनुष्य के शरीर सम शरीर औ दनुज रूपी बन के दहन कहैं अग्नि औ पृथ्वी के भूषणकर्ता हैं ॥ ५ ॥ गुण रूप को निर्गुण सगुण शिवादि नहीं कहत अर्थात् नहीं निश्चय करि सकत। शंभु सनकादि शुक ने केवल भक्ति ही को दृढ़ करि गहि रही है। गोसाईं जी कहत हैं

हि रघुनिंद राम के चरण कमल में सदा मन वचन कर्म करि प्रीति
सो निबाहियो चाहत हैं ॥ ६॥६ ॥

रामराज राजमौलि मुनिवर मनहरन सरन लायक
सुखदायक रघुनायक टेरोरी । लोक लोचनाभिराम नीलमनि
तमाल स्यामरूप सीलधाम अंगछवि अनंगकोरी ॥१॥ भ्राजत
सिरमुकुट पुरट निरमित मनिरचित चारु कुंचित कच रुचिर
परमसोभा नहि थोरी । मनहुं चंचरीक पुंजकंज वृंद प्रीति-
लागि गुंजत कलगान तान दिनमनि रिझयोरी ॥ २ ॥ अरुन
कंजदल विमल लोचन भ्रू तिलकभाल मंडित श्रुतिकुंडलवर
सुंदरतर जोरी । मनहुं संघरारि मारि ललित मकर जुग-
विचारि दीन्हे ससिकहं पुरारि भ्राजत दुहुंओरी ॥ ३ ॥
सुंदर नासा कपोल चिबुक अधर अरुन बोल मधुर दसन
राजत जब चितवत मुखमोरी । कंजकोस भीतर जनु कंजराग
सिपर निकर रुचिर रचित बिधि विचित्र तडित रंगबोरी
४ कंबुकंठ उरविसाल तुलसिका नवीनमाल मधुकरवर
रास विवस उपमा मुनिसोरी । जनुकलिंद जात नीलसैल ते
सी समीप कंदवृंद बरषत छवि मधुर घोरिघोरी ॥ ५ ॥
निरमल अति पीतचैल दामिनि जनु जलदनील रायी निज
भाहित विपुल विधि निहोरी । नैननि को फल विसेष
अगुन सगुन बेष निरपहु तजि पलक सुफल जीवन
योरी ॥ ६ ॥ सुंदर सीतासमेत सोभित करुनानिकेत
वक सुख देत लेत चितवत चितचोरी । वरनत यह अमित
थकित निगम नागभूप तुलसिदास छवि विलोकि सारद
भोरी ॥ ७ ॥ ७ ॥

राम राज ६० । राजन के मौलि कहैं मस्तक रूप औ मुनिंबरन के मन हरनिहारे औ शरण के योग्य सुख के दाता रघुकुल के स्वामी वा रघु नाम जीव ताके स्वामी जो राम राजा तिन को री सखी देखो सब जग के नेत्रों को रमणीय हैं औ नील मणि सम श्याम औ चिकन औ तमाल सम पुष्ट औ श्याम हैं औ रूप औ शील के गृह हैं औ कोरी कहैं करोरिन काम की छवि है जाको ॥ १ ॥ सिर में पुरट कहैं सोना ताको मुकुट निर्मित कहैं बनायो औ मणिन करि जड़ित सुंदर शोभत औ सुंदर टेढ़े बाल तिन की उत्कृष्ट शोभा थोरी नहीं मानो बाल नहीं भ्रमरन को समूह हैं मुख औ दोऊ नेत्र एही कमलन के वृंद हैं तिन के प्रीति लागि गुंजार करत हैं सो सुंदर तान करि गान ते सूर्य रूप मुकुट को रिझायो । भाव सूर्य को चंचल सुभाव है ताको रीझि कै छोड़ि थिर है बैठे ॥ २ ॥ लाल कमल के दल समान विशाल नेत्र हैं औ भौंह करि तिलक करि भाल शोभित है औ श्रेष्ठ कुंडलनि की जोड़ी अति सुंदर कानन में हैं मानो संवरारि कहैं काम ताको मारि कुंडल नहीं हैं ताके पताका केलित दोऊ मछरी हैं तिन को मुख रूप चंद्रमा कहं शिव जू दियो सो दोऊ ओर शोभत है ॥ ३ ॥ नासिका औ कपोल औ ठोड़ी सुंदर हैं औ ओठ लाल हैं बोल मधुर है जब मुख मोरि देखत हैं तब दांतै शोभत हैं मानो कमल कोस के भीतर कंज कहैं कमल राग कहैं लाल अर्थात् लाल कमल तिन के सुंदर शिखर का समूह अर्थात् पखुरिन का समूह विधि कहैं ब्रह्मा ने आश्चर्य्य बिजुली के रंग में बोरि कै रचित कियो है । इहां कंज कोस मुखकोस है ताके भीतर लाल कमल को शिखर को समूह दांतै अरुण है तड़िता को रंग झलक है वा कंज राग कहैं पद्मरागमणि शृंग तिन के समूह ॥ ४ ॥ शंख सम कंठ है छाती चौड़ी है तामें नवीन तुलसी की माला है तेहि विषे श्रेष्ठ सुगंध ते विवस है भ्रमर घेरि रहे हैं ताकी जो उपमा है री सखी सो सुनु । मानो कलिंदजात कहैं जमुना जी नील परबत ते धसी कहैं गिरी तिन के समीप कंद वृंद कहैं मेघन को समूह । इहां जमुना श्याम तुलसी की माला हैं श्री राघव को शरीर नीलपर्वत है धसिबो माला को नीचे के ओर लटकनो है ताके समीप जो

[illegible] का और है सो देख है. माता के पुत्र के सम देह उदन हैं मुख से [illegible] सब दरत है सो करुना है. जो गुंजार शब्द करत हैं सो गरजना है ॥५॥ अति निर्मल जो पीत बसन बिजली सम ताको मानो श्याम देह ने बहुत प्रकार निहोरो करि अपने शोभादित राखी है। इहां श्याम देह श्याम शरीर है. पीत बैल (कपड़ा) दामिन में रूपक अलंकार है। जनु लसेता है, नील जलद में रूपकातिशयोक्ति नील अलंकार का संकर है। निंद्य कारि मैनन को फल रूप सब अगुण सगुण वेष श्री रामचंद्र को निंदत भनि देखहु. तब अपने जीवन को सुफल जानो ॥ ६ ॥ करुणा-निधि करुणा के मूल, निगम वेद, नागभूप शेष ॥६॥७॥

राग केदारा—सखि रघुनाथ रूपनिहारु। सरदविधु रविसुत मनसिज मानभंजनिहारु ॥१॥ स्यामसुभग सरीर सुनमन धाम पूरनिहारु। धामचंदन मनहु मरकत सिखर लसतनिहारु ॥ २ ॥ रुचिर उर उपवीत राजतपदिकगजमनिहारु। मनहुं इंद्र धनु नपतगन बिच तिमिरगंजनिहारु ॥ ३ ॥ बिमल-तर दुकूल दामिनिदुति-बिनिंदनिहारु। वदन सुषमासदन सोभितमदन मोहनिहारु ॥ ४ ॥ सकल अंग अनूपनहि कोउ कबि पूरननिहारु। दासतुलसी निरषतहि मुषलहत निरंप-निहारु ॥ ५ ॥ ८ ॥

सखि इ० । शरद को पूर्ण चन्द्र औ अश्वनीकुमार औ काम के [illegible]कार भंजनिहार रूप निहारु ॥ १ ॥ सुंदर चंदन जो शरीर में है मानो मरकत के शिखर पर निहारु कहँ बरफ लसत है ॥ २॥ सुंदर [illegible] में यज्ञोपवीत औ पदिक कहँ चौकी औ गजमुक्तन का हार शोभत [illegible] मानो यज्ञोपवीत नहीं है इन्द्र धनु है। इहां केवल आकार में उपमा [illegible]ग में नहीं। गजमनि हार नहीं है तारागण है ताके बीच में चौकी [illegible] है तिमिरगंजनिहारु कहँ सूर्य हैं ॥ ३ ॥ दामिनि के दुति को [illegible] करनिहारो निर्मल पीत बसन है जाको औ मदन को मोहन

करनिहारो परमा शोभा को गृह को शोभित वदन जाको ॥४॥ निरखि-निहार देखनेवालों पर ॥ ५ ॥ ८ ॥

सपि रघुवीर मुप छविदेपु । चित्तभीति सुप्रीति रंगसुरू-पता अवरेपु ॥ १॥ नयन सुपमा निरपि नागरि सुफल जीवन लेपु । मनहुं बिधि जुग जलज बिरचे ससि सुपूरन मेपु ॥ २॥ भृकुटि भालबिसाल राजत रुचिर कुंकुमरेपु । भ्रमर है रवि किरन ल्याए करनजनु उनमेपु ॥ ३ ॥ सुमुखि केस सुदेस सुंदर सुमन संजुत पेपु । मनहु उडगन बाहु आये मिलन तम तजि देपु ॥ ४ ॥ श्रवन कुंडल मनहुं गुरु कवि करत वाद विसेपु । नासिका द्विज अधर जनु रच्यो मदन करि वड्डवेपु ॥ ५ ॥ रूपवरनि नहि सकत नारद संभु सारद सेपु । कहै तुलसीदास क्यौं मतिमंद सफल नरेपु ॥ ६ ॥ ८ ॥

चित्त रूपी भीत पर सुंदर प्रीति रूपी रंग तें ता स्वरूप को लिखि लेहु ॥ १ ॥ हे नागरि नेत्रों की परमाशोभा देखि कै अपने जीवन को सुफल लेखो । मानो नेत्र नहीं हैं ब्रह्मा ने मेप राशि के पूर्ण चन्द्रमा में जुगल कमल बनाए हैं । इहां मेप राशि को पूर्णचन्द्र श्री राघव को मुख है । मेप के चन्द्रमा निर्मल होत है औ मेपही के सक्रांति में श्री राघव को जन्महू हैं ताते मेप के चन्द्रमा की उपमा दिए । चंद्र दिग कमल कैसे विकाशित भए सो हेतु आगे लिखत हैं ॥ २ ॥ भौंहैं युक्त भाल जो विशाल है तामें सुंदर केसरि को जुगल रेखा शोभत है, मानो भौंह दोनों भ्रमर हैं तिन्हों ने उन्मेप कहँ विकाश करिवे हेतु नेत्र रूप कमल के कुमकुम रेखा रूप सूर्य किरन को लाए । भाव यह कि मुख रूप चंद्र देखि संकुटित भए हैं तिन को तिलक रेख रूप सूर्यकिरिन ते प्रफुल्लित करायो चाहत हैं । छवि रूप मकरंद के पान करिवे हेतु ॥ ३ ॥ सुंदर मुख पर केश अपने भाग पर सुंदर पुष्पन युत देखु, मानो फूल जो हैं सो तारागन हैं तिन्ह के वाह ते वाररूप तम मुख रूप चन्द्र तें मिलन

भयो ॥ ४ ॥ कानन में जो दोऊ कुंडल हैं सो बृहस्पति शुक्र हैं परस्पर वाद करत हैं यहां कुंडलन का हलना सो वाद है। नाक दांत ओठ नहीं हैं मानो काम बहुत वेष करि टिक रह्यो है ॥ ५ ॥ सकल नरेषु सब मनुष्यन में ॥ ६ ॥ ९ ॥

राग जयतश्री—देषोराघो वदन विराजत चारु। जात न वरनि विलोकतही सुष सुष विधौं छवि वरनारि सिंगारु ॥१॥ रुचिर चिबुक रद जोति अनूपम अधर अरुन सित हास निहारु। मनो ससिकर वस्यो चहत कमलमहुं प्रगटत दुरत न वनत विचारु ॥२॥ नासिक सुभग मनहुं सुकसुंदर चितवत चकित अचरजु अपारु। कल कपोल मृदु बोल मनोहर रीझि चित चतुर अपनपौ वारु ॥ ३ ॥ नयन सरोज कुटिल कचकुंडल भृकुटि सुभाल तिलक सोभासारु। मनहुं केतु कै मकर चाप सर गयो विसरि भयो मोहित मारु ॥४॥ निगम सेष सारद सुकसंकर वरनत रूप न पावत पारु। तुलसिदास कहै कही कौन विधि अतिलघु मति लंड कूर गंवारु ॥ ५॥१० ॥

देखो इ०। हे सखी देखो श्री राघव को मुख सुंदर सोभत है। देखत ही जो सुख होत है सो वरन्यो नहीं जात है, मुख है कैधौं श्रेष्ठ छवि रूप स्त्री को शृंगार है ॥ १ ॥ सुंदर ठोढ़ी है औ दांतनि की जोति अनुपम है ओठ लाल औ हंसी उज्ज्वल इन सब को निहार। मानो हंसी रूप चंद्रमा की किरण ओठ रूप कमल में बसो चाहत है पर विचार नहीं बनत कबहूं प्रगटत कबहूं छिपि जात है अर्थात् जब रघुनाथ मुसकात तब प्रगटत जब मुसुकाव छोड़ देत तब छिपि जात ॥ २ ॥ नासिका जो सुंदर सो मानो सुवा को चोंच है। अपार आश्चर्य करि देखनवारे चकित होय ताको चितवत है सुंदर कपोल है औ कोमल बोल मनोहर है ताको सुनि चतुर जन चित में रीझि के अपनो अपनपो कहै देहाध्यास वा आत्मा अपना नेवछावरि करत ॥ ३ ॥

नेत्र कमल सम हैं, टेढ़े बाले हैं औ कुंडल भौंह सुंदर भालतिलक ए सब शोभा को सारांश रूप हैं मानो कुंडल नहीं केतु कहैं ध्वजा पर के मीन हैं औ भृकुटी नहीं हैं चांप है तिलक नहीं है बाण है श्री रघुवर मुख देखि मोहित होय काम इन सब को विसारि गयो ॥ ४।५॥१० ॥

राग ललित—आजु रघुपति मुख देखत लागत सुख सेवत सुख सोभा सरद ससि सिहाई। दसन बसन लाल-बिसद हास रसाल मानो हिमकरकर राषे राजीव मनाई ॥१॥ अरुन नयन बिसाल ललित भृकुटि भालतिलक चारुतर-कपोल चिबुक नासा सुहाई। बिथुरे कुटिल कच मानहु मधु लालच अलिनलिन जुगल ऊपर रहे लुभाई ॥ २॥ श्रवन सुंदर सम कुंडल कलजुगम तुलसिदास अनूप उपमा कहि न जाई। मानहुं मरकत सीप सुंदर ससिसमीप कनक मकरजुत विधि विरचि बनाई ॥ ४ ॥ ११ ॥

हे सखी आजु रघुपतिमुख देखत सुख लागत कहै सुख होत है। वह मुख कैसो है कि सेवक पर सुंदर सुखपूर्वक रहत है औ जाके शोभा कों शरद पूनो को चंद्रमा सिहात है। दसन वसन कहैं ओठ सो लाल है औ हांस उज्ज्वल रसीला है मानो मुख नहीं चंद्रमा है उज्ज्वल हांस नहीं ताकों कर कहैं किरन है तिहि से ओष्ठ रूप कमल को मनाइ राखे भाव चंद्रमा को कमल ते विरोध है ताको छोड़ाय राखे ॥ १ ॥ लाल नयन विशाल हैं सुंदर है औ कपोल ठोढ़ी नासिका सुंदर है औ बिखरे भए टेढ़े बार हैं सो मानो बार नहीं हैं भ्रमरै हैं। छवि रूप मधु के लालच तें जुगल नेत्र रूप कमल के ऊपर लोभाय रहे हैं ॥ २ ॥ कान सुंदर हैं ताके सम कुंडलो कल कहैं सुंदर दुइ हैं। गोसाईं जी कहत हैं कि उपमा रहित हैं ताते उपमा नहीं कही जात है। मानो कान नहीं हैं मरकत मणि जो स्याम रंग को ताको सीप सुंदर है। सो मुख रूप चंद्रमा के निकट सोने के कुंडल रूप मछली युत ब्रह्मा जी ने बनाइ रक्खी। संशय। कहे की उपमा नहीं कहि जाति है फेरि उपमा कहे सो क्यों।

दया। जब उपमा न पाए तब जौ कबहुं न होनिहार सो उपमान देइएगा अर्थात् मरकत मनि की सीप न होति औ सोने की मछरी नहीं होति ॥ ३॥११ ॥

राग भैरव—प्रातकाल रघुबीर बदनछबि चितै चतुर चित मेरे। खोलि बिबेक बिलोचन निरमल सुफल सुसीतल तेरे ॥ १ ॥ भालबिसालबिकट भृकुटी बिच तिलकरेख रुचि राजै। मनहुं मदनतम तकि मरकत धनु जुगुल कनक सर साजै ॥ २ ॥ रुचिर पलक लोचनजुग तारक स्याम अरुन सित कोए। जनु अलि नलिन कीस महुं बंधुक सुमन सेज सजि सोए ॥३॥ बिलुलित ललित कपोलनि पर कच मेचक कुटिल सुहाए। मनो बिधु महँ बनरुह बिलोकि अलि बिपुल सकौतुक आए ॥४॥ सोभित स्रवन कनककुंडल कल लंबित बिबि भुजमूले। मनहुं पीकि तकि गहन चहत जुग उरग चुंदु प्रतिकूले ॥ ५ ॥ अधर अरुनतर दसन पांतिवर मधुर मनोहर हासा। मनहुं सोन सरसिज महुं कुलिसनि तडित सहित कृतबासा ॥६॥ चारु चिबुक सुकतुंड बिनिंदक सुभग सुउन्नत नासा। तुलसिदास छबि धामराममुख सुपद समन भव-त्रासा ॥ ७ ॥ १२ ॥

भावार्थ १०। हे चतुरचित्त मेरे! प्रातकाल रघुवीर के मुख की छवि को देखो, तब विवेक रूपी नेत्र तेरे मलरहित फलसहित औ शीतल होंहि। चतुर कहिवे को यह भाव कि मुख छवि के सनमुख कराया चाहत हैं ताते बड़ाई दै बोले ॥ १ ॥ बिशाल भाल औ भौंह के बीच में तिलक की रेखा सुंदर शोभति है मानो मुख रूप काम ने बाल रूप तम को ताकि के भौंह रूप धनुष पर पीत तिलक रूप युगल सोने को बान साज्यौ है ॥२॥ पलकैं औ नेत्रैं सुंदर हैं, तारक कहैं पुतरी स्याम

है औ ललाई मिश्रित श्वेत आंख के कोए कहैं कोने हैं सो मानो पुतली रूप भ्रमर नेत्र रूप कमल के कोस में ललाई रूप दुपहरि के फूल की शय्या बिछाय सोए ॥ ३ ॥ अरुझे श्याम टेढ़े बांर सुंदर कपोलन पर शोभत है मानो मुख चन्द्र मह नेत्र रूप बनरुह कहैं कमल देखि के केश रूप भ्रमरैं कौतुकसहित अर्थात् एक से एक में मिले क्रीड़ा करते आये ॥ ४ ॥ लंबे जो बिबि कहैं दोऊ भुजा हैं तिन के मूल में सुंदर सोने के कुंडल कानो के शोभित हैं सो मानो कुंडल रूप मयूर को देखि के दोऊ भुजा रूप सर्प जो चन्द्रमा के प्रतिकूल में है अर्थात् मुख चन्द्र के सन्मुख मुख नहीं है पार्श्वभाग में है सो पकड़ा चाहत है। भाव कुंडल मयूर को मुख चंद्र के अनुकूल जानि के ॥५॥ ओठ लालतर है दांतनि की पांति श्रेष्ठ है औ मधुर हंसी मन की हरनिहारी है, मानो ओठ नहीं सोन कहैं लाल रंग के सरसिज कहैं कमल है, तामें दांत पंक्ति नहीं कुलिस कहैं हीरन का समूह है सो हंसी तड़िता रूप हंसी सहित बास कियो है वा दांतनि की चमक सो तड़िता है ॥ ६ ॥ सुंदर ठोढ़ी है औ मुवाके ठोर को निंदा करनिहारी अति सुंदर उन्नत नासिका है। गोसाईं जी कहत हैं छवि को धाम औ सुख को दाता औ भवत्रास को शमन करनिहारो श्रीरामजी को मुख है ॥ ७ ॥ १२ ॥

राग केदारा—सुमिरत श्रीरघुवीर की बाहैं। होत सुगम भव उदधि अगम अति कोउ लांघत कोउ उतरत थाहैं ॥ १ ॥ सुंदर स्याम सरीर सैल तें धसि जनु है जमुना अवगाहैं। अमित अमलजल बल परिपूरन जनु जनमी सिंगार सविता हैं ॥ २ ॥ धारैं बान कूल धनु भूषन जलचर भंवर सुभग सबधाहैं। बिलसति बीचि बिजै बिरुदावलि करसरोज सोहत सुषमा हैं ॥३॥ सकल भुवन मंगल मंदिर के दार बिसाल सोहाई साहैं। जे पूजी कौसिकमष रिपवनि जनक गनप संकर गिरिजा हैं ॥ ४ ॥ भवधनु दलि जानकी बिबाही भए बिहाल नृपाल तथा हैं। परसुपानि जिन्ह किए

महामुनि जे चितए कबहूं न कृपा हैं ॥ ५ ॥ जातुधान तिय जानि बियोगिनि दुपेई सीय सुनाइ कुचाहैं । जिन्ह रिपु-मारि मुरारिनारि तेइ सीस उघारि दिवाईधा हैं ॥६॥ दस-मुप बिबस तिलोकालोकपति बिकल बिनाये नाकु चना हैं । सुबस बसे गावत जिन्ह को जसु अमर नाग नर मुमुपि सनाहैं ॥७॥ जे भुज वेदपुरान सेप सुक सारदसहित सनेह सराहैं । कलपलताहु कि कलपलतावर कामदुहाहु कि कामदुहा हैं ॥ ८ ॥ सरनागत आरत प्रनतनि को दै दै अभयपद ओर निबाहैं । करिआईं करिहैं करती हैं तुलसिदास दासनि पर छाहैं ॥ ९ ॥ १३ ॥

सुमिरत १० । श्री रघुनाथ के भुजन को स्मरण करत मात्र में संसाररूपी समुद्र जो अति अगम है सो सुगम होत । पराभक्तिवाले तो बड़ी काल लांघि जात औ सकामा भक्तिवाले प्रारब्ध भोगपूर्वक संसार समुद्र को थाहैं उतरत अर्थात् किंचित् देर होत पर उतरे में संदेह नहीं ॥ १ ॥ सुंदर श्याम शरीर रूप परवत ते मानो है जमुना की धारा अवगाहैं कहैं अथाहैं धसी । भाव नीचे को गिरी, मितिरहित निर्मल बल रूप जल करि भरी । जमुना जी सूर्य से जनमी हैं यह भुजा रूप जमुना शृंगार रस रूप सविता कहैं सूर्य से जनमी हैं ॥ २ ॥ बान धार है धनुकूल है जो भूषन पहिरे हैं सो जलचर हैं औ सब पाँव भँवर हैं बाहु अंगुरी के बीच को कहत हैं जाको कोऊ देख पै नाहिं कहूं थाह कहूं गाहा कहत हैं । नदी में कमल रहत है, इहां सुपमा करि परमा शोभा करि सोहत जो कर सो कमल है ॥ ३ ॥ सकल भुवन रूप मंदिर के मंगल रूप जो दरवाजा विशाल ताके सुंदर सांकर कोऊ को बाजू भुजा हैं । भाव बाजू आधार से दरवाजा रहत है तैसे सब मंगल इन भुजन के आधार में रहत हैं औ जेहि भुजन को विश्वा-मित्र जी के यज्ञ में कृपि सब औ विवाह में जनक औ औ अनुज के

जय किये पर गणप कहैं लोकपाल सब औ शिव पार्वती जू काशी में जे मरै तेहि कै मोक्ष हेतु पूजी ॥ ४ ॥ जिन्ह भुजन ने शिवधनु तोरि जानकी जू को विवाही, राजा सब त्रपा कहैं लज्जा करि विहाल भए औ जेहि भुजन ने परशुराम को महामुनि किए अर्थात् शान्त बनाय दिए जे परशुराम कृपायुक्त काहू को कबहूं न देखे ॥ ५ ॥ श्री जानकी जू को वियोगिनि जानि निशाचरन की स्त्री कुचाहैं सुनाय दुख देत भई तब जिन्ह भुजन ने शत्रु को मारि कै तेई निशाचर की स्त्रीन की सीस उघारि कै अर्थात् विधवा करि कै धा कहैं दोहाई देवाई दाहै पाठ होय तो अस अर्थ करना उन के पतिन के चिता को दाहै कहैं आंचे देवाई अर्थात् दग्ध करिवे समय में ॥ ६ ॥ तीनौं लोक के लोकपालन को रावन विकल औ विशेष वश करि नाक ते चना बिनाए सो सुबस बसे जिन्ह भुजन को यश देवता नाग नरन स्त्री सनाहैं कहैं अपने पतिन सहित गावति हैं ॥ ७ ॥ जेहि भुजन को वेद पुराण शेष शुक सरस्वती नेहसहित सराहैं हैं कि कल्पवृक्ष औ कामधेनहूं के कामधेनु हैं। भाव कल्पवृक्ष कामधेनु जो सब को मनोरथ पूरन करत तिनहूं के मनोरथ पूरन करत हैं ॥ ८ ॥ आरत जीव शरणागत में आय प्रणाम करत तिन को अभयपद दै दै ओर कहैं अंत लो निबाहत। भाव आदि सों अंत लो निबाहत। गोसाईं जी कहत हैं सो कर दासनि पर छाहैं करि आए औ करैंगे औ करत हैं ॥ ९॥१३ ॥

राग भैरव—रामचंद्र करकंज कामतरु बामदेव हितकारो। सियसनेह बरबेलि बलितवर प्रेमबंधु बरवारी ॥ १ ॥ मंजुल मंगलमूल मूलतनु करज मनोहर साखा। रोम परन नव सुमन सुफल सबकाल सुजन अभिलाषा ॥ २ ॥ अविचल अमल अनामय अविरल ललित रहित छल छाया। संमन सकल संताप पापरुज मोह मान मद माया ॥३॥ सेवहि सुचि मुनि भृंग विहंग मन मुदित मनोरथ पाए। सुमिरत श्रिय तुलसत तुलसी अनुराग उमगि गुन गाए ॥ ४ ॥ १४ ॥

श्रीरामचन्द्र को हस्तकमल रूप जो कल्पवृक्ष सो बामदेव कहैं शिवजी को लिखायो है औ श्रीरामजी जू को मोह सोई श्रेष्ठ लता है सो करि वलित कहैं आच्छादित है औ श्रेष्ठ प्रेम जो बंधु को सोई बरि कहैं बाड़ है अर्थात् ताको घेरा है ॥ १ ॥ हस्त कमल रूप कल्पवृक्ष मंगलमूल को मूल कहैं जड़ सो तनु कहैं शरीर है औ बरल कहैं अंगुरी सब शाखा हैं हस्त में जो रोम है सो वृक्ष को पत्र है नख फूल है औ सुंदर जनन की जो अभिलाषा सब काल में सोई सुंदर फल है। भाव अभिलाषानुसार फल फरयो रहत है ॥२॥ विशेष कहि चंचलतारहित निर्मल औ रोगरहित। भाव जैसे भिलावा आदि वृक्ष की छाया रोगकारी होति है तैसी नहीं, अविरल कहैं सघन है, देखिवे में ललित है औ छल करि रहित छाया है अर्थात् ठग आदि वृक्ष लगाय भलो थल बनाय राखत हैं कि कोई पथिक सुथल देखि बास करैगो ताको धनादि हरैगो तस नहीं। फिर छाया कैसी है सकल संताप अर्थात् दैहिक दैविक भौतिक शमन करनिहारी है औ पाप औ रोग औ माया करि जो मोह मान मद ताको शमन करनिहारी ॥ ३ ॥ वृक्ष को भ्रमर पक्षी सेवत हैं इहां पवित्र जो मुनिन को मन सोई भ्रमर औ पक्षी है सो मन भाए रस फल पाए हरखित है सेवत। गुसाईं जी कहत हैं या कल्पवृक्ष के तो नीचे गए सुख पावत है औ इहां स्मरण करत मात्र में हिय हुलसत औ गुनगान किये ते अनुराग उमगि चलत ॥ ४ ॥ १४ ॥

रामचरन अभिराम कामप्रद तीरथराज विराजै। शंकर हृदय भक्ति भूतल पर प्रेम अछयवट भ्राजै ॥ १ ॥ स्यामचरन पदपीठ अरुनतल लसति बिसद नखश्रेनी। जनु रविसुता सारदा सुरसरि मिलि चलि जलित त्रिवेनी ॥ २ ॥ अंकुस कुलिस कमल ध्वज सुंदर भवर तरंग विलासा। मज्जहि सुर सज्जन मुनिजन मन मुदित मनोहर बासा ॥३॥ बिनु विराग

जप जाग जोगव्रत बिनुतीरथ तनु त्यागे। सब सुख सुलभ सदा तुलसी प्रभुपद प्रयाग अनुरागे ॥ ४ ॥ १५ ॥

राम इ० । चरन में तीरथ राज प्रयाग का रूपक करि कहत हैं। श्रीराम को चरन रमणीय मनोरथदाता प्रयाग रूप शोभै है। शंकर को जो प्रेम सोई अक्षयवट है सो शंकर के हृदय की भक्ति रूप भूतल पर सोहत है ॥ १ ॥ पदपीठ श्याम वर्ण है, तरवा लाल है औ नखन्ह की पंक्ति उज्ज्वल सोहति है। मानहु यमुना सरस्वती औ गंगा मिलि के सुंदरि त्रिवेणी चली है, सरस्वती जैसे प्रयाग में गुप्त है तैसे तरवो गुप्त है ॥२॥ अंकुशादि जे चिन्ह हैं ते भँवर तरंग के विलास हैं। सुरसंत औ मुनि जन अर्थात् मननशील ते मनोहर चरन रूप प्रयाग में वास औ मज्जन करत हैं। इहां पद के वर्णिवे आदि में जो हर्षना औ पुलकना सो मज्जन है। "कहब सुनत हर्षहिं पुलकाहीं। ते सुकृती मनमुदित नहाहीं" ॥ औ ध्यान करना वास करना है। "पदराजीव बरनि नहिं जाहीं। मुनि मनमधुप बसहिं जिन्ह माहीं" ॥ ४ ॥ १५ ॥

राग बिलावल—रघुबररूप बिलोकु नेकु मन। मकर लोक लोचन सुखदायक भवसिंधु सुभग स्यामसुंदर तन ॥ १ ॥ चारुचरनतल चिन्ह चारि फल चारिदेत परचारि जानि जन। राजत नख जनु कमल दलनि पर अरुनप्रभा रंजित तुषारकन ॥२॥ जंघाजानु भानु उर उरु कटि किंकिन पटपीत सुहावन। रुचिर नितंब नाभि रोमावलि त्रिवलि बलित उपमा कछु आवन ॥ ३ ॥ भृगुपदचिन्ह पदिक उर सोभित मुकुतमाल कुंकुम अनुलेपन। मनहुं परसपर मिलि पंकजरवि प्रगट्यो निज अनुराग सुजस घन ॥ ४ ॥ बाहुबिसाल ललित सायक धनु करकंकन केयूर महाधन। बिमल दुकूल दलन दामिनि-दुति जग्योपवीत लसत अतिपावन ॥ ५ ॥ कंबुग्रीव हनि सीव चिबुक द्विज अधर कपोल बोल भयमोचन। नासिक

भ्रंग हपापरिपूरन नलन अनन राजीव विलोचन ॥ ६ ॥ भृकुटि भृकुटिवर भालतिलकरुचि सुचिसुन्दरतर स्रवन विभूषन। मनहुं मारि मनमिश्र पुरारि दिए ससिहि चाप सर मकर दूषन ॥ ७ ॥ कुंचित कच कंचन किरीट सिर जटित कोतिमय बहुविधि मनिगन। तुलसिदास रविकुलरवि छवि कवि कहि न सकत सुख संभु मदमर्दन ॥ ८ ॥ १५ ॥

रघुवर १० । सुंदर तरवा में जे अंकुशादि चारि चिन्ह हैं ते जन जाने के अलंकारि के चारो फल देत हैं वा अंकुश अर्थ कुलिश धर्म कमल कामध्यन मोक्ष देत हैं। मनु मानहुं नहीं सोहत हैं कमलदलनि पर प्रातःकाल के सूर्य के प्रभा ने रंजित ओसकण सोहत है ॥ २ ॥ वंदित सहित ॥ ३ ॥ भृगुपद को चिन्ह औ धुकधुकी औ मुक्तामाल और केसर को अनुलेपन सोहत हैं मानो कमल औ सूर्य परस्पर मिलि के अपना अनुराग औ घनो सुयश प्रगट कियो है। इहां भृगुपदचिन्ह कमल पदिक सूर्य मुक्तामाल सुयश कुंकुम को अनुलेपन अनुराग है ॥ ४ ॥ कपूर विजायठ, महाधन बड़े मोल को ॥ ५ ॥ द्विज दांत ॥६॥ टेढ़ी भौंहैं औ श्रेष्ठ भाल पर सुंदर तिलक है और कुंडल की रुचि कहिये कांति सुंदर है मानो शिव ने कामदेव को मारि के ताको चाप सर औ दूषणरहित मकर चंद्रमा को दियो है। यहां मुखचंद्र है, भृकुटी चाप है, तिलक सर है, कुंडल मकर है ॥ ६॥७॥१५ ॥

राग कान्हरा—देखो रघुपतिछवि अतुलित अति। जनु त्रिलोक सुषमा सकेलि विधि राखी रुचिर अंग अंगनि प्रति ॥ १ ॥ पटुमराग रुचि मृदुपदतल ध्वज अंकुस कुलिस कमल एहि मूरति। रही आनि चहुंविधि भगतन को जनु अनुराग भरी अंतरगति ॥ २ ॥ सकल सुचिन्ह सुजन सुखदायक जरधरेष विसेष विराजति। मनहुं भानु मंडलहि सवारत धरी सूत विधि मुत विचित्र मति ॥ ३ ॥ सुभग अंगुष्ट अंगुली

अविरल कछुक अरुननप जोति जगमगति। चरनपीठ उन्नत नतपालक गूढ गुलफं जंघा कदलीजति ॥४॥ काम तून तल सरिस जानुजुग उरु करिकर करभहि बिलपावति। रसना रचित रतन धामीकर पीतवसन कटि कसे सर वसति ॥५॥ नाभीसरसि त्रिवली निसेनिका रोमराजि सेवालछवि पावति। उर मुकुतामनि माल मनोहर मनहुं हंस अवली उडि आवति ॥ ६ ॥ हृदय पदिक भृगुचरन चिन्हवर बाहुविसाल जानुलगि पहुंचति। कलकेयूर पूर कंचनमनि पहुंची मंजु कंजकर सोहति ॥ ७ ॥ सुजव सुरेप सुनप अंगुलिजुत सुन्दर पानि मुद्रिका राजति। अंगुलीचान कमान बानछवि सुरनि सुपद असुरनि उर सालति ॥ ८ ॥ स्यामसरीर सुचंदन चरचित पीतदुकूल अधिक छवि छाजति। नील जलदपर निरपि चंद्रिका दुरनि त्यागि दामिनि जनु दमकति ॥ ९ ॥ जग्योपवीत पुनीत विराजत गूढ जंघुवनि पीन अंसुतति। सुगढपृष्ठ उन्नतकृकाटिका कंबुकंठ सोभा मनमानति ॥१०॥ सरदसमय सरसीरुह निंदक मुप सुपमा कछुकहत नहिं बनति। निरपतही नयननि निरुपम सुप रविसुत मदन सोम-दुति निदरति ॥११॥ अरुन अधर द्विजपांति अनूपम ललित हंसनि जनमन आकरपति। विद्रुम रचित विमान मध्य मानो सुरमंडली सुमनचय वरपति ॥ १२ ॥ मंजुल चिवुक मनोहर धनुथलु कलकपोल नासा मन मोहति। पंकज मानविमोचन लोचन चितवनि चारु अमृत जल सींचति ॥ १२ ॥ कंस सुदेस गंभीर वचन वर श्रुति कुंडल डोलनि जिय जागति। लपि नव नील पयोदर सित मुनि रुचिर मोर जोरो जनु

नाचति ॥१४॥ भौंहैं बंक मयंक अंक रुचि कुंकुमरेप भाल भलि भ्राजति। सिरसि हेम हीरक मानिकमय मुकुटप्रभा सब भुवन प्रकासति ॥ १५ ॥ बरनत रूप पार नहिं पावत निगम सेषु मुख संकर भारति। तुलसिदास केहि विधि बपानि कहै यह मन बचन अगोचर मूरति ॥ १६ ॥ १७ ॥

देखो इ० ॥ १ ॥ लाल मणि की कांति सम कोमल तरवा हैं और ताके ध्वज अंकुश कुलिश कमल एहि चारि रेखन की मूरति है मानो सो रेखा अन्तर्गति अनुराग भरी से आर्त जिज्ञासु अर्थार्थी ज्ञानी चारो प्रकार के भक्तन की आनि रही ॥ २ ॥ सब श्रीरघुनाथ के पदन के सुन्दर चिन्ह सुजनन के सुखदायक हैं पर ऊर्द्धरेखा विशेष सोभति है मानो सूर्य मंडल के सँवारते में विचित्रमति विश्वकर्म्मा ने सूत धरयो है। यहां तरवा को रंग लाल है ताते सूर्यमंडल की उपमा कही ॥ ३ ॥ उन्नत ऊंचा, नतपालक शरणागतपालक, गूढ़ गुल्फ घुटना ढंका है ॥४॥ करिकर करभहिं बिलसावति हाथी के बधा के सुंड कों बिलसावति है, रसना किंकिनी, चामीकर सुवर्ण सरवसति तरफस ॥ ५ ॥ नाभी तड़ाग है, तेहि तड़ाग की सीढ़ी त्रिवली है औ तामें रोमन की पांति सेवार की छवि पावति है ॥ ६ ॥ केयूर पूर कंचन मनि कंचन औ मणि ते पूर कहैं भरा बिजायट है ॥ ७ ॥ भुजब सुरेस ऐंदर जब की रेखा है, अंगुलीत्रान अगुस्ताना ॥ ८ ॥ मानो श्याम मेघ पर चंद्रिका देखि के चंचलता त्यागि के दामिनि दमकनि है यहां श्याम मेघ श्याम शरीर है, चंदन चंद्रिका है, दामिनि पीतांबर है। दामिनि के स्थिर होने को यह भाव कि जब चंद्रिका ने अपनी मर्यादा छोड़ी तब हम क्यों न छोड़ें ॥ ९ ॥ सुंदर यज्ञोपवीत शोभति है, रंगुली गुप्त है औ बिस्तृत औ पुष्ट कांध है औ पीठि की सुंदर गद्दनि है, कृपाद्रिता बड़ै लेवारी कोऊ देश में जाको जोला परत है अर्थात् गले की दृढ़ता सो उच्च है ॥ १० ॥ रविसुत अश्विनीकुमार, सोम चंद्रमा ॥ ११ ॥ औंठ अरुन है औ दांतनि की पांति उपमारहित है औ जन के दन की गंभीरवाणी सुंदर हंसानि है। मानो शृंगा के विमान के दरद से हेरना की [illegible]

[illegible] रिद्धते रचित विमान ओउ हैं। सुरमंडली
[illegible] ॥ १२ ॥ विद्युक कपोलन के नीचे को
[illegible] ॥ १३ ॥ मानो नवीन मेघ देखि के
[illegible] हो मोरी नाचति हैं। यहां नवीन मेघ
[illegible] मोर हैं डोलनि नाचनि है ॥१४॥
[illegible] के बिन मन हैं। भाव बिना अंक को रंक
[illegible] के बिन कहां। सतसई में बिहारी
[illegible] हैं. हौं बिन अधिक डेरात। ज्यौं
[illegible] ॥ १५॥१६ ॥ १७॥

[illegible] के रुचिर हिंडोला
[illegible] चहुंदिसि मंजुमनिमय
[illegible] जनु पांचसर सुफसोरि।
[illegible] कुसुम फल घोरि। प्रतिहार-
[illegible] अरु गुरहोरि ॥ १ ॥ मरु
[illegible] बाटीर पांटिविधि
[illegible] हरषित हृदय जनु कालधौत
[illegible] उनए सघनघन घोर चहुंओरि सुपद सावन
[illegible] सगवासि मुरधनु दमक दामिनि हरित भूमि विभाग
॥ सादर सहित भरे सरितसर नहि उमगलनु अनुराग।
[illegible] मोर मधुप चकोर चातकसोर उपवनबाग ॥२॥ सो समो
[illegible] सीयासगी गयसत कँवारि सँवारि। गुनरूप जोवन सील
[illegible] गोहनिभारि ॥ हिंडोलसाल विलोकि सब
[illegible] सिमारि ॥ ॥ ॥ झूलहिं झुलावहिं ओसरिन्ह गावहिं
[illegible] । गंभीर नूपुर वलयधुनि जनु काम करतल-

तार ॥ अतिमचत ग्रमकन सुषनि बिथुरे चिकुर बिलुलित-हार। तमतडित उडगन अरुन बिधु जनु करत व्योम बिहार ॥५॥ हिय हरषि बरषि प्रसून निरषति बिबुधतिय तृनतूरि। आनंदजल लोचन मुदितमन पुलकतन भरिपूरि ॥ सब कहहिं अविचल राजनित कल्यान मंगल भूरि । चिरजिओ जानकिनाथ जग तुलसो सजीवनमूरि ॥ ६ ॥ १८ ॥

आली इ० । अति सुंदर चहुंओर स्फटिकमणि की भीति हैं औ सुंदर मणि मै दरवाजा है । हे सखी कांच को गच देखि कै मन नाचत है, मानो कांच को गच नहीं है काम की फांसी है। वंदनवार मंडप पताका चमर ध्वज फूल फलनि की चोपा परिछाहीं प्रति की छवि की शाखी छवि को देकै बिंब प्रति कहति है कि तुम से हम गरू हैं ॥१॥ सरल सूधा पाटीर नीचे के चारों पाटीको कहत हैं औ पाटी ऊपर के चारो पाटी को कहत हैं, भँवरा गोल गोल धरन में लटके रहत हैं। वलित ग्रंथित जलना धरन के नीचे रहत है जामे डांडी लगाई जाती है। पटुली पटरा सो पटरा नहीं है मानो रति के हृदय की सोने की मालाकी पदिक है अर्थात् जुगावली है भाव पटरा पदिक है औ जामे लटको है सो सोने की माला है अर्थात् डांडी जाको एक वार कुमकुम तिलक को उपमा दिहि आए ॥ २ ॥ सघन घन गंभीर घटा, मृदुझरि नान्दी नान्दी बूंदी सो इ० ॥३॥ नवसत सोलहो शृंगार, हिंडोलसार, झूलिबे को स्थान ॥४॥ सारिन्ह पारिन्ह सूहाराग औ गौड मल्हार राग गावैं, मंजीर पायँजेब नूपुर घुंघुरू, वलय कंकन एन के जो धुनि है सो धुनि नहीं है मानो राम के हथोरी के ताल हैं, अत्यंत जो झूला मचत है ताते पसीना को न मुखन पर है रहे हैं औ वार बिखरि परे हैं औ माला डोलि रहे हैं र बिखरे तम है, अंग की गोराई तड़िता है, उडगन कहैं तारागन सो अरुण कहैं सूर्य सो हार है औ बिबुध कहैं चंद्रमा सो सुन्दर सो आकाश में बिहार करत हैं ॥ ५ ॥ बिबुध तिय के तृण तोरिबे को भाव कि जामे नजर न लागै वा लज्जा को तृन सम तोरिके देवैं स्वर्ग सुख को तृण सम तोरैं ॥ ६॥१८॥

राग सूहव—कोसलपुरी सुहावनि सरिसरजू के तीर। भूपावली मुकुटमनि नृपति जहां रघुवीर ॥ १ ॥ पुरनरनारि चतुर अति धरम निपुनरत नीति। सहज सुभाय सकल उर श्रीरघुवीरपद प्रीति ॥ छंद ॥ श्रीरामपदजलजात सब की प्रीति अविरल पावनी। जो चहत सुक सनकादि संभु विरंचि मुनिमन भावनी ॥ सबही के सुंदर मंदिराजिर राउ रंक न लखिपरै। नाकेसदुर्लभ भोगलोग करहि न मन विषयनिहरै ॥१॥ सबरितु सुषप्रद सो पुरी पावस अतिकमनीय। निरपत मनहि हरति हठि हरित अवनि रमनीय। बीरबहूटि विराजही दादुर धुनिचहुंओर ॥ मधुर गरजिघन बरषहिं सुनि सुनि बोलत मोर ॥ छन्द ॥ बोलत जो चातक मोर कोकिल कीर पारावत घने। पग विपुलपाले बालकनि कूजत उडात सुहावने ॥ बकराजि राजत गगन हरिधनु सडित दिसिदिसि सोहहीं। नभनगर की सोभा अतुल अवलोकि मुनिमन मोहहीं ॥ २ ॥ गहगह रचे हिंडोलना महि गचकांच सुठारि। चित्रविचित्र चहुंदिसि परदा फटिक पगार ॥ सरलविसाल विराजहिं विद्रुम पंग सुजोर। चारुपाटि पटु पुरट की झरकत मरकत भोर ॥ छन्द ॥ मरकत भवर डांडी कनकमनि जटितदुति जगमग रही। पटुली मनहुं विधि निपुनता निजप्रगट करि रापीसही ॥ बहुरंग लसत वितान मुकुतादाम सहित मनोहरा। नव सुमनमाल सुगंध लोभे मंजु गुंजत मधुकरा ॥ ३ ॥ झुंडझुंड झूलन चली गजगामिनि बरनारि। कुमुमिचीर तन सोहहीं भूषन विविधि संवारि ॥ पिकबयनी मृगलोचनी सारद ससि

[illegible] । रामधुनम मदगावहीं मुखर मुमार्रिग गुंड ॥ [illegible] । मारंग गुंडमरान मीरठ मुरव मुपरनि बाजहीं । रुमोति तान तरंग मुनि गंधर्वकिन्नर लाजहीं ॥ अति नयन कुटिलकचकवि अधिक सुन्दरि पावहीं । पटउडत मुदल प्रमत हँसि हँसि अपरमयी झुलावहीं ॥४॥ फिरिफिरि मूलहिं मामिनी अपनी अपनी बार । विबुध विमान थकित मए देपत चरित अपार ॥ बरपि सुमन हरषहिं सुर बरनहि रघुपुन गाथ । पुनिपुनि प्रभुहि प्रमंसहीं जयजय जानकिनाथ ॥ छन्द ॥ जय जानकीपति विसद कीरति सकललोक मलापहा । सुरबधू देहिं असीम चिर जीवहु राम सुप संपति महा ॥ १ ॥ पायममय कछु अवध वरनत सुनि रघीष नमावहीं । रघुवीर के गुनगनन बल नित दासतुलसी गावहीं ॥ ५ ॥ १८ ॥

कोशल १० । सरि नदी, जलजात कमल, अविरल निरंतर, अजिर आंगन, नाकेश इंद्र ॥१॥ अवनि पृथ्वी, चातक पपीहा, कोकिल कोइल, कीर सुआ, पारावत कबूतर, बकराजि बकपांति, हरिधनु इंद्रधनु ॥ २ ॥ पगार भीति, विद्रुम मूंगा, पुरट सोना, मुकुतादाम मोतिन की माला, मधुकर भ्रमर ॥३॥ शारद शशि समतुंड शरत्काल पूर्णिमा के चंद्र सम मुख, गुंड मत्तारंभद ॥ ४ ॥ विशद उज्वल ॥ ५॥१९॥

राग बसावरी—सांझसमय रघुवीरपुरी की सोभा आजु बनी । ललित दीपमालिका विलोकहिं हितकरि अवधधनी ॥ १ ॥ फटिकभीत सिपरनि पर राजति कांचनदीप अनी । जनु अहिनाथ मिलन आये मनि सोभित सहसफनी ॥ २ ॥ प्रतिमंदिर कलसनि पर भ्राजहिं मनिगनदुति अपनी । मानहुं विपुल प्रगटि पुरलोहित पठइ दिए अवनी ॥ ३ ॥

घरघर मंगलचार एकरस हरषित रंक गनी । तुलसिदास कलकीरति गावत जो कलिमल समनी ॥ ४ ॥ २० ॥

अर्थ से सूचित होत है कि यह पद देवारी को है। सांझ इ० इहां स्फटिक की भित्ति सेप हैं औ ताकी शिखरैं फणि हैं औ दीपमालिका मणिहैं ॥ १ ॥ यहां लोहित कहै मंगल सो कलसन के मणि हैं ॥ २ ॥ रंक दरिद्र गनी तालवर ॥ ३॥२० ॥

राग गौरी—अवधनगर अतिसुन्दर वरसरिता के तीर। नीतिनिपुन नर निवसहिं धरमधुरंधर धीर ॥ १ ॥ सकल रितुन्ह सुपदायक ता महुं अधिक वसंत। भूप मौलिमनि जहंबस नृपति जानकी कंत ॥ २ ॥ वन उपवन नवकिसलय कुसुमित नानारंग। बोलत मधुर मुपर पग पिकवर गुंजत भृंग ॥ ३ ॥ समय विचारि कृपानिधि देपि द्वार अतिभीर। पेलहु मुदित नारि नर विहंसि कहेउ रघुवीर ॥ ४ ॥ नगर नारि नर हरषित सब चले पेलन फागु। देपि रामछवि भतुलित उमगत उर अनुरागु ॥ ५ ॥ स्याम तमाल जलदतन निरमल पीतदुकूल। अरुन कंजदल लोचन सदा दास अनुकूल ॥ ६ ॥ सिरकिरीट श्रुतिकुंडल तिलक मनोहर भाल। कुंचितकेस कुटिल भ्रुव चित वेनि भगत कृपाल ॥ ७॥ कलकपोल सुकनासिक ललित अधर दिज जोति। अमन कंजमहँ जनु जुगपांति रुचिर गज मोति ॥ ८ ॥ वरदरगीव अमित बलबाहु सुपीन विसाल। कंकनहार मनोहर उरसि लसति बनमाल ॥ ९ ॥ उर भृगुचरन विराजत दिजप्रिय चरित सुनोत। भगतहेतु नर विग्रह सुरवर गुन गोतीत ॥ १० ॥ उदर विरेप मनोहर सुंदर नाभिगंभीर। झटक

घटित जटितमनि कटितटरट मंजीर ॥ ११ ॥ ऊरु जानु-पीन मृदुमरकत यंभ समान । नूपुर मुनिमन मोहत करत सुकोमल गान ॥ १२ ॥ अरुनवरन पदपंकज नखदुति इंदु प्रकास । जनकसुता करपल्लव लालित विपुल विलास ॥१३॥ कंज कुलिस ध्वज यंकुस रेप चरन सुभचारि । जनमन मीन हरन कहं वनसोरची संवारि ॥ १४ ॥ अंगअंग प्रति अतुलित सुषमा वरनि न जाइ । एहि सुषमगन हीड मन फिरि नहि पनत लोभाइ ॥ १५ ॥ पेलतफागु अवधपति अनुजसपा सवसंग । वरषि सुमन सुर निरपहि सोभा अमित अनंग ॥१६॥ ताल मृदंग झांझ डफ वाजहिं पनव निसान । सुघर सरस सहनाइन्ह गावहिं समय समान ॥ १७ ॥ वीना वेनु मधुरधुनि सुनि किन्नर गंधर्व । निजगुन गरुअ हरुअ अति मानहिं मन तजि गर्व ॥ १८॥ निजनिज अटनि मनोहर गान करहिं पिकवैनि । मनहुं हिमालय सिषरनि लसहिं अमर मगनैनि ॥१९॥ धवलधाम ते निकसहिं जहँ तहँ नारिवृंद । मानहुं मदत पयोनिधि विपुल अपछरा जूथ ॥ २० ॥ किंसुक वरन सुचंसुक सुषमा सुषनि समेत । जनु विधु निवह रहिकरि दामिनि निकर निकेत ॥२१॥ कुंकुम सुरस अबीरनि भरहि कनक वरनारि । रितु वसंत मुठि सोभित देहि विविधि विधि गारि ॥२२॥ जो सुष लोगलाग जपतप तीरथ ते दूरि । रामकृपा ते सोइ सुष अवधगलिन रह्यो पूरि ॥ २३ ॥ धेलि खेलि कियो प्रभु मज्जन सरजूनीर । विविधि भांति आनंद कर पाए भूषन चीर ॥२४॥ [illegible] मांदो

भगति अनूप । मृदुमुखाइ दीन्हि तब कृपादृष्टि रघु-
भूप ॥ २५ ॥ २१ ॥

अवध ३० । वर सरिता सरजू ॥ १ ॥ नवकिसलय नवीन पल्लव,
कुसुमित पुलकित ॥२॥३॥४॥ पीत दुकूल पीतांबर ॥ ५ ॥ श्रुति कान
कुंचित टेढ़ा ॥ ६ ॥ द्विज दांत इहां मुख कोस अरुन कमल है औ जुग
दंत पंक्ति गजमोती है ॥ ७ ॥ बरदर ग्रीव श्रेष्ठ संखसम कंठ ॥ ८ ॥
द्विज प्रिय चरित पुनीत श्रीराम द्विजन के प्रिय हैं औ चरित पुनीत
वा द्विजन को प्रिय है चरित पुनीत जिन का ॥ ९ ॥ हाटक सोना
मंजीर करि किंकिनी लेना पावजेब नहीं ॥१०॥११॥ इंदु चंद्रमा ॥१२॥
इहां रेखै वंसी हैं वा एक रेखा को वंसी कहा ॥ १३॥१४॥१५॥ पनव
ढोल निसान नगारा ॥ १६ ॥ हरुअ हलुका ॥ १७ ॥ अप्सनि अटारिन,
अमरमृगनयन देव पत्नी ॥१८॥ इहां धवल धाम छीर सागर औ निक-
सने वाली नारि अपछरा समूह है ॥ १९ ॥ किंसुक कहैं लाल बरग
के सुंदर अंसुक कहैं जो वस्त्र तेहि समेत परम शोभा सहित जे मुखें हैं
ते मानो बिधुनिवह कहैं चंद्रमा के समूह है दामिन निकर अरुन वस्त्र
के घुघुटें हैं तिन में निकेत हैं गृह करि रहे हैं ॥ २० ॥ कुंकुम कुंकुमा
सुरस अबीर घोरा भवा अबीर सुंदर ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ गोसाईं
जी कहत हैं जे तेहि अवसर में अनूप भक्ति मांगी तेहि कों मृदु मुस-
काय के तब कहैं तेहि काल में कृपादृष्टि करि के रघुभूप कहैं रघुकुल
के राजा दिए वा रघु कहैं जीव तिन के भूप जे श्रीराम ते दिए, वा
गोसाईं जी ध्यान में यह पद बनाए वा काल में प्रत्यक्ष रघुनाथ वर
दान दिए सो स्पष्ट अंत के तुक में लिखे ॥ २४ ॥२५॥२१॥

राग बसन्त । ललित बसन्त राजाधिराज । देखत न
कौतुक मुरसमाज ॥ १ ॥ सोहैं सभा अनुज रघुनाथ साथ
झोलिन्ह अबीर पिचकारि हाथ ॥२॥ बाजहिं मृदंग डफ ता
बेनु । छिरकहिं सुगंध भरे मलय रेनु ॥३॥ उत जुवतिज
जानकी संग । पहिरे पट भूषन सरस रंग ॥ ३ ॥ लिये
बेत सोहे बिभाग । चांचरि झूमक गावहिं सरस राग ॥

नूपुर किंकिनि धुनि अति सुहाइ। ललनागन जबं जोहि धरहि धाइ ॥ ५ ॥ लोचन आंजहिं फगुआ मनाइ। छाडहिं नचाइ हाहा कराइ ॥ ६ ॥ चढे परनि विदूषक स्वांग साजि। करैं कूट निपट गइ खाज भाजि। नर नारि परस-पर गारि देत। सुनि हंसत राम भाइन्ह समेत ॥ ७ ॥ बर-षत प्रसून बर विबुध बृन्द। जय जय दिनकरकुलकुमुद चंद ॥ ८ ॥ ब्रह्मादि प्रसंसत अवध बास। गावत कल कीरति तुलसिदास ॥ ९ ॥ २२ ॥

पेखत इ०। नभ आकाश मलय रेनु चंदनरज ॥१॥२॥ लोचन आजहिं अंजन लगाइ देइ ॥ ३ ॥ पर गदहा विदूषक भांड़ ॥ ४ ॥ विबुध देवता ॥ ५॥२२ ॥

राग केदारा—देखत अवध को आनंद। हरषि बरषत सुमन दिनदिन देवतनि को वृंद ॥ १ ॥ नगर रचना सिखन को विधि तकत बहुविधि बंद। निपट लागत अगम ज्यौं जलचरहिं गमन सुछंद ॥ २ ॥ मुदित पुरलोगनि सराहत निरखि सुषमाकंद। जिन्ह के सुचलिचख पिअत राम सुपार-विंद मरंद ॥ ३ ॥ मध्यव्योम विलंबिचलत दिनेस उडुगन चंद। रामपुरी विलोकि तुलसी मिटत सबदुख दंद ॥४॥२३॥

देखत इ०। नगर रचना सीखबे को बंद कहँ मकार बहुविधि ते विधाता तकत हैं सुछंद स्वेच्छा ॥ १ ॥ सुखमाकंद परमशोभा के मूल, सुभालचिख नेत्र रूप सुंदरभ्रमर, मरंद रस ॥ २ ॥ व्योम आकाश, दिनेश सूर्य उडुगन तारागण ॥ ३ ॥ २३ ॥

राग सोरठ—पालत राजु यौं राजाराम धरमधुरीन। सावधान सुजान सबदिन रहत नयलय लीन ॥ १ ॥ खान पानादि

न्याउ देख्यो आपु बैठि प्रवीन। नीचु हति मंडिदेव बालक कियो मोच्च विहीन ॥ २ ॥ भरत ज्यों अनुकूल जगनिरुपाधि नेह नवीन। सकल चाहत रामही ज्यों जलअगाधहि मीन ॥ ३ ॥ गाउ राजसमाज जाचत दासतुलसी दीन। सिंहु निज-कर देहु निजपदप्रेम पावन पीन ॥ ४ ॥ २४ ॥

पालत इ०। नयनीति यती ने स्वान को मारा रहा सो विनयपत्रिका में स्पष्ट है, स्वान के हेतु कियो पुरवाहर यती गयंद चढ़ाई अर्थात् शिव निर्माल्य खाइवे ते स्वान भयो रह्यो सोई अधिकार यती को दिए काक औ उलूक को विवाद रहा उलूक कहत रहा कि ई स्थान हमारा है औ काक कहत रहा कि हमारा है सो पहिले ते रहनेवाला उलूक को जानि के जिताए औ शूद्र तप करत रहा ताते ब्राह्मण को बालक मरि गयो ताते नाते शूद्र को मारि के ब्राह्मण के बालक को जिआए ६ जैसे भरत जी के अनुकूल है तैसे निरुपाधि नेह नवीन पूर्वक जगतअनुकूल है २।३।४॥२४

संकठ सुव्रत को सोचत जानि जिय रघुराउ। सहस द्वादस पंचसत मैं कछुक है अब आउ ॥१॥ भोग पुनि पितु आपु को सोउ किये बने बनाउ। परिहरे बिनु जानकी नहि और अनघ उपाउ ॥ २ ॥ पालिबे असिधारव्रत प्रियप्रेम-पाल सुभाउ। होइहति केहिभांति नित सुविचारु नहि चितचाउ ॥ ३ ॥ निपट असमंजसहुं विलसति मुप मनोहर-ताउ। परमधीर धुरीन हृदय कि हरष विसमय काउ ॥ ४ ॥ अनुज सेवक सचिव हैं सबसुमति साधु सपाउ। जान कोउ न जानकी बिनु अगम अलप लपाउ ॥५॥ रामजोगवत सीयमन पियमनहि प्रान प्रियाउ। परमपावन प्रेम परमित समुझि तुलसी गाउ ॥ ६ ॥ २५ ॥

संकठ इ०। सहस द्वादश पंचशत बारह हजार पांच सौ वर्ष में कछुक

अर आप है यद्यपि वाल्मीकि जी के मत मे ग्यारहै हजार वर्ष आयत है तहां गोस्वामी जी यह कहा मे भिन्न के लिखे ताते शंका नहीं करना ॥१।२।१४।५ ६॥२५॥

राम विचारि के रायौ ठोकदै मनमाहिं। लोकवेद सनेह पालत पक्ष कृपालहि जाहिं ॥१॥ प्रियतमा पति देवता दीहि उमा रमा सिखाहिं। तुर्विनो सुकुमारिसियतियमनि समुझि सकुचाहिं ॥२॥ मेरेहोमुप मुपोमुपु भवनो सो सपनेहूं नाहिं। मोहिनी गुनगेहनो गुन सुमिरि सोचसमाहिं ॥ ३ ॥ रामसोय सनेह वरनत अगम सुकवि सकाहिं। रामसोय रहस्य तुलसी कहत रामकृपाहिं ॥ ४ ॥ २६ ॥

राम १० ॥ १ ॥ मोहिनी श्री जानकी जू गुनगेहनी गुन के गृह ॥२॥ रामकृपाहिं रामकृपा करि तुलसी श्रीराम रहस्य को कहत हैं॥३।४ ॥२६॥

चरचा चरनि सोंच रंची जानि मनि रघुराइ। दूत मुष सुनि लोक धुनि घर घरनि बूझो जाइ ॥ १ ॥ प्रिया निज अभिलाष कहि कहत सिय सकुचाइ। तौय तनय समेत तापस पुजिहौं वन जाइ ॥ २ ॥ जानि करुनासिंधु भावी विवस सकल सहाय। धीर धरि रघुवीर भोरहिं लिए लषन बोलाइ ॥ ३ ॥ तात तुरतहि साजि स्यंदन सीय लेहु चढाइ। वाल्मीक मुनीस आश्रम आइयहु पहुंचाइ ॥ ४ ॥ भलेहि नाथ सुभाय माथे राषि राम रजाइ। चले तुलसी पालि सेवकधर्म अवधि अघाइ ॥ ५॥ २७॥

चरचा ३० । चरनि सों दूतन सों, जानि मनिज्ञानी शिरोमणि अर्थात् ब्रह्मादि जे ज्ञानी तिन के शिरोमणि ॥ १ ॥ २ ॥ स्यंदन रथ ॥ ३॥४॥५॥२७॥

आए लषन लै सौंपी सिय मुनीसहि आनि। नाइ सिरु रहे पाइ आसिष जोरि पंकज पानि ॥ १ ॥ बालमीक बिलोकि ब्याकुल लषन गरत गलानि। सर्बबिद बूझत न बिधि की बामता पहिचानि ॥ २ ॥ जानि जिय अनुमान ही सिय सहस बिधि सनमानि। राम सद्गुनधाम परमिति भई ककुक मलानि ॥ ४ ॥ दीनबंधु दयाल देवर देषि अति अकुलानि। कहति बचन उदास तुलसीदास त्रिभुषन रानि ॥ ४॥२८ ॥

आए इ० सर्वविद सर्वज्ञ ॥ १ ॥ श्रीराम सद्गुण धाम के परमित कहैं मर्यादा है पर यह क्या किया यह बिचारि के बालमीक जी की बुद्धि कुछ मलान भई ॥ २॥३॥२८ ॥

तौलौं बलि आयु ही कीबो बिनय समुझि मुधारि। जौलौं हौं सिधि लेउं बन रिषिरोति बसि दिन चारि ॥१॥ तापसी कहि कहा पठवति नृपति को मनुहारि। बहुरि तेहि बिधि आइ कहिहै साधु कोउ हितकारि ॥ २ ॥ लषन लाल कृपाल निपटहि डारिबो न बिसारि। पालिबो सब तापसिनि ज्यौं राजधरम बिचारि ॥ ३ ॥ सुनत सीता बचन मोचत सकल लोचन बारि। बालमीकि न सकै तुलसी सो सनेह संभारि ॥ ४॥२९ ॥

मु० ॥ २९ ॥

सुनि ब्याकुल भयेउ तस ककु कह्यो न जाइ। जानि जिय बिधि-बाम दीन्ही मोहि सरुप सजाइ ॥ १ ॥ कहत हिय मेरी कठिनई लषि गइ प्रीति लजाइ। आनु-औसर ऐसेहूं जौ न चले प्रान बजाइ ॥२॥ इतहि सोय सनेह संकट

तेहि राम रजाइ। मौन ही गहि चरन गौने सिय सुधा-सिय पाइ ॥ २ ॥ प्रेमनिधि पितु को कह्यौ मैं परुष वचन बनाइ। पाप तेहि परिताप तुलसी उचित सहे सिराइ ॥ ४॥३०॥

सुगम ॥ ३० ॥

गौने मौन हीं बारहि बार परि परि पाय। जात जनु रघु रची कर लछिमन मगन पछिताय ॥ १ ॥ बसन बिनु तन बरम बिनु रन बच्यो कठिन कुघाय। तुलसी सांसति सहन को हनुमान ज्यायौ जाय ॥ २ ॥ हेतु हौं सिय हरन को तब अवहुं भयौ सहाय। होत हठि मोहि दाहिनो दिन दैव दारुन दाय ॥ ३ ॥ तज्यो तनु संग्राम जेहि लगि गीध कीसी जटाय। ताहि हौं पहुंचाइ कानन चल्यो अवध हुभाय ॥ ४ ॥ घोर हृदय कठोर करतब सृज्यौ हौं विधि याय। दास तुलसी जानि राख्यौ कृपानिधि रघुराय ॥ ५॥३१ ॥

गौने इ०। लछिमन जी पश्चात्ताप में मगन हैं मानो लछिमन जी नहीं जान हैं कर ते रची भई अर्थात् प्रतिमा सी जात है। कोऊ रची-पर मृतक को कहत, अब लछिमन जी का पछितावा करत हैं कि भोजन बिना बन में बेचउ औ बखतर बिना रण में पचेउं। लछिमन दुखाउ का अन्तर दूसरे तुक में है ॥ १॥२॥३॥४॥५॥३१ ॥

पुनि न सोचिये माइ जो जनकसुता जिय जानि। जानि सी कल्यान कौतुक कुसल तुव कल्यानि ॥ १ ॥ राजरिषि पितु ससुर प्रभु पति तू सुमंगलखानि। ऐसेहू दल बामता दहि बाम बिधि की बानि ॥ २ ॥ बोलि मुनि कन्या निवाई प्रीति पति पहिचानि। आसिषहि को देवसरि सिर सेइ दीन्ही अर्ध-

मानि ॥ ३ ॥ न्हाइ प्रातहि पूजिवो वट विटप अभिमत दानि। भुवन लाहु उछाहु दिन दिन देबिअन हित हानि ॥ ४ ॥ पाप ताप विमोचनी कहि कथा सरस पुरानि। वालमीक प्रबोध तुलसी गई गहरु गलानि ॥ ५॥३२॥

पुलि इ० । राजरूपि तुम्हारे पिता औ ससुर हैं, प्रभु पति हैं, तूं सुमंगलखानि हौ ॥ १ ॥ ऋषि श्री जानकी को आपनि कन्या बोलि प्रीति की गति पहिचानि के सिखाई कि हे सिय आलसिन्ह की देवता जो गंगा हैं तिन्ह को सनमान करि के सेइअहु ॥ २॥३॥४॥५॥३२॥

जब ते जानकी रहि रुचिर आश्रम आइ। गगन जल थल विमल तब ते सकल मंगल छाइ ॥ १ ॥ निरस भूरुह सरस फूलत फलत अति अधिकाइ। कंद मूल अनेक अंकुर स्वाद सुधा लजाइ ॥ २ ॥ मलय मरुत मराल मधुकर कोर पिक-समुदाइ। मुदित मन मृग विहंग विहरत विषम वयरु विहाइ ॥ ३ ॥ रहत रवि अनुकूल दिन ससि रजनि सजनि सुहाइ। सोय सुनि सादर सराहति सपिन भलो मनाइ ॥ ४ ॥ मोद विपिन विनोद चितवत लेत चित चुराइ। राम विनु सिय सुपद वन तुलसी कहै किमि गाइ ॥ ५॥३३ ॥

जब ते इ० । निरस भूरुह शुष्क वृक्ष ॥ १ ॥ मलय मरुत दक्षिण पवन तेहि से मुदित मन होय मृग पक्षी। विषम वैर विहाय विहरत हैं ॥ रहत रात्रि अनुकूल दिन उष्णता आदि से क्लेश नहीं देत हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ यहि प्रकरण की व्याख्या स्पष्ट करि नहीं लिखी वाल्मीकीय रामायण औ पद्मपुराण में स्पष्ट है ॥ ५ ॥ ३५ ॥

सुभ दिन सुभ घरी नीको नखत लगन मुहाइ। पुत्र अरु जानकी हैं मुनिनाथ उठि गाइ ॥१॥ करपि बरषत सुमन

ा गरगहँ बधाइ बजाइ। भुवन कामन आश्रमनि रहे
ोइ मंगल छाइ ॥ २ ॥ तेहि निसा तहँ सचुसूदन रहे
विधि बन जाइ। मांगि मुनि सो बिदा गवने भोर सो सुख
ाइ ॥ ३ ॥ मातु मोसी बहिन हूं ते सासु तें अधिकाइ।
करहि तापस तोयतनया मोयहित चित लाइ ॥ ४ ॥ किये
विधि व्योहार मुनिवर विप्रवृंद बोलाइ। कहत सब रिषि
क्षपा को फल भयो आजु अघाइ ॥५॥ सुरूप रिषि सुप सुतनि
को सिय रघुबर सकल सहाइ। मूल राम सनेह को तुलसी
न जिय तें जाइ ॥ ६॥३४ ॥

सुभइ ० । पद सुगम । कथा स्पष्ट श्रीमद्रामायण में ॥ ३४ ॥

मुनिवर करि छठी कीन्ही बारहे की रीति । बनवसन
पहिराइ तापस तोषिपोषे प्रीति ॥ १ ॥ नामकरन सुभन्न-
प्रासन बेदबांधो नीति । सभै सबरिपिराज करत समाज
साजि समीति ॥ २ ॥ बालजालहिं कहहिं करिहैं राजुसब
जगु जीति । रामसियसुत गुरुअनुग्रह उचित अचल प्रतीति
॥ ३ ॥ निरखि बालबिनोद तुलसी जातबासर बीति । पिभं-
चरित सिय चितचितेरो लिपत नितहित भीति ॥४॥३५॥

सुनि ३० । समीति सभा वा समित्र ॥ १ ॥ २ ॥ हित भीति भीति
रूप भीति पर ॥ ३ ॥ ३५ ॥

बालक सोय के बिहरत मुदित मन दोउ भाइ । नाम
लखकुस राम सिय अनुहरत सुंदरताइ ॥ १ ॥ देत मुनि मुनि-
सिसु पिलौना लेत धरत दुराइ । खेल खेलत नृप सिसुन्ह के
बालबृंद बोलाइ ॥ २ ॥ भूप भूषन बसन बाहन राज साज
सजाइ । बरम चरम कृपान सर धनु तून लेत बनाइ ॥ ३ ॥

दुपी सिय पिय विरह तुलसी सुपी सुत सुपपादू। आंचपय उफनात सींचत सलिल ज्यों सकुचादू ॥ ४ ॥ ॥ ३६ ॥

बाल इ० ॥ १ ॥ बरम बखतर, चरम ढाल, कृपान तलवार, तून तरकस ॥ २ ॥ ३ ॥ ३६ ॥

कैकइ जौलौं जिअत रही। तौलौं बात मातु सों मुह भरि भरत न भूलि कही ॥ १ ॥ मानी राम अधिक जननी तें जननिहुं गस न गही। सौय लषन रिपुदवन रामरुप लषि सब की निवही ॥ २ ॥ लोक वेद मरजाद दोष गुन गति चित चपन चही। तुलसी भरत समुझि मुनि रापी राम सनेह सही ॥ ३॥३७ ॥

बाल इ० । गस गांस ॥ १।२ ॥ चप नेत्र इहां सिंहावलोकन रीति से पिछली कथा कहे ॥ ३॥३७ ॥

राग रामकली। रघुनाथ तुम्हारे चरित मनोहर गावत सकल अवधबासी, अति उदार अवतार मनुज वपु धरे ब्रह्म अज अविनासी ॥ १ ॥ प्रथम ताडिका हति सुबाहु वधि मप राख्यौ द्विज हितकारी। देषि दुपो अति सिला सापवस रघुपति विप्रनारि तारी ॥ २ ॥ सब भूपनि को गरव हखो हरि भंज्यौ संभुचाप भारी। जनकसुता समेत आवत गृह परसराम अति मदहारी ॥ ३ ॥ तात वचन तजि राजकाज सुर-चित्रकूट मुनिभेष धखो। एक नयन कीन्हो सुरपति-सुत वधि विराध रिपिसोक रख्यो ॥ ४ ॥ पंचवटी पावन राघव करि सूपनपा कुरूप कीन्ही। परदूषन संघार कपट मृग गीधराज कहुं गति दीन्ही ॥ ५ ॥ हति कवंध सुग्रीव सपा करि वेधे ताल बालि मारयो। वानर रीछ सहाय अनुज

ध्रुव सिंधु साधि सुजसु विस्तारी ॥६॥ सकुल पुत्र दलसहित दसानन मारि काटि सुरदुख टार्‌यो। परम साधु जिय जानि विभीषन अंकावली तिलक सार्‌यो ॥ ७ ॥ सीता सह लछिमन संग लीन्हे धाए। किते दास धाए नगरनिकट विमान पाए। मग नर नारी देखन धाए ॥८॥ सिव विरंचि सुक नारदादि मुनि अस्तुति करत विमल बानी। चौदह भुवन चराचर हरषित आए राम राजधानी ॥ ९ ॥ मिले भरत जननी गुरु परिजन धारत परम अनंद भरे। दुसह वियोग जनित दारुन दुख रामचरन देखत बिसरे ॥ १० ॥ वेद पुरान विचार लगन सुभ महाराज अभिषेक कियो। तुलसिदास जिय जानि सुअवसर भक्तिदान तब मागि लियो ॥ ११ ॥ ३८ ॥

इति श्रीतुलसीदासकृतरामगीतावल्यां उत्तरकाण्डः समाप्तः।

रघुनाथ १०। इहां सब रामचरित्र रूप से लिखे। पद पद सुगम। ११।३८

दोहा।

श्रीमद्भिमन रघुनाथ निधि, रामसखे पद नाय।
हरिहर मम मतिमंद हूं, टीका लई बनाय॥

इति श्रीतुलसीदासकृतरामगीतावल्यां प्रकाशिकाटीकायां श्रीसीतारामकृपापात्र श्रीसीतारामीय हरिहरप्रसादकृतौ उत्तरकाण्डः समाप्तः।